# गृह दाह

शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय

अनुवादक

हसकुमार तिवारी

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-६

GRAH DAH

Novel by Sharat Chandra Chattopadhyaya

Rs 16 00

प्रकाशक प्रभात प्रकाशन, २०५, चावडी बाजार, दिल्ली ६
मुद्रक आगरा फाइन आर्ट प्रेस, राजामंडी, आगरा-२

संस्करण १९७५
मूल्य सोलह रुपये

महिम का परम मित्र था सुरेश। एक साथ एम० ए० पास करने के बाद सुरेश जाकर मेडिकल कालेज मे दाखिल हुआ, लेकिन महिम अपने पुराने सिटी कालेज मे ही रह गया।

सुरेश ने रूठे हुए-सा कहा—महिम, मैं बार बार कह रहा हूँ, बी० ए०, एम० ए० पास करने से कोई लाभ न होगा। अभी भी समय है तुम्हे भी मेडिकल कालेज मे भर्ती हो जाना चाहिए।

महिम ने हँसते हुए कहा—हो तो जाना चाहिए, लेकिन खर्च के बारे मे भी तो सोचना चाहिए।

खर्च भी ऐसा क्या है कि तुम नही दे सकते? फिर तुम्हारी छात्रवृत्ति भी तो है।

महिम हँसकर चुप रह गया।

सुरेश ने अधीर होकर कहा—नही नही हँसी नहीं महिम और देर करने से न चलेगा, मैं कहे देता हूँ, तुम्हे इसी बीच नाम लिखाना पडेगा। खर्च वर्च की बात मे देखी जायगी।

महिम ने कहा—अच्छा।

सुरेश बोला—भई, तुम्हारा कौन सा अच्छा ठीक है, कौन सा नहीं, मैं तो आज तक भी यह समझ नही पाया। मगर रास्ते मे अभी तुमसे वायदा नही करा पाया इसलिए मुझे कालेज को देर हो रही है। मगर कल परसो तक जो भी चाहे इसका कोई किनारा करके ही रहूँगा मैं। कल सवेर डेरे पर रहना, मैं आऊँगा। कह कर सुरेश तेजी से कालेज की तरफ चला गया।

कोई पन्द्रह दिन बीत गए। कहा तो महिम और कहा उसका मेडिकल कालेज का दाखिला! एक दिन दोपहर को बडी दौड धूप के बाद सुरेश एक गए बीते से छात्रावास मे पहुँचा। सीधे ऊपर चला गया। देखा, एक सील से अँधेरे कमरे मे फटी चटाइयाँ डाले छ सात लडके खाने बैठे हैं। अचानक अपने

दोस्त पर नजर पडने ही महिम न कहा—अचानक डेरा बदलना पडा, सो तुम्हे खबर न दे पाया , पता कैसे लगाया ?

सुरेश ने उसकी इस बात का जवाब नही दिया । वह धप्प से चौखट पर बैठ गया और एकटक उन सबके भोजन की तरफ देखता रहा । बडा ही मोटा चावल पानी सी पतली जानें काहे की तो दाल, साग की डठला के साथ कद्दे की तरकारी और उसी के पास भुने कोहडे के दो एक टुकडे । दही नही, दूध नही किसी तरह की मिठाई नही , किसी के पत्तल पर एक टुकडा मछली तक नही ।

सबके साथ महिम खुशी-खुशी बडी ही तृप्ति के साथ यही भोजन करने लगा । लेकिन देख देख कर सुरेश की दोनो आखें गीली हो आइ । मुह फेर कर किसी कदर उसने अपने आँसू पोछे और उठ खडा हुआ । महज मामूली सी बात पर सुरेश की आखो मे आसू आ जाते ।

भोजन कर चुकने के बाद जब महिम ने उसे ले जाकर अपने साधारण से बिस्तर पर बिठाया, तो रुधे स्वर मे सुरेश बोला—बार बार तुम्हारी ज्यादती बदाश्त नही होती महिम ।

सुरेश न कहा—मतलब कि ऐसा भद्दा मकान भी शहर मे हो सकता है इतना बुरा भोजन भी कोई आदमी कर सकता है अगर आखो नही देखता तो यकीन नही कर सकता । खर जो भी हो, इस जगह को तुम्हे खोज ही कैसे मिली और तुम्हारा वह साविक डेरा—जितना भी बुरा क्यो न हो चाहे इससे तुलना ही नही हो सकती—उसे ही तुमने क्यो छोड दिया ?

मित्र के स्नेह ने मित्र के जी पर चोट पहुँचाई । महिम अपनी उस निर्विकार गभीरता को कायम नही रख सका । आर्द्र स्वर मे बोला—सुरेश, तुमने मेरा गाँव वाला घर देखा ही नही वरना समझ जाते कि यहा मुझे जरा भी तक्लीफ नहीं हो सकती । रही भोजन की बात, सो भले घर के और और लडके जो भोजन मजे म खा सकत है, उसे मैं ही क्या न खा सकूगा ?

सुरेश तश मे आ गया इसम क्या की बात ही नही । दुनिया म भली बुरी चीजें बेशक हैं । भली भली ही लगती है और बुरी बुरी लगगी इसम क्या शुबहा ? मैं सिफ यह जानना चाहता हूँ कि तुम्हें इतनी तक्लीफ उठान की पडी क्या है ?

महिम चुपचाप हसता रहा धीरे धीरे बोला नही ।

सुरश बोला—तुम्हारी जरूरत तुम्हारी रह, मुझे जानने की जरूरत नही ।

लेकिन मेरी जरूरत है तुम्हे यहा से बचा ले चलना। मैं यदि तुम्हे यहा छोड-कर जाऊँ तो मुझे नीद नही आएगी, खाना नही रुचेगा। मैं तुम्हारा सारा सरो सामान अपने घर ले चलूँगा। यहा के नौकर से कहो—एक गाडी बुला दे। इतना कहकर सुरेश ने जबदस्ती महिम को उठाया और खुद उसका बिछौना समेटने लगा।

महिम ने रोक थाम मे उछल कूद न की। शान्त गभीर स्वर मे बोला—पागलपन मत करो सुरेश।

नजर उठाकर सुरेश ने कहा—पागलपन कैसा ? तुम नही जाओगे ?

नही।

क्या नही जाओगे ? मैं क्या तुम्हारा कोई नहीं ? मेरे घर जाने मे क्या तुम्हारा अपमान होगा ?

नही ?

फिर ?

महिम ने कहा—सुरेश, तुम मेरे मित्र हो। ऐसा मित्र मेरा और कोई नही। दुनिया मे कितनो का है, यह भी नही जानता। इतने दिनो के बाद देह के जरा से आराम के लिए मैं ऐसी चीज खो बैठूँ, तुम क्या मुझे इतना बडा नादान समझते हो ?

सुरेश बोला—मिताई तुम्हारी अकेले की तो नही महिम। उसमें मेरा भी तो एक हिस्सा है। यदि वह खो जाय तो कितना बडा नुकसान होगा, यह समझने का शहूर मुझ मे नही—मैं क्या इतना बेवकूफ हूँ ? फिर इतना सतर्क सावधान, इतना हिसाब किताब रखकर न चलने से अगर वह नहीं रह सकती, तो जाय क्यो न महिम! ऐसी क्या उसकी कीमत कि उसके लिए अपने आराम की उपेक्षा करनी होगी ?

महिम ने हँसकर कहा—नही अब हार गया। लेकिन एक बात तैशुदा समझो सुरेश, तुम्हारा ख्याल है, मैं शौकिया यहाँ दुख झेलने आया हूँ, यह सही नहीं है।

सुरेश बोला—न सही। मैं कारण भी नही जानना चाहता—लेकिन अगर तुम्हारी नियत रुपया बचाने की है, तो मेरे घर चलकर रहो न—इसमे तो तुम्हारा इरादा मटटी न होगा।

महिम ने गर्दन हिलाकर संक्षेप में कहा—अभी छोड़ो सुरेश ! सच ही अगर तकलीफ होगी, तो तुम्हें बताऊँगा।

सुरेश को मालूम था कि महिम को उसके संकल्प से डिगाना असम्भव है। उसने जिद नहीं की और एक प्रकार से नाराज होकर ही चला गया। लेकिन दोस्त के रहने खाने का यह हाल देखकर उसके जी में सुई चुभती रही।

सुरेश धनी का लड़का था और महिम को वह अकपट प्यार करता था। उसकी दिली ख्वाहिश थी, किसी तरह वह दोस्त के किसी काम आये। लेकिन कभी भी वह महिम को मदद लेने को राजी न कर सका, आज भी न कर सका।

## २

पाँचेक साल बाद दोनों में बातें हो रही थीं।

तुम पर मुझे कितनी श्रद्धा थी, मैं कह नहीं सकता महिम।

कहने को तुम्हें मैं तङ्ग तो कर नहीं रहा हूँ सुरेश।

वह श्रद्धा अब शायद न रहने की।

न रहे तो मैं सजा दूँगा, ऐसी धमकी तो नहीं दी है कभी।

तुम्हारा बड़ा से बड़ा दुश्मन भी तुम पर कपट का इलजाम नहीं लगा सकता।

दुश्मन नहीं लगा सकता, इसलिए मित्र भी नहीं लगा सके, दर्शन शास्त्र का ऐसा अनुशासन तो नहीं।

तौबा कहो आखिर को एक ब्राह्म लड़की के पाले पड़ गये ? है क्या उसे ? सूखी लकड़ी-सा चेहरा, किताबें रटते रटते बदन में एक बूँद खून का नाम नहीं। ठेल दो तो डर है, आधी देह अलग हो रहे—आवाज तक ऐसी चीं चीं की सुनने से नफरत हो आती है।

बेशक हो आती है।

सुनो महिम, मजाक अपने देहाती लोगों से करो, जिन्होंने आँखों अभी ब्राह्म की लड़की देखी नहीं। जो यह सुनकर दङ्ग रह जाते हैं कि लड़की होकर

अँग्रेजी म पता लिख सकती है---जिनके जाने से वे बाअदब दूर खड़े हो जाते हैं। अचरज से अवाक् अपने उन गाँव वालो को करो जाकर, जो देव देवी समझ कर इनके आगे सिर नवाते हैं। मगर हम लोगो का घर तो गाँव मे नही हमारी आँखो मे तो इस आसानी से धूल नहीं झोकी जा सकती।

मैं तुम से शपथ खाकर कहता हूँ सुरेश, तुम्हारे शहर वालो को ठगने का अपना कोई इरादा नही। मैं उन्हे लेकर अपने गाव म ही रहूँगा। इसमे तो तुम्हे कोई एतराज नही ?

सुरेश रज होकर बोल उठा---नहीं है ? सौ हजार लाख, करोडो एतराज हैं। सारी दुनिया के पूज्य हिन्दू की सतान होकर तुम क्या तो एक औरत के मोह म जान गँवाओगे ? मोह ! एक बार उनके जूते मोजे उतारकर अपनी गृहलक्ष्मियो की पुशाक पहना कर देखा तो सही, मोह जाता रहता है या नही ! है क्या उसे ? कर क्या सकती है वह ? खैर, सिलाई बुनाई की ही तुम्हे जरूरत है, तो कलकत्ते म दर्जियो की क्या कमी ? किसी खत पर पता लिखाने के लिए तो तुम्हे ब्राह्म लडकी की शरण लेनी है। वक्त-बेवक्त यह क्या कूट पीस कर तुम्हे दो मुट्ठी खिला भी सकेगी ? बीमार होने पर सवा करेगी ? इसकी शिक्षा मिली है उन्हे ? ईश्वर न करें, मगर ऐसे आडे वक्त तुम्हे छोड कर चली न जाये तो सुरेश के बदले जो चाहे जिस नाम से मुझे पुकारना, दु ख न मानूँगा।

महिम चुप रहा। सुरेश फिर कहने लगा, महिम तुम तो जानते हो कि मङ्गल के सिवा मैं तुम्हारा अमङ्गल नही चाह सकता। भूल कर भी नहीं। मैंने बहुतरी ब्राह्म महिलाएँ देखी हं। दो एक अच्छी भी नही देखी, ऐसी बात नही। लेकिन अपने हिदू घर की महिलाओ से उनकी तुलना ही नहीं हो सकती। ब्याह करने का ही जी हो आया था, तो तुमने कहा क्यो नही ? खैर हुआ सो हुआ, अब तुम्हे वहा जाने की जरूरत नही। मैं वचन देता हूँ कि महीने भर के अदर तुम्हे ऐसी लडकी ढूढ दूँगा कि जीवन मे कभी दु ख उठाना ही न होगा, अगर ऐसा न कर सकूँ तो जो चाहे सो करना---इसी के परो सिर पीटना मैं कुछ न बोलूँगा। मगर एक महीना धीरज रखकर अपनी अब तक की मिताई की मर्यादा तुम्हे रखनी ही होगी। कहो, रखोगे ?

महिम पहले सा ही मौन रहा। हा ना कुछ न बोला---लेकिन दोस्त के भले के लिए दोस्त किस कदर बेचैन हो उठा है यह पूरी तरह समझ सका।

सुरेश बोला—जरा सोच तो देखा सही तुमने जब ब्राह्म मंदिर म जाना आना शुरू किया था, तो मैंने मना नही किया था तुम्हे ? इतन बडे कलकत्ता शहर में तुम्हारे लिए कोई हिंदू मंदिर था ही नही कि इस कपट की जरूरत हुई ? मैंने तभी समझा था कि एसे मे किसी न किसी विडवना म जरूर जकड जाओगे।

अबकी महिम जरा हँसकर बोला—सो समझा होगा, लेकिन मैंने तो ऐसा नही समझा था कि मेरे जान मे कोई कपट था। लेकिन एक बात पूछू, तुम तो भगवान तक को नही मानते फिर हिंदुओ के देवी देवताओ को मानोगे। मैं ब्राह्म मंदिर म जाऊँ या हिंदू मंदिर मे, इससे तुम्हारा क्या आता जाता है !

रमेश ने जोश मे कहा—जो नही है, मैं उसे नही मानता। भगवान् नही है। देवी देवता झूठी बात है। लेकिन जो है, उससे तो इकार नही करता। समाज को मैं श्रद्धा करता हूं, आदमी की पूजा करता हूँ। मैं जानता हूं कि मनुष्य की सेवा ही मानव जन्म की चरम सार्थकता है। हिंदू परिवार म पैदा हुआ हूँ तो हिंदू-समाज की रक्षा करना ही अपना काम है। मैं मरते दम तक तुम्हे ब्राह्म घर म विवाह करके उसकी जमात बढाने नही दूँगा। तुमने क्या वचन दिया है कि केदार मुखर्जी की बेटी से ब्याह करोगे ?

नही। जिसे वचन देना कहते हैं वह अभी नही दिया है। नहा दिया है न ! ठीक है। तो फिर चुपचाप बैठे रहो। मैं इसी महीने म तुम्हारा विवाह कराऊँगा।

मैं ब्याह करने के लिए पागल हो गया हूँ, यह किसने कहा—तुमसे ? तुम भी चुप बैठो जाकर, और कही ब्याह करना मेरे लिए असभव है।

क्या असभव क्यो ? किया क्या है ! उनसे प्रेम कर बैठे हो ?

इसमे अचरज क्या है ! मगर इस भद्र महिला के बारे म सम्मान के साथ बात बोलो सुरेश।

सम्मान के साथ बोलना मुझे आता है। सिखाना नही पडेगा। मैं पूछ सकता हूँ कि उन भद्र महिला की उम्र क्या होगी ?

नही जानता।

नही जानते ? बीस, पच्चीस तीस चालीस, या और भी ज्यादा—कुछ नही जानते ?

नही।

तुमसे छोटी है या बडी, शायद यह भी नही जानते ?

नही।

जब उन्होंने तुमको फन्दे मे फँसाया है तो नन्ही-नादान ता नहीं है, ऐमा सोचना असगत न होगा। क्या ख्याल है ?

नही। तुम्हारे लिए कोई असगत नही। लेकिन मुझे कुछ काम है सुरश, मैं जरा बाहर जाना चाहता हूँ।

सुरश न कहा—ठीक ता है, मुझे भी कोई काम नहीं है महिम, चला तुम्हारे साथ जरा घूम आएँ।

दोनो मित्र निकल पडे। कुछ देर चुपचाप चलते रहने के बाद सुरेश न धीरे धीरे कहा—आज इच्छा करके ही मैंने तुम्ह बाधा दी, शायद यह समझा-कर कहने की जरूरत नही ?

महिम ने कहा—नही।

सुरेश ने वैसे ही मृदु स्वर में कहा—आखिर बाधा क्या दी ?

महिम हँसा। बोला—पहली बात अगर बिना समझाए ही समझ सका तो आशा है, इसे भी समझाना न होगा।

उसका एक हाथ सुरेश के हाथ म था। सुरेश ने गीले मन से उसे जरा दबाकर कहा—नही महिम, तुम्हे समझाना नही चाहता ससार म और सब मुझे गलत समझ सकते हैं, तुम मुझे गलत नही समझोग। फिर भी आज मैं तुम्हारे मुँह पर सुना देना चाहता हूँ कि मैंन तुम्हे जितना प्यार किया है, तुमन मुझे उसका आधा भी नही किया। तुम परवाह चाह न करा, पर मैं तुम्हारी जरा सी तकलीफ भी कभी सह नही सकता। बचपन म इसी पर हमारी कितनी लडाई हुई है साच देखो। इतने दिना के बाद जिसके लिए तुम मुझे भी छाड रहे हा महिम, अगर निश्चित जानता कि उन्हें पाकर जीवन मे सुखी होगे, ता सारा दुःख मैं हँसकर सह लेता कभी एक शब्द नहीं कहता।

महिम बोला—उनको पाकर सुखी शायद न हा सकूँ, मगर तुम्हें छोड दूँगा, यह कैसे जाना ?

तुम छोडो न छाडा, मैं तुम्हे छोड दूँगा।

लेकिन क्यो ? मैं तुम्हारा ब्राह्म मित्र भी तो हो सकता था ?

नही। हर्गिज नही। ब्राह्म को मैं फूटी आँखो भी नही देख सकता। मेरा एक भी ब्राह्म दोस्त नही।

उन्हें देख क्या नही सकते ?

बहुत से कारण हैं इसके। एक यह कि जो हमारे समाज को बुरा बताकर छोड गये उन्हे अच्छा मानकर मैं हर्गिज पास नही खीच सकता। तुम्हें तो पता है, अपने समाज के लिए मुझे कितनी ममता है। उस समाज को जो देश के, विदेश के सबके सामने बुरा साबित करना चाहता है, उसकी अच्छाई उसी की रहे, वह मेरा शत्रु है।

महिम मन ही मन असहिष्णु होता जा रहा था, अच्छा तो अब क्या करने को कहते हो तुम ?

सुरेश बोला—वही तो शुरू से लगातार कह रहा हूँ।

खैर, एक बार फिर कहा।

जैसे भी हो, इस युवती का मोह तुम्हें छोडना ही पडेगा—कम से कम एक महीना तुम उससे मिल नही पाओगे।

मगर उससे भी न छूटे तो ? यदि मोह से भी बडा कुछ हो ?

सुरेश ने जरा देर सोचकर कहा—वह सब मैं नही समझता महिम। मैं समझता हूँ कि मैं तुम्हें प्यार करता हूँ और उससे भी ज्यादा प्यार करता हूँ अपने समाज को। हाँ एक बार सोच देखो, छुटपन मे चेचक हुआ तुम्हे, वह बात और नाव डूब जाने से हम मुंगेर मे गगा मे डूब रहे थे। भूली बात की याद दिलाई, इसके लिए मुझे माफ करना महिम। मुझे और कुछ नही कहना, मैं चला। और अचानक वह पीछे मुडकर तेजी से चला गया।

## (३)

सुरेश के बदन मे एक ओर जितनी ही ज्यादा ताकत थी, दूसरी ओर उतना ही कोमल था उसका मन, उतना ही स्नेहशील। जाने-अजाने किसी के भी दु ख कष्ट की बात सुनकर उसे रोना आता। छुटपन मे वह एक मच्छड

मक्खी तक का नही मार सकता था। जैनिया की देखा देखी ही कितनी बार जेव मे चीनी सूजी लिए स्कूल से गैरहाजिर हो पेडो तले घूम-घूम कर चीटियो को खिलाया करता था। मछली मास खाना उसने कितनी वार छोडा और पकडा इसका हिसाव नही। जिसे चाहता, उसके लिए कसे क्या करे सोच नही पाता। स्कूल मे अपने दर्जे मे महिम सबसे अच्छा लडका था। लेकिन उसके बदन पर फटे चिटे कपडे, पैरा का जूता फटा पुराना, दुवला शरीर, सूखा चेहरा—यही सब देख-सुनकर सुरेश पहले उसकी ओर आकृष्ट हुआ था। और, थोडे ही दिनो मे दोनो का यह आकपण वाढ के पानी की तरह इतना वढ उठा कि विद्यालय भर के लडका की चर्चा का विपय वन बैठा। महिम् को छात्रवत्ति मिली थी और उन्ही चार रुपयो के भरोसे वह कलकत्ते आया तथा गाव के एक मादी की दूकान मे रहकर स्कूल मे दाखिल हुआ। तभी से सुरेश ने दोस्त को अपने घर लाने की हर कोशिश की, मगर उसे हर्गिज राजी न करा सका। वही रहकर कभी भूखा, कभी अधपेटा रहकर महिम ने एट्रस पास किया। वाद की घटना पहले बताई जा चुकी है।

उस दिन से हफ्ता भर महिम से भेंट न हो सकने के कारण सुरेश उसके डेरे पर गया। किसी त्यौहार के कारण आज स्कूल कालेज ब द थे। वहा जाने पर पता चला, महिम सुबह ही जो निकला है, सो अभी तक नही लौटा। सुरेश को स देह नही रहा कि वह छुट्टी का दिन विताने के लिए पटलडागा के केदार मुखर्जी के यहा ही गया है।

जा बेहया दोस्त आशैशव मिताई की सारी मर्यादा को एक मामूली औरत के मोह से विसजन देकर सात दिन भी धीरज नही रख सका—दौडा गया, पलक मारते उसके खिलाफ विद्वेष की आग अचानक आग लग जाने सी उसके जी मे जल उठी। उसने जरा देर विचार भी न किया, गाडी पर बैठ गया और कोचवान को सीधे पटलडागा चलने को कहा—मन ही मन कहने लगा, अरे बेहया, अरे अहसान फरामोश! अपना जो प्राण इस औरत का सौप कर तू धन्य हो गया है तरा वह प्राण रहता कहा? अपन प्राण की कतई परवा न करके जिसने तेरे प्राण को दो दा वार बचाया, उसका क्या जरा भी सम्मान नही रखना था?

केदार मुखर्जी के घरवाली गली सुरेश को मालूम थी, थोडी सी पूछताछ

के बाद ही गाडी ठीक जगह पर पहुँच गई। उतर कर सुरेश ने वरे से पूछा और सीधे ऊपर के वठक मे जा पहुँचा। फश पर बिछाई गई तकिए के सहारे लेट हुए एक वृद्ध से मज्जन अखवार पढ रहे थे। उन्हाने उसकी तरफ ताका। नमस्कार करके सुरेश न अपना परिचय दिया। मेरा नाम सुरेश बधोपाध्याय है। मैं महिम के बचपन की साथी हूँ।

बूढे ने नमस्ते किया। चश्मे का मोडकर रखत हुए बोले—बैठिये। सुरेश बैठ गया। बोला—महिम के डेरे पर गया तो पना चला, वह यही है सा साचा, इसी बहान आपसे भी परिचित हो लू।

बूढे न कहा—मेरा परम सौभाग्य आप पधार। लेकिन महिम दस बारह दिनो से इधर नही आए। आज सुबह हम लोग साच रहे थे जानें किस हालत मे हैं वे ?

सुरेश मन ही मन जरा चकित होकर बाला—लेकिन उनके डेरे पर ता बताया—

बूढे ने कहा—आर कही गए हा शायद। खर अच्छे हैं सुनकर राहत मिली।

आत आते राह म सुरश ने जो सब उद्धत सकल्प किया था बूढे के सामन आकर उन्ह ठीक न रख सका। उनके शान्त मुखडे की धीर मृदु बाता ने उसक मन की आच का शीतल कर दिया। फिर भी वह अपने कत्तव्य को भी न भूला। अपन मन ही मन यह कहकर वह अपने को उत्तेजित करन लगा कि य जितने भी भल क्यो न हा हैं ता ब्राह्म ही! लिहाजा इनका सारा शिष्टाचार ही बनावटी है। य अबोधा को इसी तरह से फुसलाकर अपना उल्लू सीधा किया करत हैं। सो इन शिकारियो के सामने हथियार डालकर काम को भुलाने स नही चल सकता—जसे भी हो इनके जबडे से दोस्त का निकालना ही पडेगा। उसन काम की बात शुरू की। बाला—महिम मेरा बचपन का साथी है। ऐसा दूसरा दास्त नही मेरा। अगर इजाजत दें तो उसके बारे म आपस दो एक बात करूँ।

वृद्ध न हँसकर कहा—बखूबी। मैंने उनसे आपका नाम सुना है।

सुरेश ने पूछा—महिम स आपकी लडकी की शादी तै पा गई ?

उन्होंने कहा—तै ही समझिए।

सुरेश ने कहा—लेकिन महिम ता ब्राह्म समाजी नही है, फिर भी ब्याह करेंगे आप।

बूढे चुप हो रहे। सुरेश ने कहा—खैर, यह बात अभी छोडिए। परन्तु उसकी अवस्था कैसी है बीवी-बच्चो के गुजर बसर की जुरत है या नही, गाव मे विरोधी हिन्दू-समाज के बीच कच्चे घर मे आपकी लडकी रह सकेगी या नही और कही न रह सके तो महिम क्या करेगा, यह सब सोच देखा है आपने ?

बूढे केदार मुखर्जी उठ बैठे। बोले—नही तो। मैंने तो यह सब सुना नही। महिम ने कभी तो यह सब नही कहा ?

सुरेश बोला—लेकिन मैंने यह सब सोचा है, महिम से कहा—है और वही अप्रिय प्रसग उठाने के लिए मैं आपके पास आया हूँ आज। अपनी लडकी की आप सोचे, अगर मेरे परम मित्र जो ऐसी एक जिम्मेदारी कन्धे पर उठाकर बेहद बोझ से सदा अधमुए से रहगे, यह तो मैं हर्गिज न होने दूँगा।

केदार बाबू का चेहरा फक हो गया। बोले—आप कह क्या रहे है सुरेश बाबू ?

पिताजी ?—सत्रह-अट्ठारह साल की एक लडकी अचानक कमरे मे आकर पिता के पास किसी अजाने युवक को बैठा देख ठक् रह गई।

कौन ? अचला ? आओ बिटिया, बठो। शर्म कसी, ये अपने महिम के गहरे मित्र है।

वह लडकी आगे बढ आई। हाथ उठाकर सुरेश को नमस्ते किया। सुरेश ने देखा, चमकता सावला रग, छरहरा बदन। गाल, ठोडी, कपाल—सारे मुख की बनावट ही बहुत अच्छी और सुकुमार। आखो की निगाह मे जरा स्थिर बुद्धि की आभा। नमस्ते करके वह करीब ही बैठ गई। उसको देखकर सुरेश मुग्ध हो गया। उसके पिता बोले—महिम के बारे मे सुना तुमने ? हम सोच रहे थे, वह आ क्यो नही रहा है ? सुन लो ! परम बन्धु हैं उसके, जभी तो ये आए, नही तो क्या होता, कहा तो ? किसे पता था कि वह ऐसा विश्वासघाती है, इतना बडा मक्कार। गाँव मे उसको महज एक फूस का घर है। वह तुम्हे खिलाएगा क्या, उसे तो खुद ही खाना कपडा का ठिकाना नही। ओ कितना खतरनाक ! ऐसे आदमी के मन मे भी इतना जहर था।

सुनकर अचला का चेहरा पीला पड गया, लेकिन किसने तो सुरेश के मुँह पर भी कालिख पोत दी। वह उस लडकी की ओर अवाक् देखता हुआ काठ के पुतले-सा बैठा रह गया।

## ४

सुरेश का लगा, उसका निष्ठुर सत्य अचला के कलेजे म नश्तरा सा बिंध गया। लेकिन पिता ने उसका ध्यान तक न किया। बल्कि बेटी का ही इशारा करके कहने लगे, सुरेश बाबू, आप सच्चे मित्र का कत्तव्य करने आए हैं हम जिसमे भ्रम म भी इस पर अविश्वास न करें। यह कठोर है अप्रिय हो पर सच्चा प्रेम यही है। माँ जब बीमार बच्चे को खाना नही देती, तो वह क्या उसे बेरहमी नही लगती ? लेकिन फिर तो उसे वह काम करना ही पडता है ! सच कह रहा हूँ सुरेश बाबू ! महिम हमारे ऊपर ऐसा जुल्म कर सकते हैं यह हमने स्वप्न म भी न सोचा था। दो साल पहले उनके बात-व्यवहार स मुग्ध होकर मैंने खुद ही घर बुलाकर अचला से उनका परिचय कराया, उसका यही बदला ! उफ, इतनी बडी प्रवचना अपने जीवन म मैंने नही देखी। अन्दर के आवेग म खडे होकर केदार बाबू कमरे म पायचारी करने लगे। सुरेश और अचला सिर झुकाए चुप बैठ रहे। केदार बाबू सहसा ठिठककर बोल उठे नही बिटिया, यह नही होने का। हर्गिज नही। सुरेश बाबू आप जैसे सबके ऊपर कत्तव्य को ही रखकर मित्र का काम करने आए हैं वैसे मैं भी कत्तव्य को ही सामने रखकर पिता का काम करूँगा। अचला से महिम का सम्बन्ध जितना आगे बढ गया है, ऐसे म बिना सबूत के अगर उसके लिए घर का दरवाजा बन्द करदें तो ठीक नही होगा इसलिए एक बार सबूत चाहिए। आप यह न सोचें सुरेश बाबू कि आपकी बात पर यकीन नही किया लेकिन यह भी अपना कत्तव्य है। क्या बिटिया ! सबूत लेना ठीक है या नही ?

दोनो ही चुप बैठ रह, उचित-अनुचित, कोई राय किसी ने जाहीर नही की। जरा देर रुककर ही केदार बाबू बोले, लेकिन सबूत का भार आप पर ही रहा सुरेश बाबू। महिम की माली हालत की बात तो दूर रही, उसका घर किस गाव मे है हम यही नही जानते।

बरे ने खबर दी, नीचे विकास बाबू खडे है।

सुनकर केदार बाबू सूख से गये। बोले आज तो उनके आने की बात न थी। अच्छा कहो, उनसे मैं आ रहा हूँ। पलटकर बोले—मुझे पाचेक मिनट के लिए माफ करना होगा सुरेश बाबू मैं इस आदमी को रुखसत कर आऊँ। जब

आ गया है, तो मिले बिना तो जायगा नही बिटिया अचला, सुरेश बाबू को अपना परम हितैषी समझना। जी जानना चाहो, इनसे जान लो। मैं अभी आया। कहकर वे नीचे उतर गये।

एक दूसरे को देखकर दोनो ने सिर झुका लिया। जरा देर चुप रहकर सुरेश ने धीरे धीरे कहा—मैं महिमा का छुटपन का साथी हूँ लेकिन उसके व्यवहार स आप लोगो के सामने मेरा सिर नीचा हो गया है।

अचला ने धीमे से कहा—इसके लिए आप को लज्जित होने का कोई कारण नही।

सुरेश बोला—कहती क्या हैं आप ! उसकी इस मक्कारी से, ऐसे पाखड व्यवहार से दोस्त के नाते मैं शर्मिंदा न होऊँ तो कौन हो, कहिए। लेकिन तभी तो मुझे सोचना चाहिए था कि जब उसने मुझी से शुरू से आखिर तक छिपाया, तब इसके अन्दर जरूर कोई गडबड है।

अचला न कहा—असल मे हम ब्राह्म सामाजी है। आप इस समाज के किसी स कोई सम्पर्क नही रखना चाहते, शायद इसीलिए उन्होने आप से जिक्र न किया हो।

बात सुरेश को अच्छी न लगी। अचला उसी के सामन महिम का दोप काटना चाहेगी, यह उसने नही सोचा था। सूखे कण्ठ से पूछा—यह बात आपने महिम से सुनी होगी शायद।

अचला ने सिर हिलाकर कहा—जी हा, उन्होने ही कहा था।

सुरेश ने कहा—देखता हूँ, मेरे दोप का कहना वह भूला नही।

अचला जरा फीका हँसकर बोली—यह दोप की क्या बात है ? हर आदमी की प्रवृत्ति एक नही होती। जो लोग आप लोगो से नाता तोडकर चले गए है, वे अगर आपको अच्छे न लगें तो इसम मैं कोई दोप नही मानती।

यह बात सुरेश के मन लायक थी, और, कहीं और सुनकर वह शायद उछल उठता, लेकिन इस मितभापिणी ब्राह्म युवती के मुह से ब्राह्मसमाज पर अपनी वितृष्णा की बात सुनकर आज उसम जरा भी आनन्द का उदय नही हुआ। वास्तव म इस दलबन्दी की मीमांसा सुनने के लिए उसने बात कही भी न थी। बल्कि जवाब म उसने यह सुनना चाहा था कि महिम से उसने उसके सद्गुण का और विवरण सुना है या नही, अचला शायद उसकी इस गोपन अभिलापा को ताड नही सकी, इसीलिए सवाल का सीधा जवाब देकर ही वह चुप हो गई।

सुरेश मुड़कर बोला—आप लोगों से मुझे सामाजिक चिढ है या नहीं, यह चचा महिम करे, लेकिन उस पर मुझे जरा भी विद्वेष नहीं है, यह आप मुझस सुनकर भी अविश्वास न करे। फिर भी शायद मैं उसकी दुनियादारी की बात करने यहा नहीं आता, अगर उस दिन वह मुझसे सच्ची बात नहीं छिपाता।

सुरेश के मुह पर स्थिर दृष्टि रखकर अचला ने कहा—लेकिन झूठ तो वे नहीं बोलते।

अबकी सुरेश सचमुच ही अचरज से हत बुद्धि हो गया। एक औरत के मुँह से ऐसा शान्त लेकिन दृढ प्रतिवाद भी निकल सकता है, जरा देर वह सोच ही न सका। लेकिन जरा ही देर के लिए। जीवन मे उसने सयम नहीं सीखा। सो दूसरे ही क्षण रूखे स्वर मे बोल उठा—मुझे माफ करें, वह मेरा बाल्य बधु है। आपसे मैं उसे कुछ कम नहीं जानता। अपने को यहा फँसाकर साफ इनकार करने को मैं सत्य वादिता नहीं कह सकता।

अचला ने वैसे ही शान्त स्वर मे कहा—उन्होंने तो अपने को यहा आवद्ध नहीं किया।

सुरेश ने कहा—आपके पिताजी ने तो यही कहा। इसके सिवा अपनी गई बीती हालत को आप लोगो से छिपाने को भी सत्यप्रियता नहीं कह सकते। बाल बच्चो के भरण पोषण की असमर्थता औरो से न सही आपसे तो खोलकर कहना चाहिए था।

अचला चुप रही। सुरेश कहने लगा—आप जो उसकी भूल को ढकने की इतनी कोशिश कर रही है, आप ही बताएँ भला, सारी बातें पहले मालूम हो जाती तो उसे इनी तरह आप दे सकती?

अचला चुप ही रही। उससे कोई जवाब न पाकर सुरेश और भी जोश मे आकर कहने लगा—उसने मेरे सामने साफ कबूल किया कि कलकत्ते मे आपको रखने की न तो उसे जुरत है न इरादा। अपने उस छोटे से गाव मे बिल्कुल विरोधी हिंदू समाज मे एक कच्चे घर मे आपको ले जाकर रखेगा यह बात क्या उसे आपसे बता नहीं देनी चाहिए थी? इतना दुख उठाने को आप तैयार है या नहीं, यह पूछना भी क्या उसने जरूरी नहीं समझा?—उसने आख उठाई। देखा, अचला चिंतित सी सिर झुकाए बैठी है। जवाब न मिलने पर भी सुरेश समझ गया कि उसकी बात ने काम दिया है। बोला—देखिए, आपमे

इस समय मैं सच ही कहूँगा। आज मैं सिर्फ अपने मित्र को बचाने का ही संकल्प लेकर आया था—वह किसी आफत में न पड़े, यही अपना उद्देश्य था। लेकिन यहाँ आकर देखता हूँ कि उसके बजाय आपको बचाना ही मेरा कहीं बड़ा कर्त्तव्य है। क्योंकि उसकी मुसीबत है मोल ली हुई, मगर आप अँधेरे में कूद रही हैं। अभी अभी जब आपके पिताजी सबूत की जिम्मेदारी मुझी पर सौंप रहे थे, तो जी में आया था कि यह भार मैं न लूँगा। परन्तु अब देखता हूँ कि यह भार मुझे लेना ही पड़ेगा, नहीं तो अन्याय होगा।

अचला बोली— लेकिन सुनकर वे क्या दुःखी न होंगे?

सुरेश बोला—मगर उपाय नहीं है। जिसने पाखंड की नाई आपसे इतनी बड़ी प्रवंचना की है, मित्र होते हुए भी उसकी फिक्र करने को मैं जरूरत नहीं समझता। मगर मुसीबत तो यह है कि मैं उसके गाँव का नाम भी नहीं जानता। किसी तरकीब से अगर वह जान पाया आज, तो सुबह ही वहाँ जाऊँगा और सारे सबूत आपके पिताजी को देकर मित्र के पाप का प्रायश्चित करूँगा।

अचला ने कहा—लेकिन इतनी तकलीफ आप क्या उठाएँ? पिताजी से कहिए, अपने किसी विश्वासी आदमी को भेजकर सब पता कर लें। चौबिस परगने का राजपुर ग्राम कौन ज्यादा दूर है?

सुरेश ने अचरज से कहा—राजपुर! गाँव का नाम तो आप जानती हैं, देख रहा हूँ और भी कुछ मालूम है?

अचला ने सहज भाव से कहा—आपने जो कुछ कहा मैं भी उतना ही जानती हूँ। राजपुर के उत्तर टोले में मिट्टी का एक घर है। अंदर तीनेक कमरे, बाहर चटीमंडपा उसी में गाँव की पाठशाला बैठती है।

सुरेश ने पूछा—उसकी सामाजिक अवस्था?

अचला बोली—उसके बारे में भी आपने जो कहा, वही। नाम को जायदाद है। किसी तरह दुःख कष्ट से रोटी भर चल जाती है।

सुरेश ने कहा—तब तो आप सब जानती हैं, देखता हूँ?

अचला बोली—इतना ही जानती हूँ, एक दिन इतना ही उनसे पूछा था। और आप तो जानते हैं, वे कभी झूठ नहीं कहते।

सारा चेहरा स्याह करके सुरेश बोला—जब सारा कुछ मालूम ही है, फिर

तो आप लोगों को सचेत करने के लिए मेरा आना वडा वैसा हुआ। देख रहा हूँ, उसने आपको धोखा नहीं देना चाहा।

अचला ने कहा—मुझे कुछ कुछ मालूम है, मगर आप तो मुझे वताने को आए नहीं हं, जिन्हें वताने आए है, वे अभी तक कुछ भी नहीं जानते। आप कहें तो मैं जितना भर जानती हूँ पिताजी को वता दूँ?

सुरेश ने उदास होकर कहा—आपकी मर्जी। लेकिन मुझे महिम को सब कुछ बताकर उससे माफी मागनी होगी। तब मुझे कहीं चैन मिलेगी।

अचला ने पूछा—इसकी भी कोई जरूरत है क्या?

सुरेश फिर उत्तेजित हो उठा। बोला—जरूरत नहीं है? अनजाने उस पर जो झूठी तोहमत मैंने लगाई है, यह मेरा कितना बडा अपराध है, यह क्या आपने नहीं समझा? उसे मक्कार, झूठा—कुछ भी कहना न छोडा—ये बातें उसके आगे कबूल किए बिना त्राण कैसे मिलेगा?

अचला जरा देर चुप रहकर धीरे धीरे बोली—बल्कि मेरा कहा मानिए, इसकी कोई जरूरत नहीं सुरेश बाबू! मन ही मन माफी मागने के बजाय जाहिर में माफी माँगना ही बडी चीज है यह मैं नहीं मानती। सुनते ही जब उन्हें पीडा पहुँचेगी तो बताने से क्या लाभ? मैं बल्कि पिताजी को भी मना कर दूँगी कि वे आपकी बात उन्हें न बतायें।

सुरेश ने कहा—अच्छा! कुछ देर चुपचाप अचला की ओर देखते रहकर बोला—मैं एक बात बराबर गौर करता आ रहा हूँ कि आपकी कोशिश यही है कि महिम को किसी भी वजह से चोट न पहुँचे। खैर वही सही। मैं उससे कुछ भी न कहूँगा। उसके बारे में आज मेरे मन में जितनी बातें आई वह भी नहीं कहना चाहता, पर एक बात आपसे कहे बिना मैं हर्गिज नहीं जा सकता।

अचला ने स्निग्ध दृष्टि से देखकर कहा—ठीक है, कहिए।

सुरेश बोला—उससे माफी न माँग पाया, पर आपसे माँग रहा हूँ। मुझे माफ करें। कहकर उसने हाथ जोड लिए।

छि: छि: यह क्या कर रहे हैं आप! कहकर अचला ने उसके हाथ पकड लिए और झट उन्हें छोडकर कहा—यह कैसा अन्याय, कहिए तो! कहते-कहते उसका चेहरा शर्म से तमतमा उठा।

सुरेश के सारे बदन के रोएँ खडे हो आए। इस अनोखे स्पर्श, सलज्ज मुख

की अनूठी लाल आभा ने लमहे में उसे एक बारगी बेबस बना दिया । वह नजर झुकाए कुछ क्षण स्तब्ध होकर इसे देखता रहकर धीरे धीरे बोला—नहीं, मैंने कोई अन्याय नहीं किया । बल्कि अपने हजारों अन्यायों में अगर कोई वाजिब काम हुआ है, तो वह यही है । आप क्षमा कर दें तो मेरे मन का सारा क्षोभ धुल जायगा ।

अचला कातर होकर बोली—आप ऐसी बात हर्गिज न कहें । जिन्हें आपने दो दो बार मौत के मुँह से निकाला है—

यह भी सुना है आपने ?

सुना है । आपसे बड़ा हितैषी उनका है कौन ?

नहीं शायद आपके सिवा और कोई नहीं । और इसी पर से हम दोनों—

अचला के चेहरे पर फिर तनिक ललाई दौड़ गई । वह बोली—हाँ, वे धुले हुए । आपने इन्हें मौत के करीब से खींच लिया है । इसीलिए उनके लिए आपकी किसी भी बात को मैं अन्याय नहीं सोच सकती । आप मन में कोई क्षोभ, कोई लज्जा न रक्खें । क्षमा शब्द के उच्चारण से अगर आपको संतोष हो तो मैं वह कहने को भी तैयार थी, बशर्ते कि मेरी जबान पर वह अटकता नहीं ।

खैर जरूरत नहीं ! सुरेश उठ खड़ा हुआ—आपके पिताजी से भेंट नहीं हुई, वे शायद समझ गए । हो सकता है, महिम के साथ कभी आ जाऊँ । नमस्ते !

अचला ने हलका हँसकर कहा—नमस्ते ! लेकिन उनके साथ ही आना होगा, इनके तो कोई मानी नहीं ।

सच कह रही हैं ?

सच ?

अपनी खुशकिस्मती ! कहकर सुरेश ने फिर एक बार नमस्कार किया और चला गया ।

## ५

बाहर जाने पर मानो नशे में हो, उसका देह मन डगमगाने लगा । तेज धूप उस समय निस्तेज होती जा रही थी , उसने गाड़ी लौटा दी और पाव-

पयादे ही चल पडा। ख्वाहिश यह कि कलकत्ते की भीड भरी हलचल वाली मडको पर अपने को एक बारगी मग्न करके स्थिति पर जरा विचार कर ले।

अचला की शक्ल-सूरत, बनावट, भाषा, व्यवहार, शुरू से अन्त तक बार-बार याद आने लगे और उसे अपने आपको बडा छोटा लगने लगा।

उस मुखडे मे सौंदय की अलौकिकता नही थी वातो मे, व्यवहार मे, ज्ञान और विद्या बुद्धि का कोई वैसा अनोखापन भी कही नही छलका, फिर भी कसे तो उसे ऐसा मालूम होने लगा कि अभी अभी वह एक ऐसी विस्मयकारी वस्तु देखकर आया है, जसी कि आज तक कभी कही नही नजर आई। चलत चलत वह घडी घडी अपने आपसे पूछने लगा, यह अचरज क्या ? किस बात ने उसे आज इस कदर अभिभूत कर दिया ?

उस युवती मे कोई ऐसी चीज उसने देखी जिससे अपने आपको लीन मोचते हुए भी उसका हृदय एक अनजानी सार्थकता से भर गया। उस युवती का वास्तविक कोई परिचय अभी तक उसे नसीब नही हुआ, परन्तु वह बडी है बहुत ऊँची, उसे लाभ करना किसी भी पुरुष के लिए दुर्भाग्य नही—यह सशय एक बार भी उसके मन म क्यो नही उठता ? सोचते-साचते उसकी विचार-धारा एक बार ठीक जगह पर चोट कर बैठी। उसे लगा, शिक्षा, ज्ञान, उम्र सभी बातो मे उससे छोटी होने के बावजूद महज कुछ क्षणो की बातचीत म उस युवती ने जो उसे इस प्रकार से पराजित कर दिया, वह सिर्फ अपने असाधारण सयम के बल से। इसीलिए वह इतनी शात होत हुए भी इतनी दृढ थी, इतना सब जानते हुए भी ऐसी मौन। महिम के बारे मे जब वह प्रगल्भ की नाइ वक्ता ही चला जा रहा था, तब वह सिर झुकाए चुप थी सहती गई थी—जरा देर के लिए भी चचल होकर, तर्क और झगडा करके उसने अपने को छोटा नही बनाया। हर समय उसने अपने को जब्त किया छिपाया जो कि काइ भी बात उससे छिपी न थी। महिम को वह कितना प्यार करती है यह जताया जरूर नही लेकिन उसकी अटूट श्रद्धा किसी प्रकार भी टूटी नहीं, यह बात उसने किम आसानी और सक्षेप स बता दी।

यह विद्या महिम से ही उसने सीखी है और अच्छी तरह से सीखी है, यह बात वह खुद से बहुत बार कहने लगा तथा उसमे छुटपन से ही सयम की कमी थी, इसलिए दूसरे किसी म उसकी इतनी अधिकता दख उसका शिक्षित भला अत-

करण खुद ही उस गौरवमयी के चरणो मे झुक कर अपने को धन्य समझने लगा।

अनेक रास्ते गलियो का चक्कर काटकर सुरेश साझ के बाद घर लौटा। बैठक मे कदम रखते ही अवाक् होकर देखा, आख पर हथेली रक्खे महिम एक खाट पर पडा है। वह उठ बैठा। बोला—आओ भाई!

अरे! कहकर सुरेश धीरे-धीरे एक कुर्सी लेकर पास बैठ गया।

महिम गाहे बगाहे ही आता। सो जब आता, सुरेश का स्वागत जरा बढा-चढा कर होता। आज लेकिन उसकी बात ही न सुनी। महिम ने हैरान होकर कहा, वहाँ पर पहुँचा तो मालूम हुआ कि तुम गये थे। सो सोचा—

कृपा करके एक बार दर्शन दे आऊँ! क्यो? कितने दिनो के बाद आए हो, सोच सकते हो?

महिम ने हँसकर कहा—जरूर। करूँ क्या, फुरसत नही मिली। और गौर किया, गैस की रोशनी मे सुरेश का चेहरा बडा सूखा-सा और कठिन लग रहा है। सो उसे प्रसन्न करने के ख्याल से स्निग्ध स्वर मे फिर बोला, तुम्हारा बिगडना वाजिब है यह मैं हजार बार स्वीकार करता हूँ। मगर यकीन मानो, सच ही समय नही मिलता, आजकल जरा पढाई का भी दबाव बढ गया है और सुबह शाम कुछ ट्यूशन—

ट्यूशन भी शुरू हो गया है?

इस बात का जवाब महिम टाल गया। बोला, मेरी तलाश मे गये थे, खास कोई काम था क्या?

सुरेश ने कहा—हूँ! आज तुम नही आये होते तो कल सबेरे मुझे फिर जाना पडता।

कारण जानने के लिए महिम उत्सुक हो रहा। बडी देर तक उसके पैरो के जूतो की ओर ताकते रहकर उसके बाद सुरेश बोला—इस बीच तुम शायद केदार बाबू के यहा नही गए हो?

महिम ने कहा—नही।

क्या नही गए, मेरी वजह से न? अच्छा, उस वचन से मैं तुम्हे बरी किए देता हूँ। मनमाना वहाँ जा सकते हो।

महिम हँसा। नही जाऊँगा, ऐसी प्रतिज्ञा की थी यह तो याद नही आता।

सुरेश ने कहा—न हो तो ठीक ही है, फिर भी मेरी ओर से कोई बाधा हो, तो वह मैं उठा लेता हूँ।

यह अनुग्रह है या निग्रह सुरेश ?

तुम्हे क्या लगता है महिम ?

सदा जो लगता है, वही।

सुरेश बोला—यानी मेरा ख्याल ! है न ? खैर, जो चाहे सो सोच सकते हो मुझे कोई एतराज नही। फक्त वह रोक मैंने हटा ली, जो मैंने लगाई थी।

इसका कारण पूछ सकता हूँ ?

ख्याल का कोई कारण भी होता है कि तुम्हारे पूछने से ही मुझे बताना पडेगा।

महिम जरा देर चुप रहकर बोला—लेकिन सुरेश, तुम्हारे ख्याल के चलते ही सारी दुनिया की रोक लग जायगी और उठ जायगी, ऐसा हो तो शायद अच्छा ही हो, मगर वास्तव मे ऐसा होता नही। जहा तुम्हे कोई बाधा नही, वहा मुझे बाधा हो सकती है।

यानी ?

यानी उस रोज तुमने ब्रह्ममहिलाओ के बारे मे जो जो कहा—मैंने उन पर सोच देखा। खैर, तुमने कहा था कि एक महीने मे मेरे लिए लडकी ठीक कर दोगे, उसका क्या हुआ ?

सुरेश ने नजर उठाकर देखा, गम्भीरता की आड लेकर महिम मजाक उडा रहा है। उसने भी गभीर होकर कहा—मैंने सोचकर देखा, यह ब्याह की दलाली अपना पेशा नही। उसके बाद हँसकर बोला—मगर मजाक छोडो। अब तक तुमने मेरी इज्जत रक्खी, इसके लिए हजार धन्यवाद। लेकिन आज मेरा हुक्म मिल गया, तो कल सुबह ही एक बार वहा जा रहे हो न ?

नही, कल सवेरे मैं घर जा रहा हूँ।

लौटोगे कब ?

दस पद्रह दिन लग सकते हैं महीना भर भी हो सकता है।

महीना भर ! नही नही यह न होगा।—अचानक उसका हाथ खीचकर अपने हाथ मे लेते हुए बोला, न न, मुझे और दोषी मत करो महिम कल सवेरे ही तुम वहा जाओ। वे शायद तुम्हारी राह देख रही हैं। कहते कहते उसका स्वर काँप गया।

महिम के आश्चर्य का हद्दोहिसाब न रहा। सुरेश का हठात् ऐसा आवेग कपित स्वर, ऐसा जबदस्त अनुरोध और खासकर एक ब्राह्म महिला के लिए

यह आदर ! वह विह्वल हो उठा । कुछ देर एकटक अपने दोस्त की ओर देखते रहकर बोला,—कौन मेरी राह देख रही है सुरेश ? केदार बाबू की लड़की ?

सुरेश ने अपने को सम्हालकर कहा—देख भी तो सकती हैं ?

महिम फिर कुछ देर तक सुरेश की ओर देखता रहा । इस बीच व बुलाए ब्राह्मपरिवार में जाकर वह परिचित भी हो आ सकता है, यह भावना उसके मन में उग ही नहीं सकी । थोड़ा देर मौन रहकर वह बोला—भई, मैं हार मानता हूँ । तुम्हारा आज का यह व्यवहार मेरी समझ से परे है । ब्राह्म लड़की राह देख रही है, तुम्हारे मुँह से ऐसी बात का मतलब समझना मेरे लिए असंभव है ।

सुरेश बोला—ठीक है, यह बात कभी बताऊँगा । अभी यह कहो, कल एक बार जा रहे हो वहाँ ?

नहीं । कल गैरमुमकिन है । मुझे सुबह की ही गाड़ी में जाना है ।

कुछ मिनटों के लिए भी नहीं ?

नहीं, यह भी नहीं । मगर तुम्हें हुआ क्या है, यह तो बताओ ?

वह फिर कभी बताऊँगा—आज नहीं । अच्छा मैं जाकर तुम्हारी खबर दे आऊँ ?

महिम और भी हैरान हो गया । बोला—दे आ सकते हो, लेकिन इसकी कोई जरूरत तो नहीं ।

सुरेश बोला—न हो जरूरत—जरूरत ही सब कुछ नहीं है । परिचय देने से वे मुझे पहचानेंगे ?

एक बार तो जरूर पहचानेंगी ।

सुरेश ने कहा—वही काफी है । तुम्हारा मित्र हूँ मैं, यह कहने से पहचान लेंगी तो ?

महिम ने कहा—हाँ ।

सुरेश ने अब जरा हँसने की कोशिश करके कहा—पहचानेंगी एक बार ब्राह्मविद्वेषी बंधु के नाते, न ?

महिम ने कहा—लेकिन यही तो तुम्हारा प्रधान गर्व है सुरेश ?

सुरेश बोला—बेशक । कहकर कुछ काल चुपचाप माटी की तरह ताकता रहा अचानक उठ खड़ा हुआ । बोला—आज मुझे बेहद नींद लग रही है महिम । मैं चला सोने । और वह अनमना सा धीरे धीरे चला गया ।

## ६

मन ही मन सुरेश नि सशय सोच रहा था कि बात का महिम चाहे जैसे टाल जाय, पर वह उसी के अनुरोध के कारण अचला से भेंट करने का नही जा रहा था। प्यार चाहे वह जितना ही करता हो मगर अभी तक एक ब्राह्म लड़की के आगे अपने बाल्य बधु को छोटा नही दिखा सकता—ऐसी बात कल भी सुना होता तो गव से उसकी छाती दस हाथ फूल उठती। सून बिछौने पर शाज लेकिन इस बात ने उसे जरा भी आनद न दिया। उसे केवल यही लगने लगा, किसी न किसी दिन गप शप, हँसी मजाक मे अजीब सी होकर यह बात अचला के कानो पहुचेगी। उस दिन सुख की गोदी म बैठी वह अपने पति के इस निकम्मे मित्र की विफल ईर्ष्या का कोई मतलब ही ढूँढ कर नही पाएगी, लेकिन मजाक म भी वह मितभाषिणी कभी कोई सवाल उससे न पूछ सकेगी। शायद मन ही मन हसकर कहेगी मिताई के अत्यन्त अभिमान से इस आदमी ने नाहक ही कितना परिश्रम किया! झूठी कुढन और जलन से कितना जलता रहा!

रात उसे अच्छी नींद नही आई। जितनी बार नींद खुली उतनी बार ये कड़वी चिंताएँ धिक्कारती हुई कह गई—दूसरे के लिए ऐसे सिर दर्द का रोग तुम्हारा कब छूटेगा सुरेश?

सुबह उठकर वह उस दिन के किसी काम में चित्त न लगा सका और दिन चढ़ते न चढ़ते गाड़ी से केदार बाबू के यहा जा पहुँचा। बैरा ने बताया, बाबू अलीपुर कचहरी गए हैं, लौटने म तीन चार घटे की भी देर हो सकती है। सुरेश लौटने को हुआ। पूछा—दोनो ही निकल गए है?

बैरा समझ न सका। बोला—यह तो मैं नहीं जानता बाबू!

सुरेश मुश्किल म पड गया। मकान मालिक की गैर मौजूदगी म उनकी जवान लडकी के बारे म पूछना पाछना ब्राह्म परिवारो मे शिष्टता के विरुद्ध है या नहीं, वह स्थिर न कर सका लेकिन उसे जरूरत उस लड़की से ही थी। बोला—तुम्हारे मालिक को लौटने म इतनी देर नही भी तो हो सकती है? मैं घटा-आध घटा इतजार ही कर देखूँ।

बैरे ने सुरेश को ले जाकर बैठक म बिठाया। कहा—दीदी जी हैं उन्हें खबर दूँ?—कहकर वह जवाब के लिए ताकता रहा। उसने कल ही देखा था

कि अचला इस भले आदमी के सामने होती है। मन की तीव्र उत्सुकता को जी-जान से दबाते हुए सुरेश ने कहा—उन्हें खबर दोगे ? अच्छा दो, न हो तो तब तक उन्ही से दो एक बातें की जायें।

बेरा चला गया और तुरन्त बगल के दरवाजे का पर्दा हटाकर अचला कमरे म आई। सुरेश उठ खडा हुआ। बोला—महिम तो घर चला गया। मैंने बारहा कहा एक बार आपसे मिल ले, लेकिन नही आया। ऐसा ही कुछ—

अचला का चेहरा पल के लिए सफेद हो गया। मगर नमस्त करके वह पास ही एक कुर्सी पर बैठ गई और धीमे से कहा—जाना शायद बहुत जरूरी होगा, घर म किसी की तबियत तो नही खराब हुई।

नमस्कार करते देख अप्रतिभ होकर सुरेश ने प्रतिनमस्कार किया। और अपनी उत्तेजना से अचला की शान्त-गभीर बातो को तौलकर बेहद शर्मिन्दा हुआ। अपनी आवाज को भरसक सयत और स्वाभाविक करके बोला—जरूरत जो भी हो चाहे, वह ऐसी भयानक भी क्या हो सकती है कि दो मिनट के लिए भी आकर आपसे कह नही जा सकता ? फिर जब यह ठिकाना न हो कि कब लौटेगा—आप ही कहें, घर म ही उनका कौन है, जिसकी बीमारी म उसे इस तरह से जाना पडे ? मैं तो मर जाने पर भी इस तरह से नही जा सकता।

अचला के होठो पर एक लजीली स्निग्ध हँसी खेल गई। बोली—चूकि आपकी अभी कोई हुई नही है, इसलिए आपने ऐसा कहा। होती तो आप भी इसी तरह उपेक्षा करके चल देते, यह मैं जोर देकर कह सकती हूँ।

कुर्सी पर जोरो की एक थाप जमाकर सुरेश ने कहा—हर्गिज नही। आप मुझे पहचानती नही जभी ऐसा कहा, पहचानती, तो नही कह सकती।

अचला बोली—ठीक तो है, अब से पहचान सकूँगी और कोई होगी तो जान भी सकूँगी। क्या ख्याल है ?

सुरेश बोला—अलबत्। हजार बार। इसके सिवाय महिम जैसे मित्र से मैं अपनी कोई बात छिपा भी नही सकता, छिपाना ठीक भी नही समझता, कहकर हठात् उत्तेजित हो बोल उठा—आप कहती हैं, होगी तो जानेगी, मगर मैं कहता हूँ आपको बिना बताए, आपकी राय बिना लिए यह हो ही या नही, क्योकि आपको महिम से अलग करके देखने की मुझ मे अब मजाल नही, आज हमारे लिए आप दोनो अभिन्न हैं।

अचला ने सलज्ज मुखड़ा हिलाकर कहा—अच्छा तब देखा जायगा, लेकिन यह शुभ दिन आने तक मैं आपके मित्र को दोषी नहीं ठहरा सकती सुरेश बाबू !

सुरेश अचानक गम्भीर होकर बोला—यह आपकी मर्जी। पर मुझे आपको या शुभ दिन इस जन्म में आयगा या नहीं, सन्देह है। खैर, छोड़िए उसे। आज सुबह ही आपके यहाँ क्यों हाजिर हुआ, मालूम है? कल रात मैं सो न सका—न आता तो आज भी न सो पाता, यह समझता था। मैंने बहुत अपराध किए हैं—आज एक एक आपके सामने स्वीकार कर जाऊँगा, इसलिए मैं आया हूँ।

सुरेश की जबरदस्त खिलाफत अचला से छिपी न थी। इसीलिए शंकित सी हो यह चुप रहती रही। सुरेश कहने लगा—कल शाम के बाद घर लौटकर देखता हूँ कि महिम बैठा है। हाँ, आप जरूर जानती हैं कि मैं ब्राह्मो या पूरी निगाहों यानी ब्राह्म-समाज को कभी अच्छा नहीं समझता।

*अचला ने सिर हिलाकर कहा—हाँ जानती हूँ।*

सुरेश कहने लगा, क्यों न जानेंगी। परन्तु यह भी न भूलें कि तब मैं आपको पहचानता न था। इसीलिए मैंने महिम से आग्रह किया कि कम से कम एक महीना वह यहाँ न आए। जानती हैं क्यों?

अचला ने फिर सिर हिलाकर कहा—नहीं। मगर शायद आपने यह सोचा था कि पुरुषों को भूलने के लिए एक महीना काफी है। उससे ज्यादा लगना वाजिब नहीं।

सुरेश ने विनीत भाव से इस चोट को ग्रहण कर लिया। कहा, मैं सदा का अबोध हूँ। शायद हो कि मन में ऐसा ही कुछ सोचा हो। इसके सिवा एक खौफनाक साजिश आपके खिलाफ करी थी। मैंने शपथ ली थी कि एक महीने के अन्दर यहीं लड़की ठीक करके मैं महिम का ब्याह करा दूँगा। जैसे भी हो, उसे इससे रोकना है। मेरा मित्र होकर वह एक स्त्री के मोह से समाज को छोड़कर चला जाय, जिससे यह न हो सके।

रुकी साँस छोड़कर अचला ने कहा—फिर?

उसके फीके मुखड़े की ओर देखकर सुरेश जरा मुसकुराया, कहा—उसके बाद डरने की बात नहीं। मैंने वह पाप इच्छा छोड़ दी है, आज आपके सामने यह कबूल करता हूँ। कल रात मैंने आपसे भेंट कर जाने के लिए उससे बड़ा

अनुराध किया। एक दिन मेरा अनुरोध उसने माना था, कल नही माना—आपसे मिले बिना ही वह कलकत्ते से चला गया।

अचला ने पूछा—जाने का कोई कारण बताया था ?

सुरेश बोला—नही। काम है—बस यही।

अचला और एक निश्वास छोडकर मानो आप अपने से कहने लगी, जरूरत और जरूरत ! सदा से उनसे यही सुनती आई हूँ—जरूरत ही सदा उनका सबस है।

सुरेश ने कहा—खत डालकर भी तो आपको बता सकता था। अचला ने सिर हिलाकर कहा—नही। खत वे नही लिखते।

सुरेश ने कुछ देर चुप रहकर नजर उठाकर ताका। बोला—कभी यह भी नही बताता कि कौन-सी जरूरत है। उसका सुख दुःख भला बुरा, सब मानो उसका अकेले का है। स्वार्थी ! कभी किसी का हिस्सा न लेने दिया। इसके लिए छुटपन से वह हम कितना सताता आया है इसका ठिकाना नही। बेरहम ! लगातार उपवास कर करके वह मेरे खाने पहनने को विषाक्त करता रहा है। मगर कभी उसने मेरी खातिर भी मेरे हाथ से कुछ न लिया कभी। मुझे डर है जिस सगदिल से मुझे कभी सुख नही मिला, उसके साथ आप ही क्या सुखी हो सकेंगी ? देखते ही देखते उसकी दोनो आखें आमुओ से झकमका उठी। झटपट पाछ कर जबदस्ती जरा हँसते हुए बोला—मेरा बाहर देखने म बडा सख्त है, लेकिन अन्दर उतना ही दुबल महिम इसका ठीक उलटा है, पर तो भी हम दोनो जैसी मिताई दुनिया मे शायद बहुत कम होगी।

नजर झुकाए अचला न धीमे स कहा—मुझे मालूम है सुरेश बाबू और यह भी जानती हूँ कि वह मिताई आज भी वस ही बनी है।

बचपन की सारी पुरानी स्मृतिया सुरेश के कलेजे मे आलोडित हो उठी। आसू रुँधे स्वर मे बोला—जब मालूम ही है तो आज मुझे यह भीख दें कि अनजान म आप लोगो स जो दुश्मनी मैंने की, वह अपराध अब मेरे कलेजे म न बिंधे।

उसकी आवाज आवेग से फिर रुँध गई और इस अकुलाहट से अचला का हृदय भी मानो डोल उठने लगा। उमडते हुए आसू को छिपाने के लिए मुँह फेरते ही उसने देखा, पिता जी द्वार पर आकर खडे हुए।

सुरेश को देखकर केदार बाबू ने खुश होकर कहा—अरे, सुरेश बाबू !

सुरेश ने खडे होकर नमस्ते किया।

उन्होने खडे खडे ही पूछा—महिम की क्या खबर है ? उसका तोप ताही नहीं।

सुरेश ने कहा—वह बडे जरूरी काम से सुबह की गाडी से घर चला गया। मैं यही कहने आ गया।

केदार बाबू न हैरत मे आकर कहा—घर चला गया ! और अचानक जले भुने से कहने लग, वह घर जाए और रहे, हमे कोइ मतलब नही। मगर तुम बेट समय मिलने पर सा घर के लडके जैसा आया करा। मुझे बडी खुशी होगी, मगर तुम्हारा वह मक्कार मित्र रत्न जिसमे अब कभी अपना मुँह न दिखाए। भेट हो तो कह देना उस हया चाहे न हो, कम से कम अपमान का डर जिसम रहे।

सुरेश गदन झुकाए बैठा रहा। उसके मन के भाव का अनुमान करने की कोशिश करत हुए बाले—नही-नही, इसमे तुम्ह शम महसूस करन की कोई वजह नही। बल्कि कत्तव्य करने का गौरव है। तुम समझ नही पा रहे हो कि तुमने किस बडी मुसीबत से हम बचाया है और हम किस हद तक तुम्हारे कृतज्ञ हैं।

लडकी की आर देखकर बोले—मैं कल स ही हैरान हूँ अचला कि उसन सुरेश जम लडके से कैसे दोस्ती की थी और वह दोस्ती उसने कायम कसे रखी थी। थोडा रुककर बोले—जो यह कर सकता है वह हम जसे दो निरीह जीवा को भुला सकता है यह बडी बात नही—मानता हूँ मैं मगर यह भी गजब ही है कि वह कैसा आदमी है, क्या है—मेरे जसे प्रवीण आदमी ने भी कभी खोज पूछ की जरूरत महसूस न की।

सुरेश बाला नही। वह सिर उठाकर केदार बाबू की तरफ ताक भी न सका।

जरा देर इतजार करके अपनी पुशाक की ओर देखकर केदार बाबू ने कहा—मुझे बहुत-सी बाते पूछनी हैं बेट, तुम जरा बैठो। मैं कपडे बदल आऊँ। कहकर वे जाने लग कि सुरेश ने कहा—मुझे देर हो चुकी है। आज मैं चलू फिर कभी आऊगा। वह व्यस्त होकर उठ खडा हुआ और किसी तरह नमस्कार करके निकल पडा।

लेकिन दूसर ही दिन वह वहा दिखाइ पडा और उसके दूसरे दिन भी ठीक उसी समय उसकी गाडी की आवाज नीचे आकर थमी।

लेकिन उसके बाद वाले भी दिन जब उसकी गाडी की आवाज सुनाई पडी तो वेला हा चुकी थी। नहाने खाने के लिए पिता का तकाजा करके अचला उठाना चाह रही थी—मगर वे उठ न सके। सुरेश का विठाकर वे गप करने लग।

सुरेश यह गौर कर रहा था, इसलिए मुख्तसर दो एक बात करके ही वह उठने लगा। इतने में उसके सिर के रूखे-सूखे बालो को देखकर केदार बाबू अचानक परेशान हो उठे। बोले—तुम्हारा तो नहाना खाना भी नहीं हुआ है बेटे।

सुरेश ने हँसकर कहा—जी मेरा नहाना खाना जरा देर से ही होता है।

केदार बाबू ने उसे सुना ही नहीं मानो, बोल उठे और पल ही मे एकबारगी व्यस्त हो उठे—ऐं, नहाना खाना नही हुआ न, अब एक मिनट भी देर न करो। यही नहाकर जो बने, खा लो। बिटिया, जरा जल्दी करो, बारह बज गए। और बैरा आदि के नाम चीख-पुकार करते हुए वे निकल गए।

अचला अब तक स्थिर खडी थी। अब भी उसमे किसी तरह की चचलता नही दीखी। पिता के चले जाने के बाद धीरे से पूछा—आप हमारे यहा कुछ खा सकेंगे?

सुरेश ने सिर उठाकर अचला की ओर देखते रहने के बाद कहा—आपकी क्या राय है?

आप तो कभी ब्राह्म के यहाँ खाते नही।

नही, नही खाता। मगर आप लाएँगी, तो खालूगा। जरा ठहरकर बोला, शायद आप सोच रही हैं, मैं मजाक कर रहा हूँ। मगर नही। आप देंगी तो मै सच को ही खाऊँगा। कहकर वह देखने लगा।

अचला ने मुँह फुकाकर अपनी हँसी छिपाई। बोली—मैंने सच ही सोचा था कि आप मजाक कर रहे हैं। कल तक जिनके घर जाने मे भी आपकी घृणा का अत नही था, आज ही उन्ही मे से एक के हाथ का छुआ खाने की प्रवृत्ति आपको कैसे होगी, मैं तो सोच ही नही पाती। सुरेश बाबू!

सुरेश ने मलिन मुख और दुखे स्वर मे कहा—आखिर इतनी देर के बाद आप ने यही निश्चय निकाला कि आपके हाथ का खाने मे मुझे घृणा होगी!

अचला ने कहा—लेकिन यही सोचना तो स्वाभाविक है सुरेश बाबू? आप जैसे एक उच्च शिक्षित सज्जन की सदा की बँधी सामाजिक धारणा एकाएक एक ही दिन मे अकारण ही बह जायगी, यही सोचना क्या सहज है?

सुरेश ने कहा—नही वह सहज नही। मगर अकारण कही नही है—यही कैसे सोच रही हैं? कारण हो भी सकता है—कहकर वह इस तरह से देखता रह गया कि उत्तर देने मे अचला बिल्कुल हैरान रह गई। उसकी बात से उम

चोट लगी है, यह तो उसकी शक्ल देखकर ही वह समझ गई थी और
तरह का हिंसक आनंद भी उठा रही थी। लेकिन वह पीडा अचानक उ
चेहरे को एक बार ही राख सा रूखा कर दे सकती है यह उसने सोचा
नहीं था, इच्छा भी न की थी। इसीलिए खुद भी पीडित होकर जबदस्ती ज
हँसकर बोली—सोच देखिए आप जैसे कठोर-प्रतिज्ञ आदमी भी—।

सुरेश काला हो वह जाता है। उसका स्वर कांपने लगा। बोला, अ
एक दिन की बात कही—मगर पता है आपका एक दिन के भूकम्प में आ
दुनिया पाताल में डूब सकती है? एक दिन कम नहीं होता। कहकर
फिर एकटक रखता रहा। अचला डर गई। सुरेश के चेहरे पर कैसी एक सू
पांडुरता—कपाल की दोनों नसें लहू से फूली, आँखें दम दम कर रही हैं—
वह झपटटा मारकर किसी चीज को पकडना चाहता हो।

एक तो गर्मी तिस पर इतनी देर तक नहाना खाना नहीं हुआ—पिछ
रात बिलकुल नींद नहीं आई—उसके पांव के नीचे की जमीन तक अकस्म
मानो हिल उठी। सुख आँखों को फाडकर वह बोला—ब्राह्मो से घृणा करता
या नहीं, यह जवाब ब्राह्मो को दूंगा। लेकिन आप मेरे आगे उनसे बहुत ऊपर हैं-

उसकी उन्माद भंगिमा से अचला डर के मारे काठ हो गई। किसी त
इस प्रसङ्ग को दबा देने की नीयत से वह डरी सी कहने गई—कबख्त बरा—

लेकिन वह अस्फुट धीमी आवाज सुरेश की रोष भरी ऊँची आवाज
दब गई। वह कम ही तीव्र स्वर में कहने लगा—महज दो दिनों का परिचय
बेशक! मगर जानती हैं दिन, घंटा मिनट में महिम को मापा जा सकता
सुरेश को नहीं वह स्थान काल से परे है। भूमिकम्प देखा है? जो पृथ्वी
ग्रास करता है—

व्याघ्र से डरी हुई हिरनी सी अचला पलक मारते उठ खडी हुई औ
बोली—आपके नहाने का बंदोबस्त—कहकर कदम बढाते ही सुरेश ने सहर
आगे झुककर अचला का हाथ खींच लिया। वह उत्तेजित और आकस्मि
खिंचाव सह लेना औरत के बस का नहीं। वह सुरेश के बदन पर औंधी
गिरी। भय और विस्मय को पार कर उसके आर्त्तकण्ठ की 'बाप रे!' आवा
काँपते होठों से निकलते न निकलते सुरेश उसके दोनों हाथों को अपनी छाती
खींचकर पुकार उठा—अचला!

अचला आखें उठाए मूर्छित मन्त्र मुग्ध की भांति देखती रही और सुरेश भी जरा देर के लिए कुछ न बोल सका—सिर्फ उसके बेहद जलते होठों से कसी तो एक तीखी जलन छिटकती रही।

कुछ क्षण इसी तरह से रहकर सुरेश ने फिर एक बार अचला के दोनों हाथों को छाती से दबा उच्छ्वसित होकर कहा, अचला एक बार इस भूकम्प की भयानक धड़कन को अपने हाथों से अनुभव करके देखो—देखो, कैसा भीषण ताण्डव इस कलेजे के अन्दर हो रहा है। यह दुनिया के किसी भूकम्प से छोटा है? कह सकती हो, संसार की कौन जात कौन धर्म, कौन सा मत है जो इस विप्लव में पड़कर भी रसातल में न डूब जायगा।

छोड़ दीजिए, पिताजी आ रहे हैं—कहकर जबरदस्ती अपने को छुड़ाकर वह अपनी कुर्सी पर जाकर शान्त होकर बैठी कि केदार बाबू अन्दर होकर परेशान से बोले—देर हो गई थोड़ी—और यह कम्बख्त बैरा जो रह-रह कर कहां गायब हो जाता है पता नहीं। बेटी अचला—अरे यह क्या तबीयत खराब है? मुंह सूखकर एकबारगी जैसे—

किसी तरह जरा हँसने की कोशिश करके बोली, तबियत क्यों खराब होगी?

फिर भी सर दर्द? जैसी गर्मी पड़ी है—

नहीं-नहीं मैं ठीक हूं। मुझे कुछ नहीं हुआ है।

केदार बाबू निश्चित होकर बोले—गनीमत है। चेहरा देखकर मैं डर गया था। तो तुम जरा देखो तो बिटिया, अगर—

ठीक तो है, मैं मिटा में सब ठीक कर लेती हूं। मैं सुरेश बाबू से वही तो कह रही थी कि हमारे यहां नहाने खाने में इन्हें एतराज तो नहीं।

केदार बाबू ने अचरज से पूछा—एतराज क्या होगा? नहीं, नहीं मैं तो तुम से कही चुका सुरेश, एक दिन में मैंने तुम्हें घर के लड़के सा समझ लिया है। घर तुम्हारा है। बेटी की ओर देखकर नाज के साथ बोले—ऐसा न होता बेटी तो भगवान इन्हें हमारे ब्राह्म को भेजते ही क्यों? लेकिन अब देर करना ठीक न होगा बेटे, मेरे साथ आओ, तुम्हें नहान घर दिखा दूं।

लेकिन केदार बाबू के आते ही सुरेश ने जो सर झुका लिया था, सो सीधा न कर सका।

अचला ने कहा—तंग करने से क्या लाभ बाबू जी? हो सकता है, हम

आह्मा में यहा खाने मे उन्हें झिझक हो फिर अरुचि से खाने पर तबीयत खराब हो सकती है।

केदार बाबू मायूस हो गए। सुरेश बडे आदमी का लडका ठहरा—आजाद। घर की गाडी पर चलता। उसे खिला-पिला कर जैसे भी हो, अपना बनाना ही है, अचानक उसके झुके मुखडे के एक ओर नजर पडते ही केदार बाबू अचरज से चौंक उठे—एँ! यह क्या सुरेश! चेहरा स्याह हो गया है। उठो उठो, सिर धाने मे अब जरा भी देर न करो। और वे हाथ पकडकर जबदस्ती उसे लिवा गए।

## ७

खा पी चुकने के बाद केदार बाबू ने धूप में सुरेश को हर्गिज नही जाने दिया। आराम के नाम पर तमाम दोपहर उसे एक कमरे मे कद रक्खा। वह आँखें बन्द किए एक कौच पर पडा रहा, पर किसी भी तरह सो नही सका। बाहर आसमान मे दोपहर का सूरज जलने लगा अन्दर आत्म सयम की ग्लानि उससे भी ज्यादा तेज सुरेश की छाती म जलने लगी। इस तरह सारी दोपहरी बाहर भीतर से जल झुलस कर अधमरा सा हो उसने उठकर खिडकी खोली, तो बेला झुक आई थी। केदार बाबू प्रसन्न मन से अन्दर आकर विश्वास छोडते हुए बोले—आ गर्मी देख रहे हो सुरेश। अपनी इतनी उम्र म मैंने कलकत्ते म ऐसी गर्मी कभी नही देखी। नीद वीद आई?

सुरेश ने कहा—नही, दिन की मुझे नीद नही आती।

केदार बाबू ने छूटते ही कहा—और सोना ठीक भी नही। सेहत को बडा ही नुक्सान होता है। मैंने फिर भी तीन चार बार उठ उठकर देखा कि पखा वाला खीच भी रहा है या नही। ये कम्बख्त ऐसे शैतान होते है कि इधर तुम्हारी आख लगी और उधर उन्होंने भी झपकी ली बस, कुछ आराम तो मिला न? मैं खूब समझ रहा था कि इस धूप म निकलोगे तो जिन्दा न रहोगे।

सुरेश चुप रहा। केदार बाबू ने एक एक करके कमरे की खिडकियां खोल दी, कुर्सी को करीब खीचते हुए बोले—मैं क्या सोच रहा हूँ सुरेश झाँप

सौंप की जरूरत नही। सारी बातें खोलकर महिम को साफ साफ एक खत लिख दूँ। तुम क्या कहते हो।

यह सवाल सुरेश की पीठ पर चाबुक सा लगा। वह ऐसा चौंक उठा कि देखकर केदार बाबू बोले—कठोर कर्तव्य कैसे करना होता है, यह तो इतने दिनो के बाद तुमने ही हमे बताया, अब पीछे लौटने से तो नही चल सकता बेटे।

यह तो ठीक है। सुरेश कुछ देर मौन रहकर बोला—लेकिन इस पर आपको अपनी लडकी की भी राय ले लेनी चाहिए।

केदार बाबू जरा हँसकर बोले—हाँ सो तो चाहिए।

वे क्या साफ साफ लिख देने को ही कहती हैं?

केदार बाबू ने इसका सीधा जवाब न देकर कहा, हाँ करीब-करीब वही कहिए ऐसे मामलो मे आमने सामने सवाल जवाब करना सबके लिए कष्टकर होता है। लेकिन वह तो सयानी है बदस्तूर पढी लिखी है, इन बातो पर पहले ही साफ-साफ सोच नही लेने से यह पागलपन कहा जा सकता है, वह समझती है। सोचता हूँ, आज रात यह काम कर ही लूँगा।

सुरेश ने फीका हँसकर कहा, इतनी जल्दी क्या? थोडा सोच लेना भी जरूरी है।

केदार बाबू ने कहा—इसमे सोचने की कहा गुंजाइश है? उसके हाथो अपनी लडकी को सौंप न सकूँगा, यह तै है—फिर इस घिनौने व्यापार का जितना जल्दी अंत हो, उतना ही कल्याण।

सुरेश ने पूछा मेरा जिक्र करना भी जरूरी है।

केदार बाबू ने हँसकर कहा—बुड्ढा हो गया, सोचते हो, इतनी भी अक्ल नही, तुम्हारा नाम कोई कभी न लेगा।

सुरेश ने जैसे चैन की सास ली, पर बोला नही, चुप रहा। यह साँस केदार बाबू की निगाह से न बच सकी। इस बीच सुरेश के और कुछ आचरण को गौर करके मन मे एक निश्चित अनुमान कर लिया था। उसके झूठ-सच की कसौटी के लिए उन्होने अँधेरे मे एक ढेला फेंका। बोले, तुमने एक तो हम लोगो का बडा उपकार किया बेटे, मगर उससे भी बडे उपकार की तुमसे हमे उम्मीद है। हम ब्राह्म हैं जरूर पर वैसे ब्राह्म नही। और मेरी बिटिया तो मन ही मन

अपनी माँ जैसी हिन्दू ही रह गई है। वह हमारी ब्राह्मपना बिल्कुल पसन्द नहीं करती।

सुरेश ने अचरज से आँखें उठाकर देखा। उसकी इस मौन उत्सुकता को खास तौर से देखकर केदार बाबू कहने लगे—अभी मैं बिटिया को सदा कुमारी नहीं रख सकता। इस विषय में मैं तुम लोगों जैसा हिन्दू मतावलम्बी हूँ। सो एक रिश्ता जिस प्रकार तुम्हारा चलते टूटा उसी प्रकार एक दूसरा रिश्ता तुम्हें जोड़ देना होगा बेटे।

सुरेश ने कहा—ठीक है। मैं जी जान से कोशिश करूँगा।

उसके चेहरे के भाव को पढ़ते पढ़ते केदार बाबू ने सदिग्ध स्वर में कहा—मैं समझ रहा हूँ, समाज में इसके लिए काफी हलचल होगी। लेकिन जितनी जल्दी हो सके अचला की शादी करके इस हलचल को दबा देना है। लेकिन एक सख्त-सी बात है सुरेश! इतना कहकर उन्होंने दरवाजे की तरफ देखा और करीब खिसक कर अपनी आवाज धीमी करके बोले—सख्त बात यह है कि रूप गुण में लड़का ठीक भी हो तो हिन्दू समाज की तरह उसे पकड़ कर ला दूँ यह नहीं। वह सदा से जिस शिक्षा संस्कार में पली है कि उसकी राय के बिना कुछ हो सकना मुश्किल है और मत वह दे नहीं सकती। जबतक दोनों में ऐसा कुछ—समझ गए न सुरेश?

बातों में सुरेश कुछ अनमना सा हो गया था। प्रेम के इस इशारे ने मानो फिर नए सिरे से आघात पहुँचा कर उसे अचेतन कर दिया। दोपहर में अपने उस उच्छृङ्खल प्रेम निवेदन भद्दे आचरण की याद करके वेदना शर्म से उसका मुखड़ा लाल होने के बजाय काला पड़ गया। और सुबह का जो अखबार पावों के पास नीचे पड़ा था उसे उठाकर वह विज्ञापन वाला पृष्ठ देखने लगा।

केदार बाबू ने यह हरकत देखी और इस आकस्मिक भाव परिवर्तन का बिल्कुल उल्टा मतलब लगाकर मन ही मन बहुत खुश हुए। अच्छा मौका देखकर खाँसी शुरू लगा दी एक। कहा—मैं यह एक अजीब बात शुरू से देखता आया हूँ सुरेश को पता नहीं क्या, किसी को जीवन भर के लिए पास पाकर भी उस पर रत्ती भर विश्वास नहीं होता और किसी को महज दो घण्टे के लिए भी करीब पाकर लगता है, इसके हाथों अपनी जान तक सौंपी जा सकती

है। लगता है सिर्फ दो घण्टे की नहीं, जन्म जन्म की जान पहचान है। जैसे तुम ! कितनी देर का परिचय है तुम से ?

ठीक उसी समय अचला वहाँ आई। सुरेश ने लहमे के लिए नजर उठाई और फिर अखबार में ध्यान दिया।

बाबू जी, आप इस समय चाय पियेंगे या कोको ?

मैं कोको ही लूंगा बेटी।

सुरेश बाबू आप तो चाय लेंगे न ?

आँखें अखबार पर ही गडाए रखकर सुरेश ने धीमे से कहा—मुझे चाय ही दीजिये।

आपके प्याले में चीनी कम तो नहीं लगेगी ?

नहीं जितनी आमतौर से सब को लगती है उतनी ही।

अचला चली गई। केदार बाबू ने बातों के टूटे छोर को जोडकर कहा—यही समझो न सुरेश अपनी इस बिटिया के लिए ही इस बुढ़ापे में मुझे मुसीबत में पडना पडा। यह बात तो तुमसे छिपा नहीं सका। वरना अपनी आफत मुसीबत की कहानी भी कोई किसी के कानों तक जाने देता है ? जो मुझसे कभी न बना इतने हित मित्रों के होते यह बात सिर्फ तुम्हीं को कहते क्या हिचक नहीं हो रही है ? क्या समझते हो कि इसका कोई गूढ कारण नहीं है ?

सुरेश ने अचरज से नजर उठाई और देखता रहा। केदार बाबू कहने लगे—यह ईश्वर का निर्देश है—मेरी क्या मजाल कि छिपाऊँ। मानना ही पडेगा। कहकर उन्होंने कुर्सी पर एक चपत जमाई।

लेकिन उनकी इस लम्बी भूमिका के बाद भी बेटी के लिए उनकी आफत मुसीबत किस हद को पहुँची, सुरेश इसका अन्दाजा न कर सका। इसके बाद केदार बाबू विस्तार से वर्णन करने लगे कि कैसे उनके आर्डर सप्लाई का उतना बडा कारोबार महज धोखा और कृतघ्नता की आग में जलकर राख हो गया। फिर भी अडिग धीरज से वे खडे रहे तथा खर्च कर्ज बढते जाने पर भी बेटी को पढाने लिखाने के खर्च में कभी कटौती नहीं की। वे कहने लगे—कुछ डिग्री जारी के डर से मेरा खान पान जहरीला हो गया और खुदरा महाजनों के तकाजों के मारे जीना मुहाल, तो भी मैंने मुँह खोलकर किसी से कुछ न कहा,

क्योंकि यहीं कलकत्ते में ही अपने एक ऐसे बहुत से दोस्त पड़े हैं जो बात की बात में ये बकाया चुका सकते हैं।

जरा देर थमकर जाने क्या तो सोचा और कह उठे—मगर तुम्हें जो बताया इसमें मुझे जरा भी सकुचाहट न हुई। यह क्या ईश्वर का स्पष्ट आदेश नहीं है? कहते हुए उन्होंने दोनों हाथ कपाल से लगाकर प्रणाम किया।

सुरेश का भगवान पर विश्वास न था। उसने वृद्ध के इस उच्छवास में साथ नहीं दिया, बल्कि उसका मन कैसा तो छोटा हो गया। धीरे होकर पूछा—कितना कर्ज है आप को?

केदार बाबू ने कहा—कर्ज? मेरा कारोबार चलता होता तो यह भी कोई कर्ज था! बहुत तो तीन चार हजार। वे और भी कुछ कहने जा रहे थे कि बैरा के साथ चाय और खुद ही जलपान का सरजाम लिए अचला आई।

गर्म कोको का एक घूँट लेकर खुशी की एक अव्यक्त सी आवाज करते हुए प्याले को मेज पर रखते हुए बोल उठे। अपने ऊपर भगवान की यह अनोखी कृपा मैं शुरू से देखता आया हूँ कि वे मुझको कभी बदकिस्मती में नहीं पड़ने देते। अब मैंने यह समझा कि कहूँ-कहूँ करते हुए भी महिम से मैं यह कह क्यों नहीं पाता था—मानो वे बार बार मेरी जबान को दबा दिया करते थे।

सुरेश ने प्याले पर नजर रखकर कहा—आप को ये रुपये कब चाहिए?

केदार बाबू ने फिर कोको का प्याला मेज पर रखते हुए कहा—जरूरत दर-असल मुझे नहीं सुरेश। तुम लोगों का है। और वे जरा ऊँची किस्म की हँसी हँसे। इस पहेली को समझ नहीं पाकर सुरेश ने मुँह उठाकर देखा, देखा कि अचला जिज्ञासु सी अपने पिता की ओर ताक रही है। उन्होंने एक बार बेटी को, एक बार सुरेश को देखकर कहा—इसका मतलब समझना कुछ कठिन तो नहीं। आखिर इस घर को मैं अपने साथ तो ले नहीं जाऊँगा। यह अगर गया, तो तुम्हारा ही जायगा और रहा तो तुम्हीं दोनों का रहेगा। कहकर वे धीरे धीरे हँसने लगे।

उन दोनों की आँखें मिल गईं और पल में दोनों ने लाली दौड़ आए मुँह को झुका लिया।

कोको के दो प्याले खत्म कर लेने के बाद केदार बाबू को एक जरूरी चिट्ठी लिखने की याद हो आई। वे तुरन्त खड़े हो गए। बोले—आज तुम्हें खाने की

बडी तकलीफ हो गई सुरेश, कल दोपहर को यहा खाना। इस तरह न्योता देकर पच्छिम की तरफ का दरवाजा खोल कर वे अपने कमरे मे चले गए।

खुले दरवाजे मे डूबत हुए सूरज की लाल आभा सुरेश के चेहरे पर आकर पडी। गदन फेरकर उसने देखा अचला एकटक उसको देख रही है—उसने भी नजर झुका ली। घडी की टकटकी के सिवाय सारा कमरा सनाटा।

## ८

घर के मौन को मोडत हुए सुरेश ने कहा—एकाएक एक अजीब हरकत कर बैठा।

अचला कुछ बोली नही।

सुरेश ने फिर कहा—मैं आपको जरूर एक राक्षस सा लग रहा हूँ। लगता है, अकेले बठने की हिम्मत नही हो रही है आपको। है न ? और वह खीच खीच कर हँसने लगा। अचला ने अब भी सिर नही उठाया। लेकिन कही उठाती तो देख पाती कि सुरेश की वह कोशिश करके हँसी गई विफल हँसी उसके अपने ही मुखडे को बार बार अपमानित करके शम से विकृत बना रही है।

सारे कमरे मे फिर सनाटा छा गया और दीवाल घडी की टिकटिक ही स्तब्धा को मापती रही। कुछ दर मे यह कठोर नीरवता जब असह्य हो उठी तो अपनी सारी देह की ऋजु और कडी करके सुरेश ने कहा—देखिए जो वार-दात हो गई उसके बाद अब आखो की शम की गुंजाइश नही। बेला जाती रही, अत मे जाऊँगा। पर जान से पहले दो एक बातो का जवाब सुन जाना चाहता हूँ। देंगी आप ?

अचला ने सिर उठाया। आँखें उसकी पीडा से भरी। बोली—कहिए।

सुरेश कुछ क्षण स्थिर रहकर बोला आपके पिताजी का कज चुका देने के लिए कल परसों कभी आऊँगा। लेकिन जरूरी नही कि आपसे भेंट हो। यह मैं जानना चाहता हूँ कि हम दोनो के बारे मे उनका इरादा क्या है यह आप जानती हैं ?

अचला बोली—वे साफ मुझ से कुछ नही बताते।

सुरेश बोला—मुझसे भी नहीं। फिर भी मुझे यकीन है मुझ का—मगर आप शायद राजी न होंगी ?

अचला ने कहा—नहीं।

कभी नहीं ?

अचला ने नजर झुकाकर कहा—नहीं

लेकिन महिम की उम्मीद न रहे, तो ?

अचला ने अविचलित स्वर से कहा—इसकी उम्मीद तो नहीं ही है।

सुरेश ने पूछा—शायद तो भी नहीं ?

अचला ने मुंह नहीं उठाया, लेकिन वैसे ही शान्त और दृढ कण्ठ से कहा—नहीं, तो भी नहीं।

सुरेश कोच पर लुढ़क गया और निश्वास छोड़ कर बोला—खैर, इस ओर तो साफ हो गया। जान में जान आई। कहकर कुछ देर चुप रहा और फिर सीधा बैठकर बोला—लेकिन मैं इस मुश्किल को सोच रहा हूँ कि फिर आपके पिता जी का कर्ज कैसे चुकेगा ?

अचला ने डरते हुए से जरा सिर उठाकर बड़े ही संकोच के साथ कहा—अब तो आप दे नहीं सकेंगे ?

नहीं दे सकूँगा ? क्यों ? सवाल करके सुरेश तीखी व्याकुल दृष्टि से देखता रहा। उत्तर का कुछ देर इन्तजार करके हँसा। लेकिन अबकी उसकी हँसी में खुशी न हो, बनावट भी न थी। बोला—देखिए परिचय की घड़ी से ही मेरे जो रवैये रहे उन्हें, भद्र तो नहीं कहा जा सकता, यह मैं भी जानता हूँ, मगर मैं उतना गिरा हुआ भी नहीं हूँ। आपके पिताजी को मैंने रुपए घूस में नहीं देना चाहा था, मुसीबत में मदद के रूप में ही देना चाहा था। लिहाजा देना आपकी राय पर निर्भर नहीं करता। वह निर्भर करता है उनके लेने पर ! अब वे रुपए लेंगे कैसे, मैं यही सोच रहा हूँ ! बल्कि आइए इस पर हम जरा राय-विचार कर लें।

अचला ने कहा—कहिए।

सुरेश ने कहा—देवकृपा से बहुत बहुत रुपए का मालिक हूँ मैं। और रुपए पैसे पर कभी मुझे किसी तरह का मोह नहीं रहा है। हजार चारेक रुपए मैं मजे से दे सकता हूँ। और आपके सुख के लिए तो ज्यादा भी गवा सकता हूँ।

खैर ! आपके पिताजी का ख्याल है कि इन रुपयों को चुकाने की जरूरत न होगी। जो कि एक तरह से यह चुकाना ही होगा ! समझ गईं ?

सिर हिलाकर अचला ने अस्फुट स्वर में कहा—जी।

सुरेश ने कहा—मैं साफ कर रहा हूँ, मेरी साफगोई का अन्यथा न समझें। खूब समझ रहा हूँ कि रुपया की उन्हें सख्त जरूरत है, मगर इतने रुपए चुकाने की उनकी अवस्था नहीं है। गरचे,मेरी तरफ से कोई जरूरत भी नहीं—अच्छा, यह तो आसानी से हो सकता है। परसों तक आप अपना इरादा उन पर जाहिर न करें तो कोई गड़बड़ी न रहे। क्या, बनेगा आपसे यह ?

अचला उसी तरह सिर झुकाए बैठी रही। सुरेश ने कहा—आपने रुपया के लोभ में राय नहीं दी, इससे मेरी श्रद्धा और भी बढ़ गई। बल्कि आप राजी हो गई होतीं तभी शायद मैं डर से पीछे हट जाता। मेरे लिए असम्भव कुछ भी नहीं। मैं चला। सुरेश हँसते हुए खड़ा होकर बोला—कहने को अपना मुँह नहीं रहा। तो भी जाने की घड़ी में आपसे एक भीख माँगता हूँ, मेरे अपराधों को आप याद न रक्खें। जरा आगा पीछा करके बोला—नमस्ते। बुराई से जहाज लादकर मैं चला, मगर मैं पिशाच भी नहीं। खैर, एतबार करने का जब कोई उपाय नहीं रहने दिया तो अभी कहना बेकार है। और दोनों हाथ उठाकर नमस्कार करके वह तेजी से निकल गया।

धीरे धीरे उसके पैरों की आहट सीढ़ियों पर खो गई। अचला ने उसे सुना और फिर अकारण ही उसकी आँखों से टपाटप आँसू की बूँदें चूने लगीं।

अंदर आते हुए केदार बाबू ने पूछा—सुरेश ?

अचला ने झट आँसू पोंछकर कहा—अभी अभी चले गए।

केदार बाबू ने चकित होकर कहा—अच्छा मुझसे मिले बिना ही चला गया। जाते वक्त तुमने कल यहाँ आने की बात याद दिला दी थी ?

अप्रतिभ होकर अचला ने कहा—मुझे याद नहीं रहा पिताजी।

याद नहीं रहा ! खूब ! कहकर केदार बाबू पास की चौकी पर निश्चेष्ट भाव से बैठ गए। बेटी की दबी आवाज से उनके मन में खटका सा हुआ, लेकिन साँझ के धुंधलके में चेहरा देख न पाने के कारण वह टिकाऊ न हुआ। बोले—इस बुढ़ापे में जो काम खुद न करूँ, जिधर खुद नजर न रक्खूँ, वही नहीं

हागा। उसी मे कोई न काई भूल रह जायगी। चलूँ, घर के हाथो तुरन्त उसे लिख भेजू । उसके घर का पता क्या है ?

पता तो मुझे नही मालूम बाबूजी ?

यह भी नही मालूम ? अच्छा ! केदारबाबू फिर कुर्सी पर बैठ गए। लेकिन तुरत रुखाई से बोल उठे—अपन हाथ पाय तुम खुद काट डालना चाहती हो, तो काटो मुझे रोकने की नही पडी। इतना तो कम से कम सोचना चाहिए कि जो एक बात पर इतने इतन रुपए देने को तयार हो गया वह आदमी किस किस्म का है ? उसका पता भी नही पूछ रखना चाहिए ? तुम जस जैस बडी हो रही हो वसी तो हुई जा रही हो अचला कहकर उन्हान एक लम्बा निश्वास छाडा।

कज क जाल म फँसे पिता जिस झूठ और हीनता से बहरहाल आत्म रक्षा की कोशिश कर रह थ अचला वह सब देख रही थी। उनस उसके मन को चोट पहुँचती पर वह सब चुपचाप सहा करती। अभी भी कोई जवाब देकर उसने खीझ का कोई प्रतिवाद नही किया। लेकिन मन म यही कल्पना करके केदार बाबू को राहत मिली कि वह लज्जित और पीडित हुई।

बरा बत्ती जलाकर दे गया। उन्हाने स्नह की झिडकी देकर कहा—तुमने महिम की कभी खोज पूछ भी न की। खैर न ली, अच्छा ही किया। भगवान् जो करते है भले के लिए करत है। मगर सुरेश के बार म तो यह लागू नही हो सकता। देखा नही मानो ईश्वर हाथ पकड कर स्वय इसे पहुँचा गए।

अचला ने पूछा—आप क्या सुरेश बाबू स रुपए कज लेंगे ?

केदार बाबू की भगवद्-भक्ति अचानक बाधा पाकर विचलित हो उठी। बेटी की ओर दखकर बोले—हा,—ना कज ठीक नही तब जानती हो बेटी, बात क्या है कि सुरेश बडा भला ह आज दिन ऐसा भला लडका लाखो मे कही एक मिलता है। उसकी भीतरी इच्छा है कि कज के चलते यह मकान न बेहाथ हो जाय। रहगा तो तुम्ही लोगो का रहगा मैं अब क दिन को हूँ, समझा ?

अचला चुप रही। केदार बाबू उत्साहित हो बाल उठे—तुम तो जानती हो, मैं सदा साफ बात पसन्द करता हूँ। अन्दर और मुँह म और, यह मुझसे नही होने का। इसीलिए खोलकर कह दिया कि अब सब जान सुनकर महिम के हाथो तुम्हें सौपने स पानी म फेंकना बेहतर है। सुरेश की भी जब यही राय

है, तब कहना ही पड़ेगा कि उसके दोस्त से तुम्हारी शादी की बात दूर तक फल चुकी है ऐसे में रिश्ता तोड़ने से ही न चलेगा, नया ठीक भी करना होगा, नहीं तो समाज मे मुँह दिखाना मुश्किल होगा। किंतु जो कहो, लड़का है सुरेश ! मैं मंगलमय को इसीलिए बार-बार प्रणाम करता।

पिता का प्रणाम करना फिर जब निर्विघ्न सम्पन्न हो गया, तो अचला ने धीरे धीरे कहा—इनसे इतना रुपया न लें तो क्या न चले बाबूजी ?

केदार बाबू शका से चौंक उठे। बोले—लिए बिना चलन का जो नहीं बेटी ! अच्छा ?

मगर हम चुका जो नहीं सकेंगे।

चुकाने की बात क्या सुरेश—उद्विग्न आशका से वृद्ध बात को खत्म ही न कर सके। उनका समूचा चेहरा सफेद हो गया। उनकी यह शक्ल देखकर अचला को तकलीफ हुई। झट बोली, वे कह रहे थे, परसों आकर वे रुपए दे जाएँगे।

चुकाने की बात—

नहीं, यह उन्होंने नहीं कहा।

लिखा पढ़ी—

नहीं, इसका शायद उन्हें बिलकुल इरादा नहीं।

यही बात ! कहकर तृप्ति की रुँधी सास झट फेंककर वे कुर्सी पर लेटे-से बैठे और आँखें बन्द करके दोनों पैर सामने की मेज पर रख दिए। आनन्द और आराम से उनका सर्वाङ्ग मानो कुछ देर के लिए शिथिल हो गया। कुछ देर उसी तरह से रह फिर पैर नीचे उतार कर दमन्त स्वर मे बोले, अब मान तो देखो बेटी, कहाँ से क्या हुआ ? इसमें उस सर्व-शक्तिमान का हाथ क्या साफ नहीं देख रही हो ? अचला चुपचाप पिता के मुँह की ओर ताकती रही। जवाब का इंतजार न करके ही बोले, मैं साफ देख पा रहा हूँ, यह केवल उनकी दया है। तुम से बताऊँ क्या बिटिया, ये दो साल मैं एक भी रात ठीक से सो नहीं सका हूँ। केवल उन्हीं को पुकारता रहा हूँ, और सुरेश का देखते ही लगा, यह मानो मेरे उस जन्म की संतान है।

अचला चुप बैठी रही। पिता की गिरी हुई आर्थिक दशा वह अब जानती थी, लेकिन अन्दर-अन्दर वह इस हद तक पहुँच चुकी थी, यह नहीं मालूम था। दो साल की एकान्त प्रार्थना से मंगल मय की कृपा हुई भी और अचानक वह

समस्या हल भी हुई तो उसी का अपना मसला बडा पेचीदा हो गया। सुरेश ने रुपया लेने के बारे म अभी-अभी उसने जो सकल्प किया था , उस सकल्प को छोडना पडा। इसमें जरा भी बाधा देने की बात वह सोच नही सकी। जो भी हो रुपया लना ही पडेगा।

केदार बाबू सध्यापासना के लिए चले गए। अचला शुरू से अन्त तक सारी घटनाओ को दुहरा कर उपलब्धि के लिए वही बठी रह गई।

उमक जीवन के सधिस्थल पर जो मित्र अगल बगल आकर खडे हैं, उनम से एक का तो 'जाओ कहकर विदाई देनी ही पडेगी, इसम एक तिल भी सन्देह नही , मगर किसे ? कौन है वह ? जा महिम उसके नि सन्देह विश्वास पर पता नही किस कर्त्तव्य की पुकार से, निश्चिन्त बेखटके बैठा है, उसका शांत मुखडा याद करते ही अचला की आखें भर आइ। जिसने कभी कोई अपराध नहीं किया, फिर भी जाना कहते ही वह चुपचाप चला जायगा। इसी जिन्दगी म किसी भी बहान किसी भा नात वह कभी उनके पथ मे नही आएगा। अचला का स्पष्ट दिखाई पडने लगा कि इस अभावनीय विदाई की अन्तिम घडी में भी उसकी अटूट गम्भीरता विचलित नही होगी, वह किसी का दोष नही देगा, शायद हा कि कारण तक न जानना चाहगा गहर विस्मय और गूढ वेदना की एक लकीर शायद उसके चेहरे पर झलके, मगर उसके सिवाय कोई उसे देख भी न पाएगा।

उसके बाद एक दिन वह सुनगा कि मेरा विवाह सुरेश से हुआ। उस समय अनावधानता म ही शायद एक लम्बा निश्वास छूट पडेगा या कि जरा मुसकुरा कर ही अपन काम में लग जायगा! इस बात का सोचकर सून कमरे में भी लज्जा और घृणा से उसका चेहरा लाल हो उठा।

## ९

दस-बारह दिन बीत गए। केदार बाबू का रवैया देखकर लगता इतनी स्फूर्ति शायद उनम जवानी म भी न था। आज साँझ से पहले बायस्कोप देख-

कर लौटते हुए गोल दीघी के आसपास हठात गाडी से उतर पडने को तैयार होकर बोले—सुरेश, मैं यहा से समाज चला जाऊँगा चलकर, तुम लोग घर जाओ बेट , और हाथ की छडी का घुमाते हुए वे तेजी से चले गये। सुरेश ने कहा—तुम्हारे पिताजी की तबीयत आजकल खूब अच्छी है लगता है।

अचला उधर को ही ताक रही थी , बोली—जी हा, आपकी कृपा से। गाडी मोड पर मुडी और वे ओझल हो गए। सुरेश ने अचला के दाए हाथ का अपनी छाती पर खीचकर कहा—तुम्हे पता है इस बात से मुझे दु ख होता है। क्या इसीलिए तुम बार बार कहा करती हो ?

अचला जरा फीका हसकर बोली—कही इतनी बडी दया भूल जाऊँ, इसीलिए बार-बार याद करती हूँ। आपको दुखाने के लिए नही कहती।

उसकी हथेली का जरा सा दबाकर सुरेश ने कहा—इसीलिए मुझे चोट ज्यादा लगती है।

क्यो ?

मैं खूब समझता हू कि सिफ इस दया को स्मरण करके ही तुम मन मे बल पाती हो। इसके सिवाय तुम्हारा और जरा भी सबय नही, सच है या नही ?

अगर न कहूँ ?

इच्छा न हो, मत कहो। लेकिन मुझको कभी तुम भी नही कह सकोगी ?

अचला का मुख मलिन हो गया। सिर झुकाए धीरे धीरे बोली—कभी कहना पडेगा, यह तो आप जानते हैं।

उसके उदास मुखडे को देखकर सुरेश न निश्वास फेंका। मगर यही होना है, तो दो दिन पहले कहने मे ही कौन सा गुनाह है ?

अचला न उत्तर नही दिया। अनमनी सी रास्ते की तरफ देखती रही। मिनट भर चुप रहकर सुरेश अचानक, बोल उठा, मुझे लगता है, महिम को सब मालूम हो गया है।

चौककर अचला ने मुँह फेरा। उसका एक हाथ अब तक सुरेश के हाथ मे ही था। उसे खीच कर पूछा—आपने कैसे जाना ?

उसकी आकुल आवाज सुरेश के कानो मे खट से लगी। बोला, नही तो अब तक वह आता ! पन्द्रह सोलह दिन हो गए न !

अचला ने सिर हिलाकर कहा—आज को मिलाकर उन्नीस दिन हुए। अच्छा पिताजी ने क्या उन्हें कोई पत्र लिखा है, मालूम है आपको ?

सुरेश ने संक्षेप में कहा—नहीं, नहीं मालूम।

वे घर से लौटे या नहीं जानते हैं ?

नहीं यह भी नहीं जानता।

अचला ने फिर गाडी से बाहर देखते हुए कहा—तो फिर खत लिखकर उन्हें सब बताना पिताजी के लिए उचित है। किसी दिन अचानक आकर हाजिर न हो जायें।

फिर कुछ देर के लिए दोनों नीरव हो रहे। सुरेश ने फिर एक बार उसके शिथिल हाथ को अपने हाथ में लेकर धीरे धीरे कहा—मुझे सबसे डर इस बात का लगता है अचला जब मैं सोचता हूँ कि तुम कभी मुझे श्रद्धा तक नहीं कर सकोगी। मुझे सदा यही लगेगा कि रुपये के बल पर मैं तुम्हें तोड लाया हूँ दोष यही हुआ।

अचला ने इधर झट से मुहँ फेर कर बाधा देते हुए कहा—आप ऐसी बात न कहें—आपको मैं दोष नहीं दे सकती। जरा रुककर बोली रुपये का जोर संसार में हर जगह है यह तो जानी हुई बात है मगर वह जोर तो आपने नहीं लगाया। पिताजी ने जाने पर सब कुछ जानते हुए मैं अगर आप पर अश्रद्धा करूँ तो मुझे नरक में भी जगह नहीं मिलेगी।

सुरेश की सदा की फितरत है, जरा सी बात पर ही वह विगलित हो उठता। अचला के इसी छोटे से प्यार वाक्य पर उसकी आँखों में पानी भर आया। उस पानी को अचला के हाथ से पोंछ कर उसने कहा—यह न सोचो कि इस अपराध, इस अन्याय का परिणाम मैं नहीं समझ सकता हूँ। मगर मैं दुर्बल हूँ। बहुत ही दुर्बल ? यह चोट शायद सह लेगा मेरा कलेजा मगर टूक टूक हो जायगा। कहते हुए माना किसी जोर के धक्के को सम्हाल लिया, इस तरह से बोला—तुम मेरी नहीं, और किसी की हो यह बात मैं सोच ही नहीं सकता—तुम्हें नहीं पाऊँगा यह सोचते ही मेरे पावों के नीचे की जमीन तक खिसकने लगती है।

रास्ते पर गैस की बत्तियाँ जलाई जा रही थीं। उनकी गली में गाडी के घुसते ही सुरेश के चेहरे पर रोशनी पडी और उसकी छल छलाती आँखें अचला

को दिखाई पड गई। क्षणिक दया से बस वह वही कर बैठी, जा कभी नही किया। सामन झुककर अपने हाथ से उसका आँसू पोछती हुई बोला, मैं पिताजी की बात स कभी बाहर नहीं। मुझे तो उन्होंने तुम्हारे ही हाथो सोपा है।

अचला के उस हाथ का अपने हाठो पर ले जाकर बार बार चूमत हुए सुरेश कहने लगा, मेरे लिए यही सबसे बडा पुरस्कार है अचला, इससे ज्यादा नही चाहता। लेकिन जिसमे इतने से मुझे वचित न करो।

गाडी घर के सामने खडी हुई। साईस दरवाजा खोलकर हट गया। सुरेश उतरा और उसने जतन से हाथ पकड कर अचला का उतारा तथा एक साथ दोनो ने देखा, ठीक सामन महिम खडा है। नजर पडते ही पल मे दोनो नरनारी पत्थर हो गए।

दूसरे ही क्षण अचला ने अव्यक्त आत स्वर मे क्या तो एक शब्द कहकर जोर से अपना हाथ खीच लिया और पीछे हट गई।

विस्मय से सुरेश हत-बुद्धि हा गया। बोला, सुरेश तुम यहा ? पहले तो सुरेश के मुँह से बात न फूटी। उसके बाद एक घोट-घोट कर फक पडे चेहरे पर सूखी हँसी खीच कर बोला—वाह महिम ! उसके बाद स लापता ! बात क्या है ? कब आए ? चलो चलो, ऊपर चलो। कहकर पास जाकर उसका हाथ हिलाकर कहा—मगर आपके पिताजी ने यह खूब किया। अपने तो गए समाज और पहुँचाने का भार पडा इस गरीब पर ! खैर, अच्छा ही हुआ। नही तो महिम से शायद भेंट ही न होती। घर म इतन दिन कर क्या रहे थे, कहो ता ?

महिम ने कहा—काम था।—मारे अचरज के उसे अचला को नमस्ते करने की भी सुध न रही।

उसे जरा धक्का सा देकर सुरेश बोला—जो भी हो, आदमी खूब हो तुम। हम लोग तो डर से कातर। चिटठी भी देत न बना। खडे क्यो रहे ? ऊपर चलो। कहकर उस जबदस्ती ढकेल कर ही ऊपर ले गया। लेकिन जब वह बैठके म जाकर बैठे तो अचानक उसकी अस्वाभाविक प्रगल्भता एकबारगी थम गई। गैस की तज रोशनी म उसका चेहरा स्याह हा उठा। दो तीन मिनट कोई कुछ न बोला—महिम ने सूनी आखो एक बार अपने दोस्त और एक बार अचला का देखकर सूखे स्वर मे पूछा, सब ठीक तो है ?

अचला ने गदन हिलाकर जवाब दिया, बोली नही।

महिम बोला—मैं तो बेहद हैरान हूं। मगर सुरेश से तुम लोगों का परिचय कैसे हुआ?

अचला सिर उठाकर मरी सी होकर बोली इन्होंने पिताजी के चार हजार का कर्जा वसूल कर दिया है। उसका मुँह देखकर महिम के मुँह से सिर्फ इतना ही निकला, उसके बाद?

इसके बाद तुम पिताजी से पूछना—कहकर अचला तेजी से अन्दर चली गई। महिम कुछ देर बैठा रहा और अन्त मे मित्र से बोला, माजरा क्या है सुरेश?

सुरेश ने उद्धत भाव से जवाब दिया तुम्हारी तरह रुपया ही मेरी जान नहीं है। भले आदमी आडे वक्त मे मदद मागते हैं, तो मैं देता हूँ बस इतना ही। वे चुका ना सकें तो आशा है वह दोष मेरा नही। इतने पर भी अगर मुझे ही दोषी ठहराओ तो हजार बार ठहरा सकते हो, मुझे आपत्ति नही।

मित्र की यह बे सिर पैर की सफाई और उसके कहने के ऐसे अनोखे ढग से महिम वास्तव मे मूढ होकर देखता रहा और अत मे कहा—एकाएक मैं तुम्हें ही क्यो दोषी बनाऊँगा इसका कोई मतलब मेरी समझ मे नही आया सुरेश। कृपा करके जब तक खोलकर न कहो तो कैसे समझ सकता हूँ।

सुरेश ने उसी रुखाई से कहा—खोलकर क्या बताऊँ बताने को है ही क्या?

महिम ने कहा—है। मै जिस दिन घर जा रहा था, तब तुम इन लोगो को पहचानते न थे। इसी बीच ऐसी घनिष्टता ही कैसे हो गई और एक ब्राह्म परिवार की मुसीबत मे चार चार हजार रुपए देने की यह उदारता ही मन की कैसे आई इतना ही मुझे समझा दो तो मैं कृतार्थ होऊँ।

सुरेश ने कहा—सो हो सकता है। लेकिन मुझे अभी बात करने का समय नही है। मैं अभी चलता हूँ। इसके सिवा केदार बाबू से ही पूछ लेना न, कहने के लिए तो वे बैठे ही हुए हैं।

ठीक है। कहकर महिम उठ खडा हुआ। सुनने का बडा कौतूहल था, फिर भी उनके इतजार मे बैठने का अभी समय नही है। मैं जाता हूँ—

सुरेश फिर बैठा रहा कुछ बोला नही।

बाहर आकर महिम को नजर आया, सामने की रेलिंग पकड कर उसी

तरफ देखती हुई अंधेरे मे अचला खडी है। लेकिन करीब आने या बात करने की उसने कोई कोशिश नही की। यह देखकर वह भी सीढी से नीचे उतर गया।

## १०

महिम कुछ जरूरी दवाएँ खरीदने के लिए कलकत्ते आया था लिहाजा रात ही की गाडी से लौट गया। सुरेश ने खोज पूछ से जाना, महिम मेरे घर नही पहुँचा—चारेक दिन बाद केदार बाबू के बैठके म बैठ कर यही चर्चा शायद हो रही थी। केदार बाबू का बायस्कोप का नया नशा सवार हुआ था। त था, आज भी चाय पीकर वे लोग निकलेंगे। सुरेश की गाडी बाहर खडी थी—ऐसे समय किसी बुरे ग्रह की तरह अकस्मात् महिम आकर दरवाजे के पास खडा हुआ।

सबने नजर उठाकर देखा और सबके चेहरे पर परिवतन सा दिखाई दिया।

केदार बाबू ने विरस मुख स, जबदस्ती जरा हँसकर अगवानी की—आओ महिम। खबर सब ठीक हैं?

नमस्कार करके महिम अदर आकर बैठा। घर मे इतनी देर होने का कारण पूछे जाने पर सिफ यह कहा कि जरूरी काम था। सुरेश न मेज पर से उस दिन का अखबार उठा कर पढना शुरू कर दिया। और अचला बगल की चौकी पर से सिलाई उठा कर उसम लग गई। इसलिए बात सिफ केदार बाबू से होने लगी।

अचानक बीच मे एक मिनट के लिए अचला उठ कर बाहर गई और तुरत अदर आ गई। जरा ही देर बाद सिर के ऊपर का पखा खीचा जाने लगा। अचानक हवा जा लगी सो खुश होकर केदार बाबू बोल उठे गनीमत है। इतनी दर म कम्बख्त पखा वाले की कृपा ता हुई।

सुरेश ने तीखी और टढी निगाहा से दख लिया, महिम के कपाल पर पसीने की बूँदें जम आई हैं। क्यो अचला उठकर बाहर गई और अचानक

पखे वाले की दया कैसे हो गई, सारा कुछ लमहे म बिजली की तरह उसके मन मे खेल गया और जिस हवा से केदार बाबू खुश हुए थे, उसी हवा से उसका सर्वांग जल जाने लगा। अचानक गला खोलकर वह बोल उठा, पाच बज गए। और देर करने से न चलेगा केदार बाबू।

केदार बाबू ने बातचीत बन्द करके चाय के लिए चीख-पुकार मचाई कि बैरा सारा सरजाम लेकर आ पहुँचा। सिलाई छोड़कर प्याले म चाय बनाकर पिता और सुरेश की ओर बढ़ाते ही केदार बाबू ने पूछा—तुम नही पियोगी बेटी?

अचला ने गर्दन हिलाकर कहा—नही, बडी गर्मी है।

अचानक महिम पर नजर पड़ते ही वे व्यस्त से होकर बोल उठे, अरे, महिम को न दी। तुम नही पियोगे महिम?

महिम जवाब दे इसके पहले ही अचला ने मुडकर उसकी ओर देख स्वाभाविक मदुता से कहा—न इतनी गर्मी म तुम चाय मत लो। फिर इस वक्त तो तुम्हे चाय बर्दाश्त नही होगी।

महिम की छाती पर से किसी ने ता दुवह पत्थर का बोझ जादू के बल से उठाकर फेंक दिया। वह बोल न सका, सिर्फ अव्यक्त विस्मय से एकटक देखता रहा। अचला बोली—जरा देर सब्र करो मैं लाइम जूस का शरबत बनाकर लाती हूँ—और सम्मति का इन्तजार किए बिना ही चली गई। सुरेश एक तरफ को मुँह घुमाकर कल के खिलौने सा चाय पीता रहा जरूर, पर चाय की एक एक बूँद उस समय विस्वाद और कड़वी लगने लगी।

चाय पीकर केदार बाबू झटपट कपडे बदल आए। आकर देखा, अचला बैठी बैठी ध्यान से सिलाई कर रही है। उन्होने आश्चय से कहा—बैठी सिलाई ही कर रही हो, तैयार नहीं हुई?

*अचला ने शात भाव से कहा—मैं नही जाऊँगी।*

*नही जाओगी! यह कैसी बात?*

*नही, आज आप लोग जायें। मुझे अच्छा नही लग रहा है।* कहकर वह जरा हँसी।

*क्षुब्ध और क्रोध को दबाकर सुरेश ने कहा—चलिए केदार बाबू आज हम लोग चलें। उनकी शायद तबीयत ठीक नही, जबदस्ती से क्या लाभ?*

उसे देखते ही केदार बाबू उसके अंदर के क्रोध को भांप गए। बेटी से पूछा, तुम्हें कुछ हुआ है ?

अचला ने कहा—मैं ठीक ही हूं।

सुरेश महिम की तरफ पीठ करके खड़ा था। उसने मुंह के भाव को गौर नहीं किया, बोला—चलिए हम चलें। उन्हें घर में कुछ काम हो सकता है—जोर करके ले जाने की क्या जरूरत है ?

केदार बाबू ने कठोर स्वर में पूछा—घर में कोई काम है ?

अचला ने सिर हिलाकर कहा—नहीं

केदार बाबू चिल्ला पड़े—मैं कहता हूं, चल। जिद्दी लड़की !

अचला के हाथ की सिलाई छूट कर नीचे गिर गई। वह स्तभित-सी आंखें बड़ी बड़ी करके पहले सुरेश फिर पिता को ताककर एकाएक मुंह घुमाकर तेजी से चली गई।

सुरेश ने स्याह मुखड़ा लिए कहा—आप तो सब बात में जोर जबर्दस्ती करते हैं। मगर मैं अब देर नहीं कर सकता, इजाजत दें, तो मैं जाऊं।

अपने अभद्र आचरण से केदार बाबू मन ही मन लज्जित हो रहे थे—सुरेश की बात से नाराज हो गए। मगर वह नाराजगी पड़ी महिम पर। वह बहुत ही दुखी और क्षुब्ध होकर उठना ही चाहता था। केदार बाबू ने कहा—तुम्हें कोई काम है महिम।

महिम अपने को जब्त करके उठते हुए बोला—नहीं।

केदार बाबू चलने को उद्यत होकर बोले—तो आज हम लोग जरा व्यस्त हैं, फिर कभी आने से—

महिम ने कहा—जैसी आज्ञा। आऊंगा। लेकिन आने की कोई आवश्यकता है।

सुरेश को सुनाकर केदार बाबू ने कहा—मुझे अपने लिए कोई जरूरत नहीं। लेकिन जरूरत समझो तो आना, कुछ बातों पर चर्चा की जायगी।

तीनों जने बाहर निकल पड़े। नीचे आकर महिम की तरफ सुरेश ने ताका तक नहीं, वह केदार बाबू को लेकर गाड़ी पर सवार हो गया। कोचवान ने गाड़ी हांक दी।

महिम कुछ ही दूर बढ़ा था कि पीछे से अपने नाम की पुकार सुनकर

खडा हो गया। देखा केदार बाबू का बरा है। वह बेचारा हाँफता हुआ उसके पास आया और कागज का एक चिट उसके हाथ पर रख दिया। उस पर पेंसिल मे सिफ अचला लिखा था। बरा न कहा—उन्होंने बुलाया है।

महिम लौटा। सीढी पर पाव धरते ही देखा, अचला सामने खडी है। उसकी लाल आखो की पलकें अभी भी गीली थी। पास जाते ही बोली—तुम क्या अपने कमाई मित्र के हाथो मुझे जिबह करने के लिए छोड गए? जिसने तुम्हारे साथ इतनी बडी कृतघ्नता की तुम मुझे उसके हाथो छोडकर कैसे जा रहे हो? और वह फफक कर रो पडी।

महिम काठ का मारा सा खडा रहा। दो एक मिनट म आखें पोछकर वह बोली—मुझे समझाने का समय अब नहीं रहा। तुम्हारा दाया हाथ दखूँ? और खुद उसका दाहना हाथ खीचकर अपनी अँगुली से सोने की अँगूठी निकाल कर उसे उसने पहना दी। बोली—मैं और सोच नहीं सकती। अब जो करना है तुम करो। इतना कहकर उसके पावो तक झुक कर उसने प्रणाम किया और चली गई।

महिम ने भला बुरा कुछ न कहा—बडी देर तक रेलिंग पर भार देकर चुप खडा रहा और फिर धीरे धीरे उतर कर चला गया।

## ११

साझ के बाद सिर झुकाए जब महिम अपने डेरे की तरफ लौट रहा था, तो उसकी शक्ल देखकर किसी की यह कहने की मजाल न थी उस समय उसका प्राण पीडा से बाहर आने के लिए उसी के हृदय की दीवारो को खोद रहा था। कैसे सुरेश वहा पहुँचा कैसे इतना घनिष्ठ हो गया—इसका छोटा मोटा इतिहास अभी उसे मालूम जरूर नहीं हो सका था, लेकिन असली बात अब उससे अजानी न थी। केदार बाबू को वह चीन्हता था। उन्हें जहा रुपए की बू मिली है वहा से वे सहज ही पलट नहीं सकते, इसमे कोई सन्देह नहीं। सुरेश का भी

वह छुटपन से बहुत रूपों में देखता आया है। दवात जिसे वह प्यार करता है, उसे पाने के लिए वह क्या दे नहीं सकता। यह कल्पना करना भी मुश्किल है। रुपया तो कोई चीज ही नहीं, यह तो उसके लिए सदा से तुच्छ रहा है। कभी उसी के लिए उसने मुगेर की गंगा में अपनी जान की भी ममता नहीं की आज अगर वह किसी दूसरे के प्रेम के प्रबलतम मोह में अपने उसी महिम का ख्याल न करे तो वह उसे दोष कैसे दे? फलस्वरूप सारी घटना उसे एक मार्मिक दुर्घटना सी लगने के बजाय उसने क्षमा को दोष नहीं दिया लेकिन यह जो इतनी इतनी प्रचंड विरोधी शक्तियाँ सहसा जाग उठी हैं इनको रोक कर अचला उसके पास लौट सकेगी, यह विश्वास उसे न था इसीलिए अचला की अंतिम बातों, अंतिम आचरण न क्षण के लिए चकित करने के सिवाय उसे भरोसा नहीं दिया। अंगूठी की तरफ बार-बार देखकर भी उसे सांत्वना नहीं मिली—फिर भी आखिरी फैसला तो जरूरी ही ठहरा। अपने को इस तरह भुलाकर तो अब एक पल भी नहीं चल सकता। होना है सो हो, इसका अंतिम निर्णय वह जरूर ही कर लेगा। यही संकल्प करके वह अपने गरीब छात्रावास में रात के आठ बजे के बाद पहुँचा।

दूसरे दिन तीसरे पहर वह केदार बाबू के यहाँ गया, तो पता चला अभी अभी वे लोग बाहर चले गए—कहीं सोता है। उसके दूसरे भी दिन जाकर भेंट नहीं हुई। बेरा ने कहा—सब बायस्कोप देखने गए हैं, लौटने में देर होगी। सब कौन, बिना पूछे भी महिम समझ गया। अपमान और अभिमान जितना बड़ा ही हो, लगातार दो दिनों तक लौट आना ही उसके जैसे आदमी के लिए काफी हो सकता था, लेकिन हाथ की अँगूठी ने उसे डेरे पर टिकने नहीं दिया तीसरे दिन फिर उसे ठेलकर वहाँ भेजा। आज खबर मिली, बाबू घर पर हैं बैठक में बैठ कर चाय पी रहे हैं। महिम को कमरे के पास देखकर केदार बाबू ने गंभीर स्वर में कहा—आओ महिम। महिम ने हाथ उठाकर नमस्ते किया।

वहाँ से कुछ दूर पर खुले झरोखे के पास एक सोफा पर अलग-थलग अचला और सुरेश बैठे। अचला की गोदी पर तस्वीरों की एक भारी किताब। दोनों तस्वीरें देख रहे थे। सुरेश ने नजर उठाकर देखा और फिर तस्वीर देखने में मशगूल हो गया, लेकिन अचला ने उलट कर देखा भी नहीं। उसका झुका मुखड़ा देखा नहीं जा सका, पर वह अपनी किताब के पन्नों पर जिस

झुकी थी कि ऐसा सोचना असगत नही कि पिता की आवाज, आगतुक के पैरो की आहट, कुछ भी उनके कानो तक न पहुँची।

महिम अन्दर जाकर एक कुर्सी खीचकर बठ गया। केदार बाबू बडी देर तक और कुछ न बोले—थोडी थोडी करके चाय पीने लगे, प्याला जब, खत्म हो चुका और चुप रहना जब निहायत नामुमकिन हो गया, तो प्याले को रखते हुए बोले—तो अब क्या कर रहे हो ? कानून का परीक्षा फल निकलने म तो लगता है अभी महीने भर की देर है।

महिम सिफ बोला—जी हा।

केदार बाबू बोले—मान लिया पास ही कर गए और पास तुम होगे, इसमे मुझे कोई सन्देह नही, लेकिन कुछ दिन प्रक्टिस करके कुछ रुपया जमा किए बिना तो और किसी तरफ मन को दौडा नही सकते। क्या ख्याल है, सुरेश महिम की सासारिक हालत तो सुनते है, अच्छी नहीं है।

सुरेश बोला—नही। महिम जरा धीरे धीरे हँसकर बोला—प्रेक्टिस करने से ही रुपए जमेगे इसका भी तो कोई ठिकाना नही।

केदार बाबू ने सिर हिलाकर कहा—नही, सो तो नही है—ईश्वर की मर्जी लेकिन कोशिश से असभव कुछ भी नही। हमारे शास्त्रकारो ने कहा है, पुरुषसिंह तुम्हारे वही पुरुषसिंह होना होगा। और किसी भी तरफ नजर नही रहेगी—उन्नति और उन्नति। उसके बाद ससार कम करो जो जी चाहे करो, कोई दोष नही—नही तो महापाप! कहकर सुरेश की ओर एक बार देखकर बोले—क्या सुरेश परिवार को खिला पहिना न सकूँ, बच्चो को लिखा पढा न सकूँ। इसी तरह से तो हिन्दू लोग जहन्नुम म गए। हम ब्रह्म समाजी भी अगर अच्छा आदश न दिखा पाएँ तो सत्य जगत के सामने मुँह तक न दिखा सकूँगा ठीक है या नही ? क्यो सुरेश ?

सुरेश पहले की तरह ही मौन रहा महिम मन ही मन असहिष्णु होकर बोला—आपके उपदेश को मैं याद रक्खूँगा। लेकिन आपने क्या मुझे इसी की चर्चा के लिए बुलाया था ?

केदार बाबू उसके मन की बात समझ गए। बोले—नही और भी बात है लेकिन, कहकर उन्होंने सोफे की तरफ देखा।

सुरेश ने खडे होकर कहा—तो हम लोग उस कमरे म जाकर बठें। उसने

झुककर अचला की गोदी से तस्वीर वाली किताब उठा ली। उसका यह इशारा लेकिन अचला के आगे बिल्कुल बेकार हो गया। वह जैसी बैठी थी, बैठी रही, उठने का उसमे कोई लक्षण ही न दिखाई दिया। केदार बाबू ने कहा—तुम दोनो जरा उस कमरे मे जाकर बैठो बिटिया, मुझे महिम से कुछ बात करनी है।

अचला ने मुँह उठाकर पिता की ओर देखकर कहा—मैं रहूँ बाबूजी।

सुरेश ने कहा—ठीक है, न हो मै ही जाता हूँ और एक प्रकार से नाराज होकर हाथ की किताब उसकी गोद पर फेंककर वह जोर से कमरे से निकल गया।

हुक्म उदूली से बेटी पर केदार बाबू खुश नही हुए, यह उन्होने चेहरे के भाव से साफ बता दिया। मगर जिद भी नही की। कुछ देर रंज होकर बैठे रहे, फिर कहा—महिम, तुम यह मत सोचो कि मैं तुमसे ऊबा हुआ हूँ बल्कि तुम पर मेरी काफी श्रद्धा ही है। तभी एक बन्धु की नाई सलाह दे रहा हूँ कि इस समय किसी प्रकार की जिम्मेदारी कंधे पर लादकर अपने को निकम्मा न बना लो। अपनी तरक्की करो, कृती बनो फिर यह बात लेने का काफी समय मिलेगा।

महिम ने मुँह घुमाकर एक बार अचला की ओर देखा। देखते ही उसने नजर झुका ली। इस पर उसने केदार बाबू की ओर देखकर कहा—आपका आदेश सिर-आखो। मगर आपकी बेटी की भी क्या यही राय है?

केदार बाबू छूटते ही कह उठे—बेशक! बेशक! जरा देर स्थिर रहे और बोले—कम से कम इतना तो निश्चित है कि सारा कुछ जान सुनकर मैं तुम्हारे पल्ले बाँधकर बेटी को बहा नही दे सकता।

महिम ने शान्त स्वर से कहा—अंग्रेजो मे एक प्रथा है। ऐसी हालत मे वे एक दूसरे के लिए इन्तजार करते है। मैं क्या आपका वही अभिप्राय मानूँ?

केदार बाबू जल से उठे। बोले—सुनो महिम, तुम्हारे सामने शपथ लेने को मैंने तुम्हे नही बुलाया है। तुमने हमारे साथ जैसा सलूक किया है, और कोई बाप होता तो महाभारत मच जाता। पर मैं निहायत शान्ति चाहने वाला आदमी हूँ, कोई शोर गुल, कोई हँगामा नही पसन्द करता, जहाँ तक सम्भव है, मीठी बातो से ही तुम्हे अपना इरादा बता दिया। अब तुम इन्तजार करोगे या नही अँग्रेज लोग क्या करते है, इतनी कैफियत से हमे कोई मतलब नही। फिर हम

अँग्रेज नहीं, बङ्गाली हैं, लडकी के बडी हो जाने से हम नींद नहीं आती, खाना नहीं रुचता। यह तुम्हीं कौन नहीं जानते हो?

महिम का चेहरा और आँखें सुख हो आइ, मगर अपने को जब्त करके उसने धीर भाव से कहा—मैंने ऐसा क्या सलूक किया कि और कोई होता, तो महाभारत मच जाता—यह सवाल मैं आप से नहीं पूछना चाहाता। केवल आपकी बेटी के मुँह से एक बार यह सुनना चाहता हूँ कि उनका भी यही अभिप्राय है या नहीं! और वह खुद उठकर अचला के पास गया, क्या यही तो?

अचला ने न सिर उठाया न बात की।

उमडते हुए एक उच्छवास को पीकर महिम ने फिर कहा—एकांत में तुम्हारी मंशा जानने पूछने का मुझे मौका नहीं मिला—इसके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ। उस दिन शाम को सनक में तुम जो कर बैठी थी, उसके लिए भी तुम्हें जिम्मेवार न बनाऊँगा। सिर्फ एक बार यह कहो कि यह अँगूठी तुम वापस चाहती हो या नहीं?

आंधी की तेजी से कमरे के अन्दर आकर सुरेश ने कहा—मुझे माफ करना पडेगा केदार बाबू अब एक मिनट भी ठहरने का समय मेरे पास नहीं है।

जो मौजूद थे, सब ने अचरज से नजर उठाकर देखा। केदार बाबू ने पूछा, क्यों?

सुरेश ने नाट्य भंगिमा से कहा—नहीं-नहीं, मेरी इस गलती के लिए माफी नहीं। मेरा अंतरंग मित्र प्लेग से मरणासन्न है और मैं क्या तो यहाँ बैठा बैठा नाहक ही समय बर्बाद कर रहा हूँ!

केदार बाबू ने घबराकर पूछा—कहते क्या हो सुरेश! प्लेग! तुम वहाँ जाओगे क्या?

सुरेश हँसकर बोला—बेशक! बहुत पहले ही वहाँ जाना मेरा उचित था।

केदार बाबू शंकित होकर बोले—मगर प्लेग है! वे क्या तुम्हारे ऐसे कोई खास आत्मीय हैं—

सुरेश ने कहा—आत्मीय! आत्मीय से बहुत बडा केदार बाबू! महिम की कटाक्ष करके उसने यही पहली बार बात की, महिम, अपने निशीथ को कल रात से ही प्लेग हुआ है, जिएगा—यह आशा नहीं है। तुमसे भी बता देना उचित है—चलोगे देखने उसे?

महिम इस निशीथ का पहचान नही सका। पूछा—कौन निशीथ ?

कौन निशीथ ? कह क्या रह हो महिम ? इसी बीच तुम निशीथ को भूल गए ? जिसके साथ तुम सारा सेकड इयर पढते रह, ऐसी आफत की घडी मे उसे भूल गए ? कहकर उसने अचला की तरफ देखकर व्यग के स्वर म कहा—याद भी क्यों आए ! प्लेग है न !

महिम न इस व्यग को चुपचाप सहकर पूछा—वे क्या भवानीपुर से आया करत थे ?

सुरेश ने व्यग स ही जवाब दिया, हा, वही। मगर निशीथ तो दा चार था नही कि अब तक तुम्ह याद नही आया। पूछता हूँ, चलोग ?

अब पहचान कर पूछा—निशीथ इन दिनो कहा रहता है ?

सुरेश बाला—और कहा ? अपन घर, भवानीपुर मे। एसे आडे वक्त एक बार उससे मिलना क्या कत्तव्य नही लगता तुम्ह ? मैं डाक्टर ठहरा, मुझे तो जाना ही पडेगा, और वसा मिताइ भूल नहीं गए हा तो तुम भी मेर साथ चल सकते हा। केदार बाबू मरा ख्याल है, आप लागा की बात खत्म हा चुकी। आशा है, थाडी देर के लिए भी इस फुसत द सकेंगे ?

यह व्यग किस पर है समझ न पाने के कारण केदार बाबू, कभी महिम और कभी बेटी की आर उद्विग्न हाकर ताकन लग। अपन धनी भावी दामाद का मान अभिमान किस बात मे और कब जा तुनक पडता है, यह वे आज भी समझ न सके। उनके मुँह स बात न निकली, महिम भी काठ का मारा-सा देखता रहा। देखत देखते अचला का चेहरा लाल हो उठा। वह धीरे धीरे हाथ वाली किताब को मेज पर रखकर इतनी देर के बाद बाली। कहा—तुम्ह तो जाना ही चाहिए, मगर इनके कानून की किताब मे तो प्लेग का निदान नही लिखा है ? ये किस लिए जाँय ?

इस एक बारगी अप्रत्याशित जवाब से सुरेश अवाक् हो गया। मगर दूसर ही क्षण बोल उठा—मैं वहा डाक्टरी करने नहीं जा रहा हूँ, उस डाक्टरा की कमी नही है। मैं जा रहा हूँ, मित्र की सेवा करने। मिताई को मैं अपनी जान से भी बडी मानता हूँ।

एक निष्ठुर हँसी की झलक अचला के होठो पर झलक आयी, बोली—

हर आदमी तुम्हारी ही तरह महान होगा, ऐसी तो कोइ वात नही । मिताई का इतना वडा वोध उह न हो ता मै लज्जा का कारण नही समझती। खर जो भी हो वहा इनका जाना हर्गिज न होगा।

सुरेश का चेहरा काला पड गया। केदार वावू सशक्ति हो उठे। भय से कहने लगे—यह सब तू क्या कह रही है अचला ? सुरश जैसा, सच ही ता —निशीथ बाव् जैस,

अचला ने टोककर कहा—निशीथ वावू का पहले ता पहचान ही नही सके। फिर वे डाक्टर है व जा सकते है। लेकिन दूसरे का नाहक ही मुसावत मे खीच ले जाना क्या ?

चोट खाने पर सुरेश को होश नही रहता। उसन मज पर जोरा की मुट्ठी मारी और जो मुँह मे आया, चिल्लाकर वहो वाल उठा—मैं डरपाक नहीं, जान का नहीं डरता मैं। महिम की ओर इशारा करके वाला—इस नमकहराम से ही पूछ दखो दो दो बार मैंने इसे मरने से वचाया या नही ?

अचला ने जार भरे शब्दा म कहा नमकहराम ये है ! खूब ! मगर जिसे एक बार वचाया, कभी जी म आया ता उसका शायद खून भी कर दिया ?

केदार बाबू किंकत्तव्यविमूढ से वाल उठे—रुक भी अचला, ठहरो सुरश। यह सब क्या !

सुरेश ने लाल लाल आखा से केदार बाबू की ओर दखकर कहा—मैं प्लग के पास जा सकता हूं इसमे हन नही ! महिम की जान ही जान है मरी कुछ नही ! देख लिया न आपन !

लज्जा और क्षाभ म अचला रो पडी। रुँधे स्वर मे कहने लगी—अपनी जान वे देना चाहत हैं द मैं राक नही सकती, किंतु जहा राकन का मुझे पूरा अधिकार है, वहाँ मैं जरूर राकूँगी। मैं इह वसी जगह हर्गिज नही जान दे सकती। कहकर वह वहाँ से जाने लगी कि केदार वावू चीख उठे—जा कहाँ रही है अचला !

अचला ठिठक गई। वाली—न, वाव् जी, रात दिन इतना जुल्म अब मुझसे वर्दाश्त नहीं हाता। जा विल्कुल नामुमकिन है, प्राण रहते जो मैं कदापि नही कर सकूँगी उसी के लिए तुम लाग रात दिन मुझे वेध रह हा। उमडती हुई रुलाई का दबाती हुई वह कमरे से वाहर चली गई। वृद्ध केदार वावू हत-

बुद्धि से जरा ताक्त रहे और वोले—सब वच्चे स जुट है—यह सव क्या है, कहो ता !

## १२

एक महीना के करीव वीता। केदार वाबू राजी हा गए—अगने रविवार को महिम स अचला की शादी तै पाई गई। उस दिन सुरेश जसी हरकत कर गया, वह सचमुच ही केदार वाबू के कलेज म चुभी थी। लेकिन यह नही कि उसी अपमान को तौलकर अत म महिम पर प्रसन्न होकर उन्हाने हामी भरी हो। सुरेश खुद ही जो कहा गायब हो गया, तब से आज तक उसका कोई पता ही नहीं। ऐसा सुनन मे आया वह कही पश्चिम चला गया है कब लौटेगा, कोई नही जानता।

उस दिन अपनी रुलाई को दवान के लिए अचला जब कमर से वाहर चली गई ता वडी देर तक स्याह मुँह किए तीना जने वठे रहे थे। पर वात पहले सुरश न ही की। केदार बाबू की तरफ मुखातिब हाकर उसन कहा—मगर आपका आपत्ति न हा, ता आपके सामन ही मै आपकी लडकी स दो-एक बात कहना चाहता हूँ।

केदार वाबू न कहा—वखूबी ! तुम वात करोग, इसम आपत्ति कैसी सुरेश ! सब वचपन की वात—

तो फिर उन्हे बुलाइए मुझे ज्यादा समय नही है।

उसके चेहरे और कण्ठ-स्वर की गभीरता स केदार वाबू क मन मे शङ्का हुई। मगर जवदस्ती जरा हँसकर फिर वही टक ले वठे सब वचपने की वात ! उस जरा सम्हलने का मौका दिए बिना, समझ गए सुरश यह प्लेग-प्लग के नाम से ही—औरत का जी ठहरा न ! सुना नही कि हाश फाख्ता—समझ गये बेटे—

किसी तरह की कफियत पर ध्यान देन जैसी मन की अवस्था सुरश की न

थी—वह अधीर होकर बोल उठा—सच मानिए, इन्तजार करने का मुझे बिल्कुल समय नहीं।

सो तो है। सो तो—। अरे, कौन है? कहकर उन्होंने आवाज दी। कनखियों से महिम को देखा। महिम ने खड़ा होकर नमस्ते किया और चुपचाप बाहर चला गया।

केदार बाबू खुद जब अचला को बुलाकर ले आये, तब पश्चिम के झरोखे-दरवाजे से तीसरे पहर के सूरज की रङ्गीन किरणें कमरे भर में बिखर गई थीं। उस आभा में निखरी हुई इस युवती के दुबले छरहरे बदन की ओर देखकर पल के लिए सुरेश के बुझे मन में एक मोह और पुलक का स्पर्श खेल गया, लेकिन वह स्थायी न हो सका। उसके चेहरे पर नजर पड़ते ही उसका वह भाव तुरन्त काफूर हो गया। फिर भी उससे आँखें हटाते न बना। अपलक उसे देखते हुए स्तब्ध बैठा रहा। अचला के मुँह पर आसमान का प्रकाश नहीं पड़ रहा था, पर सामने की दीवार से छिटककर आती हुई ज्योति में उसका मुखड़ा सुरेश को ग्रेनाइट की कठोर मूर्ति-सा लगा। उसने साफ देखा कि कैसी तो एक गहरी वितृष्णा ने उसकी सारी मधुरता सारी कोमलता को सोख लिया है और उसके मुख की एक-एक रेखा तक को अटिग दृढ़ता से एकबारगी धातु की तरह सख्त कर दिया है। अचानक केदार बाबू के एक गहरे निश्वास के आघात से सुरेश चौंक उठा और सीधा बैठ गया।

केदार बाबू ने फिर अपनी वही पुरानी बात दुहराई—सब पागलपन किससे क्या कहूँ मैं सोच नहीं पाता—

अचला को लक्ष्य करके सुरेश खासी गंभीरता से बोला—आप जो कह गई, वही ठीक है।

अचला ने सिर हिलाकर कहा—हाँ।

इसमें कोई परिवर्तन की गुंजाइश नहीं?

अचला ने सिर हिलाकर कहा—नहीं।

खून की एक उबाल ने आग की लहक-सी सुरेश के आँख मुँह को चमका दिया, लेकिन आवाज को संयत करके ही बोला—जब मेरी जान की ही कोई कीमत नहीं तभी मैं समझ रहा था। उसकी छाती उस समय अन्दर से जल रही

थी। कुछ देर स्थिर रहकर वह बोला—अच्छा यह पूछता हूँ, मैं ही क्या पहला शिकार हूँ कि और भी बहुत से लोग जाल म फसकर सिर मुडवा चुके ह ?

असह्य विस्मय से अचला न आखें बडी-बडी करके देखा। सुरेश ने केदार बाबू से कहा—सुना है, बाप बेटी मिलकर शिकार फँसाने का व्यापार विलायत मे नया नही है, मगर आपसे मैं यह भी कहे देता हूँ केदार बाबू, आपका किसी दिन जेल जाना पडेगा।

केदार बाबू चीख उठे तुम यह सब क्या कर रह हो सुरेश ?

सुरेश ने उसी दृढता के साथ कहा—चुप भी रहिए केदार बाबू, नाटक का अभिनय बहुत दिना से चल रहा है। पुराना पड गया। मैं अब इसमे बहनने का नही रुपय मेरे गए, बलासे, बदले म मव कभी कम नही मिला, मगर यही जिसम अतिम हो !

अचला रो उठी आपन इनके रुपय लिए क्यो बाबू जी ?

केदार बाबू एक टुकडा सादा कागज के लिए इधर उधर हाथ बढाते फिरे आखिरकार एक पुराने अखबार का ही उठाकर चिल्ला उठे—मैं अभी हैंडनोट लिख देता हूँ।

सुरश न कहा—रहन दीजिए, इस लिखा पढी की जरूरत नही। आप रुपय चुकाएँग सो मैं जानता हूं। लेकिन उन थोडे से रुपया के लिए नालिस करके मैं अदालत मे खडा न हो सकूंगा।

जवाब दन के लिए केदार बाबू लगातार हाठ हिलाने लग, पर एक भी शब्द न निकला।

सुरेश ने घूमकर अचला की तरफ देखा। उसके पीले पडे चेहरे और गीली आँखा को देखकर उसे बूँद भर दया न आई, बल्कि अन्दर की ज्वाला सौगुनी बढ गई। वह पैशाचिक निष्ठुरता से बोल उठा—नाज करने लायक सुरत है क्या अचला, यही तो मुँह की खूबसूरती, यही तो लकडी का शरीर, यह रग ! फिर भी मैं लटटू था—वह क्या तुम्हारे रूप मे ? ऐसा ख्याल भी न करना।

पिता के सामन ऐसे बेहया अपमान से अचला दुःख और घृणा से दोनो हाथा से आँखें छिपाकर कोच पर औंधी पड गई। सुरेश ने खडे होकर कहा—ब्राह्मो को मैं फूटी आँखा नही देख सकता। जिनकी छाया छू जाने से भी मुझे

नफरत होती थी, उनके घर में कदम रखते ही जन्म भर आजन्म का संस्कार, सदा का विद्वेष एक पल में धुल गया, तभी मुझे शंका होनी चाहिए थी कि यह जादू है। मुझ पर जो बीता बीते परन्तु जाते समय मैं आप लोगों को हजारों धन्यवाद दिए बिना नहीं जा सकता। धन्यवाद अचला!

अचला मुँह गाड़े हुए ही रुंधे स्वर से बोल उठी—पिता जी, उन्हें चुप रहने को कहिए। हम पेड़ के नीचे रहेंगे, वह भी अच्छा मगर आपने उनका जो लिया है लौटा दीजिए।

सुरेश ने कहा—पेड़ के नीचे? कभी तुम लोगों को वह भी नसीब न होगा। कहे देता हूँ। फिर भी उस दिन मुझे स्मरण करना—कहकर वह उत्तर की राह देखे बिना ही जल्दी से चला गया।

केदार बाबू कुछ देर चुप रहे फिर एक लम्बी उसास लेकर बोले—उफ! कैसा खतरनाक आदमी! ऐसा जानता तो क्या मैं उस घर में कदम रखने देता।

पिता की बात अचला के कानों पहुँची, पर वह कुछ न बोली। आँधी पड़ा जम गा रही थी, वैसी ही पड़ी आँसू से अपनी छाती को भिगो रही थी। पास ही बैठे केदार बाबू सब देखते रहे लेकिन दिलासा का एक शब्द भी कहने का उन्हें साहस नहीं हुआ। सांझ हो गई। बैरा गैस की बत्ती जलाने आया कि उठकर वह अपने कमरे में चली गई।

महिम को लेकिन यह सब कुछ न मालूम हो पाया। सिर्फ उस दिन जब अन्त तक केदार बाबू ने अपनी बेटी के साथ उसके विवाह की सम्मति दी वह कुछ देर के लिए विह्वल की नाईं स्तब्ध बैठा रहा। बहुत तरह की बातें शंकाएँ उसके मन में उठीं जरूर, पर अपने इस सौभाग्य का खुद सुरेश ही मूल कारण है, इसकी कल्पना तक उसके मन में न उठ सकी। अचला के प्रति स्नेह प्रेम और करुणा से उसका हृदय परिपूर्ण हो उठा मगर वह सदा से मौन प्रवृत्ति का आदमी ठहरा। आवेग और उच्छ्वास कभी प्रकट नहीं कर सकता कर पाता भी तो यह उसकी जवान के लिए निहायत अप्रत्याशित, अजीब सा आचरण लोगों की नजर में लगता। बल्कि शाम को अकेले में केदार बाबू से कुछ बातें करके जब वह डेरे लौटा तो और दिन की तरह अचला से भेंट करके उसे मामूली सा नमस्कार भी न कर सका। बात केदार बाबू ने खुद उठाई थी।

प्रसङ्ग उठाने से लेकर बेटे के ब्याह की सम्मति, यहा तक कि दिन तै करना तक सब अकेले ही किया। मगर सब कुछ जैसे निरुपाय होकर किया उनके चेहरे पर उत्साह और उमङ्ग की झलक तक न आई। फिर भी दिन बीतने लगे और ब्याह का दिन आया।

परसों विवाह! मगर लडकी के विवाह मे धूम धाम न करने की सोच रक्खी थी, इसलिए आयोजन जितना चुपचाप हो सके इसमे कुछ कसर न रक्खी।

आज तीसरे पहर भी वे यथासमय चाय पीने बैठे थे। कोई सिलाई लेकर अचला पास ही एक कोच पर बैठी थी। बहुत दिनो से तकलीफ मे दिन काटते हुए इन कै दिनो से जो शान्ति उसके मन मे विराज रही थी, उसी की हलकी आभा से उसका पीला मुखडा मद्धिम चादनी सा ही स्निग्ध दीख रहा था। चाय पीते पीते केदार बाबू बीच बीच मे यही देख रहे थे। झगडकर सुरेश के चले जाने के बाद से मनहूसियत से ही दिन काट रहे थे। लौटकर वह क्या करेगा, न करेगा–इसकी फिक्र। फिर भी इस सम्बन्ध मे उन्ही का अपना क्या कर्त्तव्य है—हैंडनोट लिख देना या रुपया चुका देने के लिए और कही का लेना या कि इसकी जिम्मेदारी महिम के कन्धा लाद देना—क्या किया जाय, सोच-सोचकर कोई किनारा नही पा रहे थे। लेकिन कुछ करना जरूरी है, सुरेश के गायब हो जाने की दुहाई पर नहीं चलने का—या बटी की तरह अपनी धुन मे मगन हो आँख मूँदे रहने से यह आफत नहीं टलेगी इसे वे खूब समझते थे। निराश प्रेमी अचानक एक दिन ताजा हो उठेगा और उस दिन आकर चारो तरफ यह बात फैलाकर एक हगांमा खडा कर देगा। रुपया उसने चेक से लिया है, लिहाजा अदालत मे उससे इनकार करना मुश्किल होगा—सब सोच कर वे निस्सदेह हो उठे थे, लेकिन बेटी से जरा राय सलाह की भी गुजाइश न थी। सुरेश का जिक्र करने मे भी उन्हे डर लगता था। अभी अचला के शान्त स्थिर मुख की छवि को देख देख कर उन्हे जलन-सी हो रही थी कि उनके सारे दुखो की जड यह लडकी ही है जो कि कैसी सहूलियत हो आई थी और भविष्य मे जाने कितनी सहूलियत होती!

जो निर्दयी बेटी बाप के बारम्बार मना करने पर भी उनके सुख-दुख का ख्याल न कर सकी। सारा गुड जिसने गोबर कर दिया उस स्वार्थी सतान

पर उनका छिपा क्रोध जब तब अभिशाप बनकर यही कामना करता, जिसम उस इमका फल मिल, जिसम किसी दिन उस रा रोकर कहना पडे कि तुम्हार खिलाफ जान की सजा म भाग रही हूं पिताजी। जहा तक लन्के का सवाल है, महिम से सुरश कही अधिक वाछनीय है। यह धारणा उनक जा म एसी जम गइ थी कि उससे नाना टूट जान को वे बहुत बन्ना नुक्सान मान रह थ। मन मे उन्ह उम पर क्रोध न था। इतना कुछ गुजर चुकन क बाद भी अगर उसे फिर से पान का काई उपाय होना, तो त मुदा शादी को ताड दने म भी उन्ह देर न हाती। मगर काइ उपाय नही—काई उपाय नही। अचला के सामन तो उसका आभास तक लान का उपाय नही।

सिलाई करत करत अचानक सिर उठाकर अचला न कहा—सुरश बाबू के बारे म पटा ?

अचला की जबान पर सुरश का नाम ! कदार बाबू न चौक कर उधर देखा। अपने कान पर विश्वास न हुआ। सुबह का अखबार मज पर पडा था। अचला न उस उठाकर फिर से वही पूछा—अखबार पर सवेर उन्होन जहा तहा नजर फेरी थी लेकिन किसी और की खबर क लिए वसी दिलचस्पी इस समय उन्ह नहा थी। बाल—कौन सुरेश ?

अखबार मे उस जगह को ढूढत हुए अचला बाली। शायद अपन ही सुरश बाबू ह।

केदार बाबू न अचरज स दोना आखें फाड ली।

बोले—अपने सुरेश बाबू ? क्या किया उन्होन ? कहा है वे।

अचला अखबार का वह स्थान पिता के हाथ पर रखते हुए बाली—पढ दखा न।

चश्मे के लिए जब टटालन हुए केदार बाबू बोले—चश्मा शायद म कमरे म ही छाड आया। तुम्ही पढा न, सुनू क्या माजरा है।

अचला न पढकर सुनाया फजाबाद स किसी सज्जन न पत्र लिखा है, उस दिन शहर क गरीबा क मुहल्ल म जारो की आग लग गई। एक ता प्लेग फैला है, तिस पर यह दुघटना लोगो क कष्ट की काइ सीमा न रही। कुछ दिना से सुरश नाम के एक भद्र युवक यहा आकर रुपय पसे, दवाई और शारीरिक श्रम लगाकर रागिया की सवा कर रहे हैं। इस मुसीबत के समय उन्ह खबर

मिली, कोई बीमार औरत किसी जनत हुए घर क अन्दर घिर गई है—उस बचान वाला कोइ नहीं।

सवाददाता न इसके बाद लिखा ह उस बचारी की जान बचान क लिए किस प्रकार स वह दुस्साहसिक बगाली युवक अपनी जान को हथेली पर रखकर लहरती आग म कूद पडा, आदि इत्यादि।

पढना खत्म हुआ। केदार बाबू बडी दर तक चुप बठे रह, फिर एक विश्वास छोडकर बोले, लेकिन यह अपना ही सुरेश ह, तुम्ह एसा लगता है?

अचला न शांत-भाव म कहा—हा य अपन ही सुरेश बाबू ह।

केदार बाबू फिर चौंक उठे। शायद अपन अजानत ही अचला के मुँह स इस अपन शब्द पर जरा ज्यादा जोर पड गया था। हो सकता है निश्चित विश्वास जताने के लिए पर केदार बाबू के कलजे म वह और ही प्रकार से लगा, और डूबता हुआ आदमी जैस तिनका पकडन के लिए दोना हाथ बढा दता है ठीक वस ही बूढे पिता न बटी क मुँह की इस बात को बडे आग्रह स कलेजे म धर लिया। यही एक बात उनके बाना पलक मारते कितना क्या असभव सभावनाओ का द्वार खोल गई जिसकी सीमा नहीं। इतन दिनो क बाद आज उनका मुखडा एकाएक आशा के आनन्द म उदभासित हो उठा। बोल—अच्छा बटी, तुम्ह क्या एसा नही लगता कि—

पिता का हठात थम जाते दख अचला न उनकी ओर दख कर पूछा—क्या नहीं लगता है बाबूजी?

केदार बाबू सावधानी स बढन की नीयत से मुँह की बात को दबा गए। बोले, तुम्ह क्या एसा नही लगता कि सुरेश हम लोगो के साथ जो व्यवहार कर गया, उसके लिए वह बहुत ही अनुतप्त है?

अचला तुरत बोल उठी मुझे ऐसा निश्चित लगता है पिताजी केदार बाबू जोर स सिर हिलाकर बोले—बेशक! बेशक! हजार बार! एसा न होता तो वह इस तरह भाग न जाता—कहा की एक मामूली स्त्री को बचाने के लिए आग म नहीं कूद पडा! मुझे ऐसा लगता है वह सिर्फ इसी अफसोस म जल मरने गया था! सच है न बिटिया!

पिताजी की बात के ठीक जवाब को टालकर अचला धीरे धीरे बोली—दूसरे को बचाने के लिए वे और भी कई बार अपनी जान खतर म डाल चुके है।

बात केदार बाबू को वैसी अच्छी न लगी। बोले—वह और बात है अचला! यह तो आग में कूदना हुआ! मौत को सीधे गले लगाना! दोनों का फर्क नहीं समझती?

अचला ने बात नहीं काटी। कहा—जी हां सो है। लेकिन जो बड़े दिल वाले होते हैं वे किसी भी अवस्था में औरों की मुसीबत की घड़ी में अपनी मुसीबत भूल जाते हैं।

केदार बाबू उत्साह में उछल पड़े। दमकते स्वर में बोले—ठीक! ठीक कहती हो! अभी तो तुमसे कहता हूं, सुरेश एक महत् प्राण व्यक्ति है! उसमें क्या किसी की तुलना हो सकती है! इतने-इतने तो लोग हैं, मगर कौन किसकी बात पर पांच पांच हजार रुपए दे सकता है तो! उसने जो भी नाहक किया, बड़े दुख में हो कर बैठा यह मैं शपथ लेकर कह सकता हूं।

मगर शपथ की कोई जरूरत नहीं थी। यह सत्य अचला खुद जितना जानती थी उसका सौवां हिस्सा भी वे नहीं जानते थे। लेकिन जवाब न दे सकी—पति की लज्जा कहीं खुल जाय, इस डर से गर्दन झुकाकर वह मौन हो रही। लेकिन बूढ़े की प्यासी आशा से वह बच न सकी। वे पुलकित हृदय से कहने लगे, आखिर आदमी देवता तो है नहीं, वह आदमी ही है! उसका शरीर दोष गुणमय है—लेकिन इसीलिए उसके दुर्बल मुहूर्त उत्तेजना को उसका स्वभाव नहीं मान लेना चाहिए। बाहर के लोग चाहे सो कहें मगर हम लोग भी अगर इसी को उसका दोष कहें तो उनसे हमारा फर्क कहां रहेगा बता? धनी तो बहुतेरे पड़े हैं, पर इस तरह से देना कौन जानता है? "रा वहां पर लिखा है, एकबार फिर तो पढ़ बेटी। आग में उस मूरछित निकाल लाया। ओः कितना बड़ा प्राण! देखना और कहां किस है? कहकर उन्होंने लम्बा निश्वास छोड़ा।

अचला वैसे ही सिर झुकाए चुप बैठी रही।

केदार बाबू कुछ देर मौन बैठे रहे फिर बोल उठे—अच्छा, तार भेजकर उसकी कुशल मंगाना क्या उचित नहीं है? उसकी इस मुसीबत में भी क्या रूसना ठीक है।

अचला ने अब की सिर उठाकर कहा—मगर हम उनका पता जो नहीं मालूम!

केदार बाबू बोले—पता! फैजाबाद में ऐसा भी कोई है जो आज अपने

सुरेश को नहीं पहचानता ? उस पर मुझे बड़ा गुस्सा आया था, लेकिन अब कुछ नहीं है एक तार लिखकर तुरत भेज दो बिटिया, उसके कुशल के लिए मैं व्यग्र हो उठा हूँ।

अभी भेज देती हूँ बाबूजी—वह तार का कागज लाने के लिए निकली कि सुरेश के सामने पड़ गई।

हृदय में गहरा दुख होने की थकावट इतनी जल्दी मनुष्य के मुखड़े को सूखा और श्रीहीन कर देती है अपने जीवन में अचला ने यही पहली बार देखा। चौंक उठी वह। कुछ देर तक किसी के भी मुँह से कोई बात नहीं निकली। उसके बाद वही बोली—बाबू जी बैठे है, चलिए अन्दर चलिए। फैजाबाद से कब आए ? अच्छे तो है ?

अनजाने उसकी बातों में कितना स्नेह झलक गया, वह खुद न समझ सकी। लेकिन सुरेश मानो टूट पड़ने को हो गया—फिर भी उसने अपने पिछले दिनों के कठोर सबक को बेकार नहीं होने दिया। तुरत उन दोनों रंग चरणों में घुटने टेक कर अपना सारा कुछ उड़ेल देने की दुर्जय आकांक्षा को जी जान से दमन करके अदब के साथ बोला—मेरे फैजाबाद जाने की बात का आपने कैसे जाना ?

अचला ने वैसे ही स्नेह भीगे स्वर में कहा—अखबार में पढ़कर बाबू जी तुरत मुझे तार भेजने को कह रहे थे। आपके लिए वे बड़े बेचैन हो उठे हैं चलिए, उनसे जरा भेंट कर लीजिए। कहकर उसने मुड़ने की चेष्टा की कि सुरेश बोला—वे बेचैन हो सकते है, मगर तुमने मुझे कैसे माफ किया अचला ?

अचला के होठों पर हँसी की हलकी सी झलक दिखाई दी। बोली—उसकी मुझे जरूरत नहीं पड़ी। मैंने एक दिन के लिए भी आप पर गुस्सा नहीं किया। आइए, अन्दर आइए।

## १३

सुरेश ने जब बताया कि वह महिम के पत्र में शादी की खबर पाकर ही

जल्दी जल्दी आ गया है तो केदार बाबू शर्म से चंचल हो उठे, मगर अचला के भाव में कुछ नहीं झलका।

सुरेश बोला—महिम के विवाह में आए बिना कैसे चलते, वरना और कुछ दिन अस्पताल में रह गया होता, तो ठीक था।

केदार बाबू ने उतावली से पूछा—अस्पताल में क्या सुरेश? वैसा कुछ तो—

सुरेश ने कहा—जी हां खास कुछ नहीं लेकिन शरीर ठीक न था।

केदार बाबू निश्चित होकर बोले—इसके लिए ईश्वर को प्रणाम करता हूँ। अचला ने जब अखबार से तुम्हारी अलौकिक कहानी पढकर सुनाई, तो क्या बताऊं तुमसे आनन्द और गर्व से मेरी आखों से आसू बहने लगे। मन ही मन कहा—हे ईश्वर, मैं धन्य हूँ कि मैं ऐसे आदमी का भी बन्धु हूँ! उन्होंने हाथ जोडकर कपाल से लगाया। कुछ रुककर बोले—मगर यह भी कहूँ, बार बार अपनी जान को खतरे में डालना भी क्या ठीक है? एक साधारण से प्राण को बचाने में अगर ऐसा एक महत् प्राण चला जाता, तो संसार का ज्यादा नुकसान नहीं होता?

नुकसान ऐसा क्या होता! कहकर सलज्ज भाव से नजर घुमाते ही उसने देखा अचला अब तक एक टक उसी के चेहरे की तरफ ताक रही थी। अब उसने नजर झुका ली।

केदार बाबू बार-बार कहने लगे ऐसी बात जबान पर भी नहीं लानी चाहिए। क्योंकि अपनों के दिल में इससे कितनी चोट लगती है इसका ठिकाना नहीं।

सुरेश हसने लगा। बोला अपना तो मुझे कोई नहीं है केदार बाबू! हैं एक फूफी। मेरे गुजर जाने से उन्हीं को जो तकलीफ होगी।

गरचे सुरेश हँसते हुए बोला—तो भी यह सुनकर केदार बाबू की आखें गीली हो गई कि उसे कोई नहीं है। बोले, केवल फूफी को ही कष्ट होगा सुरेश? नहीं नहीं इस बूढ़े को भी कुछ कम कष्ट नहीं होगा बेटे! खैर, मैं जब तक जिन्दा हूँ, इन कुछ दिनों अपने शरीर की हिफाजत रखो सुरेश, यही मेरा एकांत अनुरोध है।

घडी में रात के दस बजे। लौटने को तैयार होकर अचानक हाथ जोड

कर उसने कहा—एक विनती है मेरी महिम का विवाह तो मेरे ही घर से होगा, यही तै हुआ है, लेकिन वह तो परसो होगा, कल रात भी लेकिन इस नाचीज के घर चरणो की धूल दनी पडेगी—नही तो मुझे यह यकीन न आयगा कि मुझे माफी मिली है। कहिए, यह भीख देंगे आप ?—झुककर वह केदार बाबू के पैरा की धूल लेने गया।

केदार बाबू हडबड मे जवदस्ती उसे इससे राकन लगे कि उसकी अस्फुट आह स वह उछल पडे। पीठ पर कुछ जल जाने के कारण पट्टी बँधी थी—ऊनी चादर डालकर सुरेश ने उसे छिपा रक्खा था। अनजाने मे खीचा-तानी करते समय उन्हाने पट्टी ही खिसका दी थी। खुले जख्म को दखकर केदार बाबू डर से चीख पडे। बिजली की तरह झट अचला आ पहुँची और पट्टी को थाम कर बोली—ठहरिए मैं ठीक से बाध देती हूँ। सुरेश को बगल के साफे पर बिठाकर जतन मे पट्टी बाँधने लगी।

केदार बाबू धप्प से अपनी कुर्सी पर बठ गए—आखे ब द कर ली। बडी देर तक उनके मुँह से शब्द ही न निकला। कोच की पीठ पर अपनी दोना केहुँनी टेककर पीछे खडी हो अचला पट्टी बाध रही थी। देखते ही देखते उसकी दोनो आखें आसुआ स भर उठी और धीरे धीर मुक्ता जैसी बूँद एक पर एक टपकने लगी। लेकिन सुरेश कुछ भी न देख पाया, इधर का उसे ध्यान ही न था। वह केवल निमीलित नयनो स्थिर बैठा अपने अपार प्रेम की आधार के कोमल हाथो के करुण स्पश का हृदय म अनुभव करता रहा।

किसी कदर अपने आँसू पोछकर बीच मे अचला ने चुपचाप कहा—आज मेरे आगे आपका एक प्रतिज्ञा करनी होगी।

सुरेश का ध्यान टूटा। वह चौका। लेकिन उसने भी उसी कोमलता से पूछा—कसी प्रतिज्ञा ?

इस प्रकार से आप अपनी जान नही बर्बाद कर सकते।

लेकिन जान ता मैं जानकर नही दे गया था ! दूसरे की मुसीबत मे मुझे ही होशहवास नही रहता—यह तो मेरे बचपन का स्वभाव है अचला !

अचला न वात नही काटी, लेकिन साथ ही उसके एक निश्वास छूट गया सुरेश का इसकी खाक भी खबर न हुई। पट्टी बँध गई तो सुरेश ने खडे होकर

कहा—कल लेकिन इस गरीब के घर पैरों की धूल देनी पडेगी—उसकी आँखें भर आइ, पर आवाज मे कोई व्याकुलता नही झलकी।

सिर हिलाकर अचला ने कहा—अच्छा।

केदार बाबू को नमस्कार करके सुरेश ने हँसकर कहा—देखिए निराश न करेंगे। और फिर एक बार अचला की तरफ ताककर अपना निवेदन चुपचाप जताकर वह धीरे धीरे चला गया।

दूसरे दिन समय पर सुरेश की गाडी पहुँच गई। केदार बाबू तैयार ही थे, बेटी के साथ ‍याते पर चल पडे।

सुरेश के फाटक के अन्दर दाखिल हाते ही केदार बाबू दग रह गए। सुरेश बडा आदमी है, यह मालूम था, लेकिन कितना बडा केवल अन्दाज से इसका अनुमान करना था। आज इस बात म वे निश्चित हो गए।

आकर सुरेश ने दाना का स्वागत किया। हँसकर बाला—महिम की जिद लेकिन तोडी न जा सकी। कल दोपहर से पहले इस घर मे कदम रखने को वह हर्गिज तयार नही हुआ।

केदार बाबू न इस बात का कोई जवाब नही दिया। तीनो जन बैठक मे पहुँचे कि एक प्रौढ स्त्री दरवाजे की ओट से अन्दर आकर अचला का हाथ पकड कर उसे भीतर लिवा गई। उनके कमरे के फर्श पर एक कालीन बिछा था। उसी पर जतन से अचला का बिठला कर अपना परिचय दिया। बोली—नाते मे मैं तुम्हारी सास होती हूँ बहू। मैं महिम की फूफी हूँ।

अचला ने प्रणाम करके उनके परो की धूल ली। अचरज से उनकी तरफ देखकर पूछा—आप यहाँ कब आइ ?

महिम की फूफी हैं, इसका उस पता न था। प्रौढा उसके अचरज का कारण समझ गई। हँसकर बोली—मैं यही रहती हूँ बिटिया, मैं सुरेश की फूफी हूँ। महिम भी ता मेरा बिराना नही, इसलिए उसकी भी फूफी लगती हूँ।

उनके स्वाभाविक कोमल स्वर म कुछ ऐसा ही स्नेह और हार्दिकता जाहिर हुई कि अचला का हृदय आलाडित हा उठा। उसके माँ नहीं, इस कमी को जरा भी पूरा करे, घर मे ऐसी काई औरत कभी नही रही। होश होन तक पिता के ही स्नेह मे पली, लेकिन उस स्नेह ने उसके हृदय क कितने अश का खाली रख छोडा था, वह एक पल मे साफ झलक पडा, जब पराए घर की, पराई फूफी ने

'बहू' कहकर उसे आदर से बैठाया। शुरू में इस नए सम्बोधन से वह शर्मा गई थी—पर इसकी मधुरता, इसका गौरव उसके नारी हृदय की गहरी गहराई में देर तक गूँजता रहा।

देखते ही देखते दोनों में बातों का सिलसिला जम गया। अचला ने लजाते हुए पूछा—अच्छा फूफी, आपने तो मुझे अपने पास बैठाया, ब्राह्म लड़की के नाते घृणा तो नहीं की आपने ?

फूफी ने झट अपनी अँगुली के छोर से उसका चुम्बन लेते हुए कहा—तुमसे घृणा क्या करूँ बिटिया ! जरा हँसकर कहा—चूँकि हम हिन्दू हैं इसलिए ऐसे निर्बोध, इतने हीन हैं कि अलग धर्म होने के नाते तुम्हारी जैसी लड़की को भी पास बैठाने में हिचकें ? घृणा तो दूर की बात है।

अचला को बड़ी शर्म आई। बोली—मुझे माफ करें फूफी। मुझे मालूम नहीं था। अपने समाज के बाहर की किसी स्त्री से मैं कभी मिल नहीं पाई, केवल सुना था कि वे हमसे बहुत घृणा करती हैं, यहाँ तक कि साथ बैठने खड़े होने से भी उन्हें स्नान करना पड़ता है।

फूफी ने कहा—वह घृणा नहीं है बेटी वह एक आचार है। हमारे बाहरी आचरण देखकर बहुत बार हम ऐसी ही लगती हैं, पर सच मानो—वास्तव में घृणा हम किसी से नहीं करती। हमारे गाँव में बागदी[1] चाची अभी भी जिंदा है। उसे मैं कितना चाहती हूँ, कह नहीं सकती।

कुछ क्षण रुककर बोली—अच्छा तुमसे एक बात पूछूँ सुरेश से ऐसी सुन-कर या आज मुझे देखकर तुम्हें इसकी याद आई !

सुरेश का जिक्र आ गया, सो अचला धीरे धीरे बोली—हाँ एक बार उन्होंने भी कहा था।

फूफी ने कहा—उसकी यही आदत है। कुछ ख्याल आए कि खैर नहीं, चारों तरफ वही कहता फिरेगा। ब्राह्मो से कभी मिले बिना ही उसने सोच लिया कि वह उनसे बहुत घृणा करता है। इसी बात पर कितनी बार महिम से लड़ाई होते होते रही। मगर मैंने ही तो उसे एक प्रकार से पाला है—मैं जानती हूँ, वह किसी से घृणा नहीं करता—करने की मजाल भी नहीं। यही समझो न, जिस रोज से उसने तुम लोगों को देखा—

1 जात विशेष।

लेकिन अपनी बात को पूरी न कर सकी, अचला के मुँह पर नजर पड़ते ही सहमा थम गई। फूफी उन दोनों के सम्बन्ध के बारे में यहाँ तक जानती हैं, यह न समझते हुए भी अचला को सन्देह हुआ कि कम से कम कुछ तो फूफी जानती हैं। कुछ क्षण के लिए दोनों चुप हो रहीं। अपनी खातिर शर्म को दबाकर अचला ने दूसरी बात छेड़ दी। कहा, सुरेश बाबू को क्या आपने ही पाला था फूफी ?

आवेग-विभोर होकर फूफी ने कहा—हाँ बेटी, मैंने ही तो पाला है। दो ही साल की उम्र में मा-बाप को खो बैठा था। मेरा वह भार अभी तक सिर से नहीं उतरा। किसी की दुःख-तकलीफ, आफत-मुसीबत वह सह नहीं सकता, प्राण का आशा-भरोसा छोड़कर खतरे में कूद पड़ता है। मैं जो दिन-रात किस कदर डरते-डरते काटती हूँ, यह तुमसे क्या बताऊँ बहू !

अचला ने धीरे से पूछा—फैजाबाद वाली घटना सुनी आपने ?

फूफी ने गर्दन हिलाकर कहा, क्या नहीं बहू, सुनी है। तभी तो भगवान से मनाती रहती हूँ, हे भगवान, जिसमें इन आँखों अब मुझे वह न देखना पड़े—माथे पर लात रखकर मुझे रसातल में मत बोर देना। यह मैं हर्गिज बर्दाश्त नहीं कर सकूँगी। कहते-कहते उसका गला रुँध गया। उनके मातृ-स्नेह से सनी उस कातर प्रार्थना को सुनकर अचला की आँखें सजल हो गईं। करुण कण्ठ से बोली, आप मने क्यों नहीं करती फूफी ?

आँसुओं के अन्दर से जरा हँसकर फूफी ने कहा—मना ! मेरे मना से क्या होना बेटी ? जिसके मना से कुछ हो सकता है, मैं दिन-रात माला ले उसी को तो खोजती फिरती हूँ। परन्तु वह तो जिस-तिस लड़की का काम नहीं। जो उसे बचा सके, वैसी लड़की भगवान न मिलाएँ तो मैं कहाँ पाऊँ ?

अचला थोड़ी देर चुप रही। उसके बाद पूछा—आपकी पसन्द की लड़की कहीं मिल नहीं रही है ?

फूफी ने कहा—तुमसे कहा तो बिटिया, भगवान न मिलाएँ तो कोई कभी नहीं पाता। जो सुरेश इस बात पर कान ही नहीं देता, वह जब एक दिन खुद जाकर बोला कि फूफी अब तुम्हें एक दासी मैं ला दूँगा, उस दिन मुझे कितनी खुशी हुई, वह शब्दों में नहीं बताई जा सकती। मन ही मन आशीर्वाद देकर बोली—तेरे मुँह फूल-चन्दन बेटे ! वह दिन कब आयगा, जब बहू बेटे को परछ

कर घर लाऊँगी ! मैंने लाख कहा, सुरेश एक बार मुझे दिखा तो ला, पर किसी भी तरह राजी न हुआ। हँसते हुए बोला—जिस दिन आशीर्वाद देने जाओगी, दिन ही तै कर आना। उसके बाद अचानक एक दिन आकर बोला —मामला ठीक बैठा नहीं फूफी मैं रात को पश्चिम जा रहा हूँ। मैं पूछती रह गई क्या ठीक नहीं बैठा खोलकर बात बता मुझे, लेकिन कोई बात न बताई, रात ही चला गया। मैंने मन में सोचा, केवल मेरे बेटे की इच्छा से ही तो नहीं होने का, उस लडकी को भी तो जन्म जन्मांतर की तपस्या चाहिए। है न बेटी ?

अचला ने चुपचाप सिर हिलाया। अब उसने समझा कि वह लडकी कौन है फूफी यह नहीं जानती। एक बार तो उसे लगा कि कलेजे पर से एक पत्थर उतर गया—मगर वह पत्थर यों ही नहीं उतरा, कलेजे के बहुत से हिस्से को पीस खराब गया है यह वह दूसरे ही क्षण महसूस करने लगी।

खाने की तैयारी हुई, तो फूफी ने अचला को अलग बैठाकर खिलाया और साथ-साथ एक एक कमरा, एक एक चीज घुमाकर दिखाने के बाद एक निश्वास छोडती हुई बोली—बेटी, भगवान की दया से कमी किसी बात की नहीं—मगर यह तो मानो लक्ष्मीविहीन बैकुंठ है ! कभी कभी तो मेरे आँसू रोके नहीं रुकते !

नौकर ने आकर खबर दी, बाहर केदार बाबू जाने के लिए तैयार हैं। अचला ने उन्हें प्रणाम किया, पैरों की धूल ली। फूफी ने उसका हाथ थामकर जरा झिझकती हुई चुपचाप कहा—एक बात पूछूँ अगर और कुछ न सोचो !

अचला उनकी ओर देखकर सिर्फ जरा हँसी।

फूफी बोली—सुरेश से मैंने तुम्हारे और महिम के बारे में सब कुछ सुना है। उसी में यह सुना कि चूँकि वह गरीब है, शायद इसलिए तुम्हारे पिता की इच्छा न थी। सिर्फ तुम्हारी ही वजह से—

सिर झुकाकर अचला ने धीमे से कहा—सच ही है फूफी।

फूफी अकस्मात् मानो उमड़े आवेग से अचला के दोनों हाथ पकड़कर बोल उठीं—यही चाहिए बेटी ! जिसको प्यार किया है, उसके सामने रुपया पैसा, धन दौलत की क्या बिसात ! मन में कोई गिला न रक्खा। मैं महिम को खूब जानती हूँ, वह ऐसा ही लडका है कि उसके लिए जितना ही दुःख चाहे क्यों न

उठाओ—भगवान की दया से एक दिन वह सब सार्थक होगा। भगवान इतने बड़े प्यार का हर्गिज हेठी नही कर सकते, यह मैं निश्चित कह सकती हूँ।

अचला ने झुककर फिर एक बार उनके चरणों की धूल ली। उसकी ठोडी को छूकर चुम्बन करते हुए फूफी बोली,—अहा! एक ऐसी बहू के साथ मैं कहीं गिरस्थी कर पाती।

सुरेश ने जाकर दोनों को गाडी पर सवार कराया और नमस्कार करके चुपचाप लौट आया। लौटते समय लालटेन की रोशनी मे उसके चेहरे ने पल भर अचला का ध्यान खींचा, उस चेहरे में क्या जो था ईश्वर जानें, लेकिन रुलाई उसके कण्ठ तक उमड आई—घोडा गाडी तेजी से रास्ते पर पहुँच गई। रास्ते की भीड कम हो गई थी उधर देखकर उसे अचानक लगा, अब तक वह मानो एक बहुत बडा ख्वाब देख रही थी—वह ख्वाब दुःख का था या सुख का कहना मुश्किल था। केदार बाबू अब तक चुप ही थे—शायद सुरेश के ऐश्वर्य का रूप उनके दिमाग मे चक्कर काटता रहा था। अचानक एक लम्बा निश्वास लेकर बोले—बेशक धनी है!

लेकिन लडकी की ओर से कोई चेष्टा न झलकी। उत्साह के अभाव मे बाकी रास्ता वे चुप ही रहे।

गाडी जब उनके दरवाजे पर लगी और कोचवान दरवाजा खोलकर हटकर खडा हो गया, तो मानो फिर एक बार उनको चेत हुआ। एक उसास खींच कर बोले—सुरेश को हम कोई नही पहचान सके! देवता है वह!

## १४

आज अचला का विवाह था। विवाह मंडप की राह मे एक पल के लिए सुरेश पर नजर पडी थी। उसके बाद वह कहाँ जो गायब हो गया, केदार बाबू के यहाँ रात भर में उसका पता न चला।

ब्याह हो गया। दो एक दिन अचला के मन मे उथल पुथल सी होती रही।

उम रात सुरश को फूफी
उसका अन्त हुआ ।

महिम की अटल ग
बाहरी प्रकाश उसके चेह
मुखडा देखकर अचला का
पति क चरणो पर सिर रख
तुम्हारे साथ जहा भी जि
से तुम्हारा झापडा ही मेर

ससुराल जान के दिन
ने कहा—मैं आशीर्वाद क
सामना करते हुए जीवन
तुम्हारा कल्याण करें ।—
मे चले गए ।

उसके बाद सावन के
थमे मघ भर आकाश और
पर चढकर अचला अपनी
नए विवाह का आधा आन

देहात स उसका परिच
दरिद्रता क हजारा सकेत के
खुशबू थी । पालकी से उत
तरफ देखा कही से भी वि
का न छू सका । उसकी कर
है—कच्चे मकान क कमरे
छोटी और सकरी—ऊपर
साथ सकरी थी । इसी घर

1 बगालिया की एक वि
एक कपडे म वर वधू
दूसरे को एक नजर दे

। जो कही, वे बातें वह भूल नही पा रही थी—आज

ीरता आज भी बनी रही । खुशी गम का कुछ भी
पर न दीखा । तो भी शुभ दृष्टि[1] की घडी वही
हृदय आनन्द और माधुर्य म भर उठा । मन ही मन
कर अपन तई बोली—प्रभु, अब मुझे कोई डर नही,
अवस्था मे ही क्या न रहूँ, वही मेरा स्वग है । आज
राजप्रासाद है ।

कुरत के आस्तीन से आँखे पोछते हुए केदार बाबू
ना हूँ बेटी, स्वामी के साथ दु ख और गरीबी का
के माग पर, कत्तव्य के पथ पर आगे बढो । ईश्वर
हते हुए उसी तरह आँखें पोछत पोछत बगल के कमरे

एक धुँधले से दिन का दोपहर मे माथे पर बारिश
ीचे सँकरी कीच भरी फिसलन वाली राह से पालकी
ससुराल पहुँची । लेकिन इतने स ही रास्ते मे उसके
उड गया ।

य छापे के हल्का से ही था । उस परिचय मे दु ख
बावजूद एक एक पक्ति म कविता थी, कल्पना की
र कर घर के अन्दर जाकर उसने एक बार चारो
सी ओर से भी कवित्व का जरा भी कुछ उसके जी
पना का गाँव प्रत्यक्ष म ऐसा आनन्दहीन, ऐसा सूना
ऐसे सील वाले, अँधेरे दरवाजे, खिडकियाँ इतनी
ास का छप्पर इतना भद्दा इसे वह स्वप्न म भी न
म जिन्दगी बितानी पडेगी । यह सोच कर उसका

ोष प्रथा, जब शादी के मडप पर अन्य नेगा के पहले
को आट कर दिया जाता है और दोनो परस्पर एक
खते हैं ।

कलेजा मानो टूक टूक होने लगा। पति का सुख, विवाह की खुशियां सब माया मारीचिका सी उसके हृदय से तुरन्त काफूर हो गई। घर में सास, ससुर, ननद, देवरानी, कोई नहीं। दूर के रिश्ते की एक दादीजी स्वेच्छा से वर वधू के परिछन के लिए उस टोले से आई थी। ब्याह का जिस साज पुशाक की वह आदी थी, उनकी निहायत कमी देखकर वह अ यन्त अचरज से कुछ देर चुप खड़ी रही, अन्त में बहू का हाथ पकड़ कर उसे अन्दर ले जाकर बिठा लिया। टोले की जो औरतें बहू को देखने के लिए दौड़ी आईं अचला की उम्र देखकर उन्होंने एक दूसरे का मुँह देखा, एक दूसरे के लिए बदन पर चिकोटी काटी और उनके लौटते समय अस्फुट स्वर में बरह्म, म्लेच्छ आदि दो ऐक मोटे शब्द भी अचला के कानों पहुंचे।

बात की बात में तमाम गांव में यह बात फैल गई कि यह बात सच है कि महिम एक म्लेच्छ लड़की को उठा ला या है। विवाह के पहले ही ऐसी एक अफवाह आन्दोलन और आलोचना चल चुकी थी अब बहू को देखकर किसी को तिल भर भी सन्देह न रहा कि जो बात फैली थी वह सोलह आने सही है।

पड़ोसिनों के लौट जाने पर दादी जी ने आकर कहा—तो बहू, आज अब चलती हूँ! काफी दूर जाना है और बिना गए चलने का नहीं छोटा पोता—इत्यादि कहते कहते आग्रह अनुरोध का मौका दिये बिना ही वह चली गई। वह एक रात भी साथ कर ही अब तक जा नहीं पा रही थी और जाने को छटपटा रही था अचला यह ताड़ गई थी। दीदी जी का दोष भी न था। अगर वह जानती कि मामला आखिर इस हद पर पहुँचेगा तो शायद आती भी नहीं। क्योंकि गांव में रहे और इन बातों से न डरे देहात के इतिहास में इतने चौड़े कलेजे का उदाहरण दुर्लभ है।

दादी जी के चले जाने के बाद नौकर जई उड़िया रसोइया और मके से साथ आई हुई दाई हरिया की मां के सिवाय विवाह वाला घर बिल्कुल सूना हो गया। थोड़ी देर के लिए बारिश थम गई थी—फिर बूंदा बांदी शुरू हो गई। हरिया की मां नजदीक आकर बोली—दीदी ऐसा घर तो मैंने देखा ही नहीं—कोई कहीं नहीं—

अचला मुँह नीचा किए बैठी थी। अनमनी सी सिर्फ 'हूँ' बोली।

हरिया की मा ने फिर कहा—पहुन को भी तो नहीं देख रही हूँ ? बस एक बार झलक दिखाकर जा गए—

अचला ने इस बात का भी जबाब नहीं दिया।

वन-जगल भरे इस शून्य पुरी मे हरिया की मा का अपना जी चाहे जितना धकधक करता हो, अचला को उसने छुटपन से ही पाला था उसे जरा सचेत करने की गज से बोली—डरना क्या, आखिर हम पानी मे तो नही आ डूबे हैं ! पहुना आ जाये, सब ठीक हो जायगा। जब तक ये कपडे उतारो मैं बक्स मे से कपडे निकाल देती हूँ—

अभी छोडो हरिया की मा—कहकर अचला उसी तरह सिर झुकाए काठ की मूरत सी बैठी रही। जीवन का सारा स्वाद, सारी खुशबू उड चुकी थी।

बारिश जम गई। उस बढती जाती वर्षा मे कब जा दिन की क्षीण आभा बुझ गई, कब सावन के गाढे मेघ स्तर को चीर कर उदास गाव म सध्या उतरी, कुछ भी पता न चला। सिर्फ अँधेरे कमरे के कोने कोने गीला अँधेरा चुपचाप गाढा होने लगा। जद्दू ने आकर कमरे मे लालटेन रख दी। हरिया की माँ ने पूछा—और पहुना कहा है ?

क्या पता कहकर जद्दू लौटने लगा। उसके मुहफट और भद्दे जवाब से हरिया की मा ने शकित होकर कहा—यह क्या पता क्या हुआ ? वे बाहर नही हैं क्या ?

नही—कहकर जद्दू चला गया। यह खूब समझ म आया कि वह इन आगतुको मे प्रसन्न नही है। बहुत भयभीत होकर हरिया की मा अचला के पास जाकर बोली—रग-ढग तो मुझे अच्छा नही दीख रहा दीदी ! दरवाजे की कुण्डी लगा दूँ ?

अचला ने अचरज स कहा—कुण्डी क्या लगाएगी ?

हरिया की माँ छुटपन म ही गाव छोडकर कलकत्ते आई थी फिर कभी नहीं गई। देहात के चोर डकैत, लठैत आदि के किस्सा की याद के सिवा सब कुछ उसके लिए धुँधला हो गया था। बाहर के अँधेरे पर एक चकित दृष्टि डाल कर अचला के बदन से सटते हुए उसने कहा—रहना मुश्किल है दीदी ! कहते ही कहते उसके बदन के रोएँ खडे हो गए।

ठीक ऐसे समय आगन मे से आवाज आई—दीदी जी कहाँ हैं—और

कहते कहत ही बीस इक्कीस साल की एक दुवली पतली सी लडकी भीगती हुई दरवाज के पास आकर खडी हुई, बोली—पहले आपको प्रणाम कर लू दीदीजी, फिर आद कपडे वदलूँगी—और अचला के परो के पास झुककर उसन प्रणाम किया तथा अचला के मुँह के पास लालटेन उठाकर देखते हुए चीख उठी, सझले भैया जी सझले भैया !

घर आकर महिम खुद इस लडकी को लान गया था। बगल के कमर से आवाज आई—क्या है मणालनी इधर आओ न, बताती हूँ।

कमर के बाहर खडा होकर महिम न कहा—बोल ?

मृणाल न लालटेन की रोशनी म और एक बार अच्छी तरह से अचला का मुँह दखकर कहा—न तुम्ही जीत गए ! मुझस शादी करके ठगा जाते भैया तुम !

महिम न बाहर स डाट बताई—तू मेरी बात मानगी नही मणाल ! फिर दिल्लगी ! नही मानगी तू ?

वा—दिल्लगी कसी ! अचला की आर देखकर बोली—मजाक नही दादीजी कसम ले ला। अच्छा अपन उनस ही पूछ देखो कि कभी उन्होन मुझ का पसन्द किया था कि नही ?

महिम न कहा—ता तू करती रह बकबक मैं बाहर चला।

मणाल बाली—सो जाओ मैंने कुछ पकडकर रक्खा है तुम्ह बडे स्नेह से एक बार अचला की ठाडी को हिलाकर कहा—तुम्ही बताओ बहन डाह नही हाती ? इस गिरस्ती की मालकिन मैं ही होने वाली थी ! मगर मरी मुँह जली माँ न क्या जा मतर सँझले भैया के कानो भर दिया कि मैं इसे फूटी आखो से भी न सुहान लगी। अर जद्दू—घोषाल जी कहा गए ?

जद्दू न कहा—हाथ-पाव धान के लिए पोखर की तरफ गए !

ऐं ! इस अधेरे म पाखर की तरफ ? मणाल का हसता मुखडा एक ही क्षण म दुश्चिता स मलिन हा गया। घबरा कर बोली—जद्दू, ज़रा लालटेन लेकर दख भया उन्हें। बूढा आदमी कहीं गिर पडकर हाथ पाव ताड लेगा।

उसके बाद अचला की तरफ दखकर लजाती हुई बाली—क्या नसीब लकर आई थी दादी जी—वहाँ के एक महाबूढ का ला दिया मुझे—उसकी सवा करते-करते और उस सम्हालते सम्हालते ही जान गइ मेरी ! अच्छा बहन पहले मैं

गीले कपडे बदल आऊँ फिर बातें होगी। मगर सौत कहकर नाराज न होना, कहे देती हूँ, मैं अपने बुड्ढे का भी हिस्सा दूँगी तुम्हें !—कहकर हँसी की छटा से सारे कमरे को चमकाती हुई वह जल्दी से चली गई।

इस तरह के हँसी मजाक स अचला को कभी मावका नहीं पटा। मारा मजाक उसे ऐसा भद्दा और कुरुचिपूर्ण लग रहा था कि लज्जा के मारे वह सकुचा गई। वह सोच भी नही सकती थी कि ऐसी निलज्ज प्रगल्भता भी किसी औरत मे हो सकती है। लिहाजा यह रसिकता उसमे जीवन भर की शिक्षा और संस्कार की बुनियाद पर चोट पहुँचा रही थी। इतने पर भी उसे लग रहा था कि इसके आ जाने से उसके निर्वासन की पीडा का आधा तो छूमतर हो गया, और यह कौन है, कहा स आई, इससे नाता क्या है—ये सब बातें जानन के लिए वह उत्सुक हो उठी।

हरिया की माँ न पूछा—यह है कौन दीदी ? बडी मजाकिया है।

अचला ने गदन हिलाकर सिफ 'हाँ' कहा।

मृणाल कपडे बदल आइ। बोली—हँसी मजाक करके ही गई शादीजी, अपना असली परिचय अभी तक नही दिया। मगर परिचय भी वैसा क्या है ! असल म तुम्हारे वे' जो हैं, वे मेरी मा के बाप हैं। इसीलिए मैं छुटपन से सँझले दादा जी कहा करती हूँ। इतना कहकर वह एक क्षण चुप रहकर फिर बोली—मेरे पिता और तुम्हारे ससुर, दोनो बडे दोस्त थे। अचानक गाडी के नीचे आ जान से पिताजी का जब हाथ टूट गया और नौकरी चली गई, तो तुम्हारे ससुर ने सबको अपने यहाँ जगह दी। उसके बहुत दिना के बाद मेरा जन्म हुआ। सँझले दादा उस समय आठ साल के थे। उनकी माँ तो उनके जनमत ही चल बसी थी—दो बडे लडके पहले ही डिफ्थिरिया मे गुजर चुके थे। सो आन ही मेरी माँ इस घर की सब कुछ हो गई थी। उसके बाद मेरे पिताजी चल बसे—हम लोग यही रहे। उसके बाद तुम्हारे ससुर गुजर गए हम लोग लेकिन रही गए यहाँ ! पाँच साल हुए, पलासी के घोषाल परिवार मे मेरी शादी करके सँझले दादा जी ने मुझे दूर हटा दिया ! माँ जिंदा होती, तो भरोसा भी होता।

बडी बहू यहाँ हो ?—कहते हुए नाटे कद के गोरे-गोरे से एक बूढे सज्जन दरवाजे के पास आकर खडे हुए।

मणाल न कहा—आओ आओ। अचला की ओर देखकर होठ दबाए हँसती हुई बोली—दादी जी यही हैं अपने मालिक। अच्छा, तुम्ही बताओ, इस खूसट बूढे के बगल म साहनी हूँ मैं ? इस जन्म का रूप यौवन सब मट्टी नही हो गया बहन ?

अचला जवाब क्या दे, लाज से उसन सिर झुका लिया।

उन सज्जन का नाम था भवानी घोपाल। हँसकर बोले—आप इनकी सुनें मत दादीजी—सब सफेद झूठ ! इनकी यही कोशिश रहती है कि मुझे उडा दे। नही ता मेरी उम्र तो महज बावन या ति—

मृणाल बोली—चुप भी रहो, बहुत हुआ। यह सँझले दादा मेरा कितना बडा दुश्मन है, भगवान ही जानत है। मुझे चारा तरफ स मट्टी कर छोडा—अच्छा, इस बूढे के जिम्मे देन के बजाय हाथ पाव बाधकर मुझे पानी म डाल देना बेहतर नही होता दादीजी ! तुम्ही कहो बहन।

अचला वैस ही सिर झुकाए बठी रही।

घोपाल धीरे धीरे अन्दर आए। अचला के लजीले झुके हुए मुखडे को कुछ दर चुपचाप देखत रहकर अचानक बोल उठे—आपन मेरी जान बचाली दादीजी, अब जाकर इस छोरी का गुमान जाता रहा। अपनी खूबसूरती के घमण्ड स यह आख कान से देख ही नही पाती थी। और पत्नी की ओर देखकर बाले—क्यो, हुआ न ? जगली इलाके म अब तक गीदड राजा था, शहर का रूप किसे कहत हैं, आख खोलकर देख लो !

मृणाल बोली—अच्छा, यह बात ! मेरा घमण्ड जहाँ है—किसी की मजाल जो ताडे ? कहकर उसने पति की तरफ छिपा कटाक्ष किया, लेकिन अचला ने यह देख लिया।

घोपाल हँसकर बोले—सुन लिया न दादीजी—जरा सम्हलकर रहिएगा—इन दोनो म जैसी पटती है जसा आना-जाना है कि कुछ कहा नही जा सकता—और मैं तो खूसट बूढा ठहरा, बीच मे हूँ तो क्या, न हूँ तो क्या ! अपने उनको सम्हाले रहँगी—इस बूढ की यही बिनती है।

मृणाल, तमाम रात तुम लाग यही करती रहोगी ?

क्या करू ?

रसोई की तरफ नही जायगी ?

मृणाल उछल पडी, उफ्, कैसी गलती हो गई। उस डडिया रसोइया को पहले ही देख आना चाहिए था। अच्छा, तुम लोग जाओ वाहर, हम जा रही है।

महिम ने पूछा—हम कौन ?

मणाल न कहा—मैं और दादी जी। फिर अचला से वोली—जव मैं आ गइ हूँ, ता इस गिरस्ती का सब कुछ तुम्ह समझाकर तब जाऊँगी।

महिम और भवानी वाहर चल गए। मृणाल ने अचला स कहा—मुझे दो दिन पहले ही आना चाहिए था। मगर साम के दमे के चलत घर से निकल ही न पाई। अच्छा तुम कपडे वदल डाला, मैं इतन म आती हूँ, आकर तुम्ह ले चलूँगी। मृणाल रसोई मे चली गई।

वारिश थम गई थी और गाढी वदली छँटकर नौमी की चादनी म आसमान बहुत कुछ साफ होता आ रहा था।

रसाई का सारा इतजार करके मृणाल आकर अचला के पास वैठी। उसका एक हाथ अपने हाथ म लेकर वोली—इस दादीजी से सँझली दी कहना कही अच्छा है क्यो सँझली दी ?

अचला न धीमे से कहा—हाँ।

मृणाल वोली—रिश्ते मे गरचे तुम वडी हो, मगर उम्र मे मैं वडी हूँ। मुझे भी तुम मृणाल दीदी कहना, क्या ?

अचला ने कहा—अच्छा।

मृणाल वोली—आज तुम्ह रसोई दिखा लाई। कल एक वारगी भडार की कुञ्जी अचरे के छोर मे वाध दूँगी, है न ?

अचला न कहा—कुञ्जी से मुझे काई काम नही वहन।

मृणाल वोली—काम नही है ? वाप र, यह कसी वात। भडार आखिर कोई मामूली चीज है सँझली दी कि कह रही हो कुञ्जी से कोई काम नही ? मालकिन की रियासत की वही तो राजधानी है।

अचला वोला—वला स राजधानी है, मुझे उसका लोभ नही। लेकिन तुम पर मुझे वहुत लोभ है। इतनी आसानी से छोड नहीं देने की मृणाल दीदी !

मृणाल ने दोना वाहा म अचला का लपट लिया। कहा—सौत को झाडू मार कर भगान के बजाय रोक रखना चाहती हो, तुम्हारी यह कैसी अक्ल सँझला दी ?

अचला ने धीमे धीमे कहा—मगर तुम्हारे ये मजाक अच्छे नहीं लगे बहन। इधर क्या सब ऐसे ही मजाक करते हैं?

मृणाल खिलखिलाकर हँस उठी—नहीं नहीं दादीजी, सब नहीं करते मैं ही करती हूँ। सबका यह चीज नसीब कहाँ कि करें?

अचला बोली—नसीब भी हो तो हम ऐसी बात जबान पर नहीं ला सकती बहन! हमारे कलकत्ते के समाज में बहुत से लोग तो शायद यह सोच भी नहीं सकते कि कोई भद्र स्त्री यह सब जबान पर ला भी सकती है!

मृणाल मगर जरा भी लज्जित न हुई, बल्कि अचला को फिर एक बार गले से लगाते हुए बोली—तुम्हारे शहर की कितनी भद्र महिलाएँ इस तरह से गले लगा सकती हैं? यह तो कहो सँझली दी? सबमें क्या सब काम होता है? तुम्हें मैंने कितनी देर का देखा है, इसी में ऐसा लगता है कि मुझको बहन न थी, एक छोटी बहन मिल गई। और यह महज बात नहीं जिन्दगी भर मुझे इसका सबूत देना पड़ेगा याद रखना। इसमें हँसी मजाक नहीं चलने का।

अचला पढ़ी लिखी थी। गाँव के इस विरोधी समाज में उसका भावी जीवन कैसे कटेगा, यह वह घर में कदम रखते ही समझ गई थी। उसने इस मौके को सहज ही नहीं छोड़ दिया। परिहास को गम्भीरता में बदलकर बोली—अच्छा मृणाल दीदी सच ही क्या इसका सबूत तुम जीवन भर जुगाती रहोगी?

मृणाल ने कहा—आखिर हम शहर की तो हैं नहीं बहन—बेशक जुगाना होगा! तुम्हें छूकर जो शपथ ली, मर जाऊँ मगर पलटा तो इस सकती नहीं।

उस बात को और ज्यादा न चलाकर अचला ने दूसरी बात उठाई। हँस कर कहा—जल्दी चली नहीं जाओगी, यह भी बस ही कहा।

मृणाल हँस पड़ी। बोली—बेवकूफ जानकर और भी फंदे में डालना चाहती हो सँझली दी? मगर मैंने तो पहले ही कह दिया, ठीक से तुम्हें सब समझाए बुझाए बिना न मानूँगी।

अचला ने सिर हिलाकर कहा—इस चीज समझने का आग्रह मुझे बिलकुल नहीं।

मृणाल ने कहा—वही मैं कर लूँगी, तब जाऊँगी। ज्यादा दिन तो घर छोड़ने की गुंजाइश नहीं बहन! जानती हो, कितनी बड़ी गिरस्ती है मेरे माथे के ऊपर?

अचला ने सिर हिलाकर कहा—नहीं नहीं जानती।

मृणाल ने चौंककर कहा—सयल दादा ने मेरे बारे मे पहले तुमसे जिक्र नहीं किया ?

अचला बोली—नही, कभी नही। अपने घर द्वार के बारे मे सब कुछ बताया था, लेकिन जो सबसे पहले बताना चाहिए था, वही तुम्हारे बारे मे क्यो, जा नही बताया, मुझे बड़ा अचरज लग रहा है !

मृणाल ने अनमने भाव से कहा—सो तो है।

अचला कुछ देर चुप रही। फिर हँसती हुई धीमे से बोली—पहले शायद तुमसे इनकी शादी की बात चली थी ?

मृणाल तब भी अनमनी सी सोच रही थी कुछ। बोली—हा।

अचला ने कहा—फिर हुई क्यो नहीं ? होना ही तो ठीक होता।

अब इस बात ने मृणाल के कानो मे चोट की। अचला की ओर नजर उठा कर बोली—वह होना न था, न हुआ।

अचला ने तो भी पूछा—होने मे अड़चन क्या थी ? तुम कुछ उनके नातेरिश्ते की तो थी नही ? इसके सिवाय छुटपन मे जो प्रेम पनपता है, उसकी उपेक्षा करना भी तो ठीक नही ?

उसके पूछने के ढङ्ग से मृणाल एकाएक चौंक उठी। जरा देर थिर निगाहो से अचला की ओर ताककर कहा—इस तरह तुम क्या टटोल रही हो सयली दी ? तुम्हारा क्या ख्याल है छुटपन के हर प्यार का यही आखिरी अंजाम है ? या कि मनुष्य ब्याह कर देने का मालिक है ? यह सिर्फ इस जन्म का नही सझली दी, जन्म जन्मातर का सम्बन्ध है। जिनकी मैं सदा सदा की दासी हूँ, उन्हीं के हाथों इन्होंने सौंप दिया मुझे। मनुष्य की इच्छा अनिच्छा से क्या आता जाता है !

अचला अप्रतिभ होकर बोली—वजा है मृणाल दीदी—मैं यही पूछ रही थी—

बात वह पूरी नहीं कर सकी, चेहरा लाज से लाल हो उठा। मृणाल से यह छिपा न रहा। उसने अचला का हाथ अपनी मुट्ठी मे लेकर स्नेह से कहा—सयली दी, तुम्हें अभी उसी दिन पति मिला है, मगर मैं पाच साल से उनकी सेवा कर रही हूँ ! मेरी एक बात रखना, पति की इस दिशा को कभी अकल

से आविष्कार करने की कोशिश मत करना। इस ठगी जाओ, वह भी बेहतर, लेकिन जीतने म लाभ नही।

जद्दू न बाहर से आवाज दी—दीदी, बाबुआ रा आसन लगा दिया गया।

अच्छा, चल, मैं आई कहकर मणाल हठात् दोनो हाथ बढा कर अचला का मुखडा नजदीक खीचकर उसे चूमकर जल्दी जल्दी चली गइ।

## १५

अरी ओ सँझली दी!

अचला घबराकर बगल के कमरे स आ पहुची।

मणाल न कमर म फेंटा कस रक्खा था और एक दराज का अकेली ही सीधा करके रख रही थी। अचला के आते ही रज जमी चिल्लाकर बाली—अरी मुँहजली तुम हाथ-पाव समट बठी रहोगी और तुम्हार सोन का कमरा मैं सवार दूँगी? उठाओ झाडू उस काम को बुहार डालो। और हँसी न सम्हाल पाकर खिलखिला उठी।

शोर सुनकर हरिया की मा भी पीछे लगी आई। बाली—तुम भी खूब कहती हो दीदी! इनके घर कितन ता नौकर नौकरानी हैं—इन्ह झाडू छूने की कभी आदत भी है कि आप देहाती औरता की तरह झाडू लगाएँ। मैं बुहार देती हूँ—कहकर वह झाडू उठाने लगी कि मृणाल न डाट बतार्इ—तू छोड भी। अपनी दीदी को मुझसे ज्यादा जानती है कि बीच मे पच बनन आई है? मृणाल ने जबरन झाडू अचला के हाथ म देकर कहा—अर तेरी दीदी चाह, तो वह काम करे, जो गँवडिया दहाती स्त्रिया न कर सकें। अचला से बाली—लो तो सझली दी, उस कोन का झटपट बुहार दो।

अचला बुहारन लगी, तुम जादू जानती हो मृणाल दीदी?

कैसे, कहा तो?

अचला बोली—नही ता घर बुहारने का झाडू उठाती। यह जादू नही तो क्या है?

न्ती ?

मृणाल बोली—तुम नही उठाओगी
बुहारने के लिए उस टोने से जद्दू की मौस
बिताओ, साझ हो चली।

काम करते-करते अचला ने हँसकर कहा—
और मुझको भी काम करा करा के मार डालोग।
दिन तुमने मुझसे जो करारी मिहनत कराई वि
कुनियो से नही कराते।

।क भी

उसकी ठोढी पर अँगुली की ठोकर मारकर मृणाल बोली—अभी तो घर-अँगना देखकर लगता है कि लछमी आई है। मिहनत की कहती हो समली दी, पति पुत्र, घर गिरस्ती के चलते जब नहान खाने का समय न पाओगी, तभी तो औरत का जनम सायक होगा। भगवान से मनाती हूँ, तुम्हारा वह दिन आए, मिहनत की अभी क्या हुई है मलकिनी जी !—कहकर उसने हँसना चाहा, पर होठ काप गए।

हरिया की मा अचानक फफक से रो पडी। बोली—यही आशीर्वाद दो दीदी, यही आशीर्वाद दो। उसे अचला की मा की याद आ गई। वह साध्वी जब असमय मे ही चल बसी तो इत्ती-सी अपनी इस बच्ची को हरिया की मा के ही हाथो सौप गई थी। वही बच्ची अब इतनी बडी होकर पति की गिरस्ती करने आई है।

मृणाल ने उसे डाटकर कहा—अरी दईमारी, रोने क्या लगी ? हरिया की मा आँसू पोछती हुई बोली—रोती क्या शौक से हूँ दीदी ? तुम्हारी बात से रुलाई रोके नही रुकती। तुम्हारी कसम, तुम नही आती तो इस घर मे हमारी एक रात भी कैसे कटती सोच नही पाती हूँ ?

छ दिन हो गए, मृणाल इस घर म आई है। आन के वक्त से ही घर-द्वार से लेकर यहा के लोगो तक की शक्ल बदल देने मे जुट गई है। लेकिन उसके हर काम, हर हसी मजाक मे उसके जाने का आभास अचला को वडा दुखाता था। क्योकि मृणाल के बात काम, आचार-व्यवहार मे एक इतनी बडी आत्मीयता थी कि उसकी ओट मे खडी होकर उसके कर अचला अपने नए जीवन, अनचीन्ही गिरस्ती को चीन्ह लेन का मौका पा रही थी और इससे भी एक बडी चीज को अच्छी तरह तथा खास तौर से पहचानने का कौतूहल हुआ

स आविष्कार
लेकिन उ ा मृणाल को। उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं, यह उसक ा
ा को देखने से ही समझ म आ जाता—फिर स्वास्थ्यविहीन वृद्ध स्वामी,
ा किसी ओर स उसके उपयुक्त नहीं तिस पर घर म मशक्कत की हद नहीं—
बूढी सास अब मरी तब मरी हालत म गले म झूल रही है, वजह-बे वजह उसकी
बक झक का अन्त नहीं—यह उसन मृणाल से ही सुना, लेकिन कोई प्रतिकूलता
ही मानो सताकर इस औरत को जीवन-यात्रा के मार्ग मे निश्चेष्ट करके नहीं
बिठा सकी मन के खुशी गम के सिवा बाहर किसी चीज का जैसे कोई अस्तित्व
ही नहीं, कुछ ऐसा ही भाव था इस देहाती स्त्री का। लगातार साथ रहकर
वह समझ रही थी कमल जैसे कीच म पैदा होते हुए भी कीच से परे है, वैसे
ही अपढ देहात की यह गरीब लडकी भी रात दिन हर तरह के दु ख कष्टो की
गोदी मे रहते हुए भी सभी प्रकार की व्यथा पीडा मे ऊपर ही तिरती चलती
है। न तो उसे देह की क्लाति है, न मुँह की शाति। लिहाजा अचला का भी
वह सारे अनभ्यस्त कामो म घसीट चल रही थी। गो कि वैसे किसी काम से
उसकी शिक्षा दीक्षा उसक सस्कार का कोई मेल नही था। तो भी अचला को
यही लगता था कि मुँह फेरकर खडी रहना बहुत बडी शर्म की बात है। अपने
भाग्य को भी कोसते हुए जरा देर बैठकर पछताए इन छ दिनो म इतना भी
समय उसे नही मिला—सारे समय को काम, गप शप हँसी खुशी स ऐसा ही भर
रक्खा था उसने। इसीलिए जब वह लौट जाने की कहती अचला को लगता,
तुरत यह मिट्टी का मकान द्वार खिडकी समेत पल भर म ताश के महल-सा
औधा उलट जायगा। मृणाल दीदी के चले जाने म वह एक पल भी यहा टिकेगी
कैसे?

सास के बारे एक बार अचला न कहा—यह हर घडी जो तुम चलने की
कहती हो, मैंने आकर कौन इतनी जल्दी लौट जाना चाहती है, कहो तो?
यह नही होने का, जब तक मैं कलकत्ते नही लौट जाती, तुम्हें रहना ही
पडेगा।

मृणाल बोली—क्या करूँ सझली दीदी साम बूढी न आप मरेगी, न
मुझे जीने देगी। मैं कहती हूँ तू मर जा बूढी। तेरे बेटे की उम्र साठ की हो
गई अन्त मे उसको निगलकर तब तू जायगी? मगर रात दिन इतनी जो
खासती है, दम तो नही घुटता।

अचला हँसकर बोली—शायद तुमको वह देख नही सकती ?

मृणाल सिर हिलाकर बोली—फूटी आखो नही।

अचला ने पूछा—और तुम ?

मृणाल बोली—मैं भी नही। मैंने तो मन्नत मान रक्खी है कि बुढिया गुजर तो सवा रुपए का प्रसाद चढाऊँ।

अचला ने सिर हिलाकर कहा—लेकिन यकीन नही आता दीदी। तुम्हे ससार मे कौन सुहाता, तुम्हारी बातो मे यह समझना मुश्किल है। शायद हो कि इस बुढिया को ही तुम सबसे ज्यादा चाहती हो।

मृणाल ने कहा—सबसे ज्यादा चाहती हूँ ? हो शायद। कहकर उसने अचला का गाल मसल दिया और चली गई।

अब गई अब गई करते करते भी मृणाल के कुछ दिन निकल गए। एक दिन अचानक अचला को यह लगा कि उसे जाने की जबानी जितनी जल्दी है, सचमुच जाने की उतनी नही। सचमुच ही जाने को वह वास्तव मे उतनी उत्सुक नहीं। अब तक उसकी आड मे खडी हो वह दुनिया को जिस पहचाने ले रही थी अब उसके आवरण के बाहर आकर दुनिया की वह शक्ल उसकी आखो मे न रही। यहा आने के बाद मे ही जब भी उसे उसके पति से कभी मजाक करते देखा, उसके जी मे छन् से लगा, अब लेकिन बीच-बीच मे सुई चुभने लगी। यह सब कुछ भी नहीं, इसमे मजाक के सिवाय और कुछ नही, जो खराब करने की बात ही नही—मेरा मन बडा पापी है। इस तरह से अपने को रोकने की जितनी भी चेष्टा करती, उतनी ही जाने कहा से सशय के ठीक उलटे तक उसके हृदय मे न चाहते हुए भी बार-बार मुँह निकाल कर उसका मुह चिढाया करते। महिम की स्वाभाविक गम्भीरता उसे ज्यादती सी लगती। वह वितर्क करती जब मन मे कुछ है नही तो मजाक के बदले मजाक करने मे क्या गुनाह है ? जो मजाक मे उत्तर नही दे सकता, वह कम से कम हँसकर उसका लुत्फ तो ले सकता है। लेकिन वह साफ देखा करती कि मृणाल मजाक किया चाहती कि महिम भागकर जान बचाता। सो वह इन दिनो इस चिन्ता को किसी भी तरह मे अपने मन से नही निकाल पाती कि इसमें कोई अन्याय जरूर छिपा है। लगातार मृणाल के साथ काम काज करते हुए भी हजार बार उसके जी मे आता कि औरत होकर जी मे ईर्ष्या की पीडा पालते हुए भी जब मैं इसे

किसी तरह से छोड नही सकती, तो एक साथ इतने दिना तक साथ रहकर कोई पुरुष क्या इस स्त्री को प्यार किए बिना रह सकता है ?

अचला को यह न मालूम था कि मृणाल के आते ही उडिया रसोइया की जान का छुटकारा हो जाता था। अब की वह छुट्टी पाकर घूमता फिर रहा था। अचला लेकिन यही गौर से देखती रही कि अपने हाथो पकाकर महिम का खिलाना मृणाल को हृदय से अच्छा लगता। आज सुबह अचानक वह बोल उठी—मृणाल दीदी, आज तुम्हारी छुट्टी।

मृणाल समझ नही सकी। पूछा—काहे की मझली दी।

अचला ने कहा—रसोई की। आज मैं रसोई करूँगी।

मृणाल अवाक होकर बोली—हाय रे नसीब, तुम क्या रसोई करोगी ?

अचला ने सिर हिलाकर कहा—वाह, मैं जैसे जानती ही नहीं ? घर मे कितनी बार मैंने पकाया है ? आज नही मानूंगी मैं आज जरूर रसोई करूंगी।

उसकी जिद्द देखकर मृणाल म्लान हो गई। बोली—अरे, यह भी होता है कहीं। मेरे रहते तुम किस दुःख से धुएँ मे कष्ट करोगी ?

उसके भाव को ध्यान से देखकर अचला और अड गई, फिर रसोइया के होते तुम्ही क्या कष्ट उठाती हो ? इस बेला मे मैं जरूर रसोई करूँगी।

उसे क्या यह जिद्द हुई, मृणाल कुछ भी समझ नहीं सकी। वह हँसी दबाकर बनावटी रूसने के ढग पर बोली—वाह री लडकी ! एक एक कर तुम मेरा सब कुछ छीन लिया चाहती हो ? सब तो ले चुकी, दो दिन पकाकर खिला जाऊँ यह भी शायद बर्दाश्त नही हो रहा ? सौत की डाह शुरू हो गई।

अचला के कलेजे के अन्दर फिर छिद् से लगा। मृणाल की अंतिम बात ने उसकी डाह की पीडा पर चोट की। वह जरा देर गभीर हो गई और बोली—नहीं आज मैं ही पकाऊँगी।

मृणाल ने देखा, अचला रज हो गई है। सो उसने और विवाद नही किया। उदास होकर बोली—ठीक है तुम्ही पकाओ। चलो मैं तुम्हे दिखा आऊँ, कहा पर क्या है ?

महिम घर ही था, यह बात दोनो मे से किसी को मालूम न थी। अचानक उसे सामने देखकर दोनो अप्रतिभ हो गई।

उसने अचला से कहा—जब तक मृणाल है, वही रसोई करे न।

अचला मग्न होकर बोली—एक भूखी मित्र को सामने बिठाकर खुद खाने की शिक्षा हमे नहीं मिली है मृणाल दीदी।

मृणाल फिर भी हँसने की कोशिश करती हुई बोली—मगर मित्र को खाने की गुंजाइश न हो तब ?

अचला ने उसी भाव से जवाब दिया—उपाय है क्या नहीं, सुनूं जरा ? तुम्हें दरअसल बुखार नहीं हुआ है, हुआ है गुस्सा। खुद न खाकर मुझे भी भूखे मारने की ख्वाहिश हो, तो खोलकर कहो, मैं तङ्ग न करूँगी।

मृणाल झट उठकर थाक में बह गई—पति की सौगंध खाकर कहता हूँ मझली दी मैंने नाम को भी गुस्सा नहीं किया है। लेकिन खाने का कोई उपाय नहीं। चलो मैं तुम्हें गोदी में बिठाकर खिलाऊँ।

अचला बोली—तो मतलब कि बुखार उखार नहीं, बहाना है।

मृणाल चुप रह गई। अचला खुद भी कुछ देर स्तब्ध सी रहकर एक निश्वास छोड़कर बोली—अब समझी ! लेकिन तुमने शुरू में ही कह दिया होता दीदी कि तुम मेरा छुआ घृणा से मुँह में नहीं रख सकोगी तो नाहक जिद करके मैं तुम्हें भी तकलीफ न देती और नौकर दासियों के आगे खुद भी शर्मिन्दगी में न पड़ती ! खैर मुझे माफ करना बहन—लेकिन दूध तो नहीं छुआ ना, एक कटोरा दूध ही ला दूं—और जदू दुकान से मिठाई ले आए क्यों ?

पहले तो मृणाल काठ की मारी सी रह गई, जरा देर में वह स्थिति जाती भी रही तो भी वह कुछ बोली नहीं, मुँह झुकाए चुप बैठी रही।

अचला ने फिर टोका—क्या कहती हो ?

आँचल से आँखें पोंछ कर मृणाल बोली—अभी छोड़ो।

अचला कुछ क्षण चुपचाप खड़ी रही फिर धीरे धीरे चली गई।

मृणाल ने न सिर उठाया न बात की। बुढ़िया सास के लिए उसे पकाना पड़ता है। वे बेहद अंधविश्वासी हैं। कहीं यह सुन लें तो उसके हाथ का पानी तक न छुएँगी, अचला को उसने इसका आभास तक नहीं दिया।

अचला रसोई में गई। वहाँ का काम-काज कर लिया और हाथ धोकर अपने कमरे में जाकर पड़ रही। लेकिन और चाहे जिस कारण से भी हो केवल घृणा से ही मृणाल ने उसके हाथ की रसोई नहीं खाई—इसे अचला मन

म भूठ ही समझती थी, इसीलिए उसने जानकर इस इस तरह का आघात पहुँचाया। अगर सच समझती तो वह मुह से उच्चारण भी नही कर पाती। पर जिस सुबह की शुरुआत कलह म हुई, उसकी दोपहर को भगवान् ने किसी की किस्मत म भोजन नही दिया, इसे दोनो न मन ही मन समझा।

तीसरे पहर बैलगाडी दरवाजे पर आकर खडी हुई। मृणाल अचला के कमरे म गई और कहा—नमस्ते करने आई हूं सझली जी, अपने घर जा रही हूँ। जी मे कभी आए, तो बुलाना, फिर हाजिर हो जाऊँगी। थोडा थमकर बोली—जाने के समय बात ही नही करोगी बहन। कहकर कुछ देर उत्सुकता से देखती रही।

लेकिन अचला एक शब्द न बोली। जैसे बैठी थी सिर झुकाए वैसी ही बैठी रही। उसके कमरे से निकलते ही मृणाल ने देखा, महिम घर आ रहा है। बोली—जरा रुक जाओ सझले दादा, तुम्हे भी प्रणाम कर लू।

महिम न पूछा—बिना खाए ही चल दी मृणाल? न हो आज की रात रह कर सुबह जाना?

मृणाल सिर्फ जरा होठो म हँसकर बोली—नही नही, जद्दू गाडी ले आया। आज मैं जाती हूँ। फिर कभी ले आना। यह कहकर उसने गले मे अँचरा डालकर उसे प्रणाम किया और चरणो की धूल ली। कहा—मेरे सिर की कसम, और एक बार लाना भूल मत जाना।

आज महिम हँस पडा। बोला—कलमुही, तेरी आदत क्या कभी जायगी नही?

मरने पर जायगी, उसके पहले नही—फिर एकबार हँसकर वह गाडी पर जा बैठी।

मृणाल अचानक आज ही चली ही जा सकती है, अचला ने यह कल्पना भी न की थी। मृणाल ने खुद नही खाया, उसे नही खाने दिया, इसकी सबसे बडी सजा कैसे देगी, कमरे म अकेली बैठी अब तक यही सोच रही थी। जो प्यार करता है, उसे घृणा करने का दोष लगाने जैसी बडी सजा दूसरी नही, यह बात प्यार ही कह देता है। मृणाल के लिए यही सजा तजवीज करके अचला बैठी थी। मृणाल इसे ब्राह्म लडकी समझकर हृदय म घृणा करती है, उठते-

वठते यही उलाहना दकर इसका बदला चुकाने का निश्चय किया था, सो वकार हो गया।

लेकिन भूखी मृणाल जब विदा लेकर कमरे से बाहर चली गई, तो उसकी भी आखें आसुओ से भर गई थी, पर मृणाल के होठो की उस रत्तीभर हँसी की आवाज ने लमहे में सूखे मरु की नाई उन निकले आसू को सोख लिया और किवाड की आड मे उन दोनो की विदाई का दृश्य देख ठीक वज्र गिरे पेड की नाई जलती रही।

थोडी देर मे जब महिम अन्दर आया, तो अचला का स्वाभाविक धीरज जड से खत्म हो चुका था। फिर भी लेकिन उसकी मन की शिक्षा और सस्कार ने उसे इतरता के हाथ से बचाया। जी-जान से अपने को जब्त करके वह सम्न हँसी हँस कर बोली—शहर के आदमी का देहात में आकर बसने जसी विडवना थोडी ही है, है न?

महिम ने स्त्री के मुह की तरफ देखा और कुछ क्षण चुप रहकर बोला—तुम अपने बारे में कह रही हो न? समझ रहा था शुरू मे तुम्हे तरह तरह का कष्ट होगा, लेकिन मृणाल से तुम्हारी बनेगी नही, यह नही सोच सका था। क्योकि उससे कभी किसी की लडाई नहीं हुई।

अचला बोली—लेकिन मुझी से मुहल्ले भर की सदा लडाई होती है, यही तुमने कहा सुना?

महिम ने धीरे धीरे कहा—तुमने दिनभर खाया पीया नही छोडो इस बात की अभी जरूरत नही।

अचला और भी जल भुनकर बोली—मृणाल दीदी भी तो बिना खाए ही घर गई, लेकिन उनसे तो हँसकर बात करने मे तुम्हे आपत्ति नही हुई!

महिम ने आश्चर्य से कहा—यह सब तुम क्या कह रही हो?

अचला बोली—यही कह रही हूँ कि मैंने कौनसा ऐसा बहुत बडा अपराध किया कि जिसके लिए मेरा अपमान किए बिना नही चल रहा था?

महिम ने हतबुद्धि होकर वही प्रश्न फिर पूछा। कहा—क्या कह रही हो मतलब क्या है इन बातो का?

अचला अचानक जोर से बोल उठी—मतलब यही कि किस कसूर पर मेरा यह अपमान किया तुमने? मैंने क्या किया?

महिम विह्वल हो उठा—मैंने तुम्हारा अपमान किया ?

अचला ने कहा—हा तुमने ।

महिम ने प्रतिवाद किया—झूठी बात ।

अचला क्षणभर के लिए स्तंभित हो रही । उसके बाद स्वर को कोमल करके कहा—मैं कभी झूठ नही बोलती । खैर, उसे छोडो, अगर तुम्ह सत्यवादी होने का अभिमान हो, सच्चा जवाब दो ।

महिम उत्सुक आखो से सिर्फ देखता रहा ।

अचला ने कहा—मृणाल दीदी आज जो कुछ करके चली गई, उसे क्या तुम्हारे देहाती समाज म अपमान नही कहते ?

महिम बोला—लकिन उसम मुझे क्यो घसीट रही हो ?

अचला न कहा—बताती हूँ । पहले यह कहो कि उसे यहा क्या कहते है ?

महिम बोला —खर, वही अगर हो—

अचला न टोककर कहा—अगर हो नही, ठीक जवाब दो।

महिम बोला—हा, गाव म भी लोग अपमान ही समझते ह ।

अचला बोली—समझते है न ? फिर सब जान सुनकर तुमने अपमान कराया है । तुम्ह बेशक पता था कि व मेरा छुआ नही खाएगी । ठीक है या नही ? कहकर अपलक आखो स ताकती हुई वह महिम के कलेजे के भीतर तक अपनी जलती निगाह लडाने लगी । महिम वैसा ही अभिभूत सा देखता रहा । मुह से एक शब्द भी न निकला।

ठीक ऐसे समय म बाहर स सुरेश की आवाज आई—महिम, अरे, कहा हो भाई !

## १६

अरे, सुरेश ! आओ-आओ, अन्दर आओ । सब मजे मे ?

महिम का स्वागत भाषण समाप्त होन के पहले ही सुरेश सामने आकर

खड़ा हुआ। हाथ के ग्लैडस्टोन बैग को उतार कर बोला —हाँ, मजे म। मगर यह क्या, अकेले खड़े हो अचला बहुरानी पल म मचला होकर कहाँ अतध्यान हो गई ? उनकी ऊँची आवाज ने तो मोड पर मे ही मुझे इस घर का पता बताया।

वास्तव म अचला की आखिरी बात नाराजगी मे जरा जोर से निकली थी, वह घर के बाहर ही सुरेश के कानो तक पहुँची थी।

सुरेश न कहा—देख लिया महिम, विदुषी स्त्री पाने का कितना बड़ा लाभ है ? कै दिन हुए आए और इसी बीच दहात के प्रेमालाप के ढङ्ग तक को ऐसा हासिल कर लिया कि उससे त्रुटि निकाल सके देहात की स्त्री म भी ऐसी मजाल नही।

शम के मारे महिम का कान तक रग गया। वह खड़ा रहा।

सुरेश न कमरे की ओर देखकर अचला को लक्ष्य करक कहा—'बड़े बमौके आकर मजा किरकिरा कर दिया भाभी, माफ करना। महिम अरे खड़े हो ? बैठने को कुछ हो तो ले चलो, जरा बठू। चलते चलते तो पाव की गाठे टूट गइ—अच्छी जगह घर बनाया था भया ! चलो चलो कलकत्ते चलो।

चलो कहकर महिम ने उसे बाहरी बैठक म ले जाकर बठाया।

सुरेश न कहा—भाभी मेरे सामन न आएँगी क्या ? पर्दानशीन ?

सुरेश के जवाब देन म पहले ही अचला बगल का दरवाजा ठेलकर अदर आई। उसके चेहरे पर कलह की जरा भी निशानी नही। प्रसन्नमुख हो बोली —यह सौभाग्य तो आशातीत है ! मगर यो अचानक ?

उसके प्रसन्न हँसते चेहरे स सुख सौभाग्य के निखर विकास की कल्पना करके सुरश का कलेजा डाह स मानो जल उठा। हाथ उठाकर उसन नमस्कार किया। कहा—लगता है, यो अचानक आकर मैंन ठीक नहीं किया है, मगर हो क्या रहा था अभी ? Their first difference या जब म आई हैं, मतभेद चल रहा है। कौन सा ठीक ?

अचला न हँसते हुए कहा—कौन सा सुनने पर आप खुश होग ? दूसरा, है न ? तो फिर मेरा वही कहना ठीक है—अतिथि का मन छोटा करना ठीक नही।

सुरेश का मुह गंभीर हो गया। बोला—किसने कहा? घर की मालकिन का वही तो असली काम है, वही पक्का परिचय है!

अचला ने हँसते हुए कहा—घर ही नही, तो घर की मालकिन! गरीब के इस झोपड़े म आपकी रात कम बीतेगी, इसी की चिंता हो रही है मुझे। मगर धन्य हैं आप, जानकर यह दु ख उठाने आए।

पति की ओर देखकर बोली—अच्छा नयन बाबू स कहकर चन्द्र बाबू के यहाँ रात को इनके सोने का इंतजाम नही कराया जा सकता? उनका घर पक्का है—बटका भी है। इन्हें कोई तकलीफ न होगी।

मौजन्य की आड मे दाना के श्लेष के इन वारो स महिम का मन अधीर हो रहा था। मगर इस रोके कैसे, समझ नही आ रहा था—ऐसे मे सुरेश ने खुद हो इसका प्रतिकार किया। हाथ जोडकर बोल उठा—पहले जरा चाय-वाय दो भाभी पीकर जरा सजीदा हो लू, फिर नयन बाबू से कहो और श्रावण बाबू से कहो—चन्द्र बाबू के पक्के घर म सोने की सिफारिश पर राजी हूँ। मगर चाहे जो कहो महिम, इस पर ऐसा खिचाव हो, तो खुशी की बात है।

महिम की ओर से अचला न ही जवाब दिया। हसकर कहा खुशी होना न होना किसी के अपन ऊपर है, लेकिन यह मेरे ससुर का घर है, इस पर खिचाव न हो और बडे लाट के भवन पर हो, तो वही तो झूठ है। खर, पहले सजीदा हो लीजिए, फिर बातें होगी। मैं चाय के लिए पानी रखने को कह आई हूँ। पाचेक मिनट म चाय हाजिर करती हूँ—तब तक मुँह बन्द करके जरा आराम कीजिए। कहकर हसती हुइ अचला चली गइ।

उसके वहा स जाते ही सुरेश के जी की जलन मानो बढ गई। अपन को वह सदा कमजोर और चचल चित्त का ही जानता था और इसके लिए उसे लज्जा या क्षोभ भी न था। छुटपन म महिम से उसकी तुलना करते हुए जब संगी साथी उसे सनकी ख्याली आदि कहा करत, तो वह मन ही मन खुश होकर कहता कि यह सही है कि मुझम निश्चय की दृढता नही, प्रवृत्ति से मैं मजबूर हूँ, किन्तु दिल मेरा साफ है, मैं कभी नीच या छोटा काम नही कर सकता। मैं अपनी आमदनी समझकर खच करना नही जानता, अच्छे बुरे का विचार करके तब दान नही करता—मगर मेरा जी रो उठे तो बदन का कपडा तक किसी को दे आने मे मुझे झिझक नहीं होती—सो जिसका भी और जिस कारण से

भी हो मगर मेरे बारे में किसी को भी यह शिकायत करने की गुंजाइश नहीं कि सुरेश ने किसी से डाह की है या कि स्वार्थ के लिए ऐसा कुछ किया है जो उसे नहीं करना चाहिए था। लिहाजा शुरू से दिल के मामले में जिसकी बेहद कमजोर होने की बदनामी थी, और खुद भी जिसे वह सत्य ही मानता था, उसी सुरेश ने जब अचला के सम्बन्ध में अंतिम क्षण में अपने ऐसे कठोर संयम का परिचय पाया, तो अपने में इस अज्ञात शक्ति के आभास से न केवल खुश हुआ बल्कि गर्व से उसकी छाती फूल गई। अचला के विवाह के बाद दो दिन तक वह अपने को यह कहता रहा कि मैं कमजोर और लाचार नहीं, प्रवृत्ति का गुलाम नहीं हूँ, जरूरत हो तो मन से सारी प्रवृत्ति को हो कुरेद कर फेंक दे सकता हूँ। अब मेरे मित्र और उनकी पत्नी यह सोचा करें कि दोस्ती क्या चीज होती है और उसके लिए कोई कितना त्याग कर सकता है?

लेकिन किसी भी झूठ में ज्यादा दिन तक कोई फांक भरकर नहीं रखा जा सकता। उसका आत्म संयम सत्य न था, वह आत्म-प्रतारणा थी। नतीजा यह हुआ कि एक हफ्ता गुजरते न गुजरते उसके झूठे संयम का यह मोह फूटे हुए हृदय से धीरे धीरे निकल कर उसे बड़ा संकुचित कर देने लगा। उसका मन बार-बार कहने लगा—इस त्याग से उसे क्या मिला? इस त्याग ने उसे क्या दिया? अब किस सहारे से वह अपने को खड़ा रक्खेगा? फूफी कहेगी—बेटे जब तुम ऐसी बहू ले आओ, उसके सहारे गिरस्ती सम्हालू"।

एक दिन समाज के फाटक पर केदार बाबू से भेंट हो गई। उन्होंने साफ कहा—कि गलती हो गई। महिम से अचला के ब्याह में वे शुरू से ही राजी न थे—लेकिन चूंकि सुरेश उदासीन-सा रहा, इसलिए लाचारी राजी होना पड़ा। घर लौट कर उसका मन शाप देने लगा कि इस विवाह में दोनों में से कोई सुखी न हो। मेरे मित्र भी औकात से बाहर जाने की गलती महसूस करें और अचला भी अपनी भूख समझकर अफसोस की आग में जले। लेकिन जो भी हो, उसका दिल छोटा नहीं है। इस बुरा चाहने के लिए वह अपने मन को तरह-तरह से दबाने लगा, पर उसका दुखी और प्रतारित मन वश में न आया। जिद्दी लड़के की नाई बार-बार उसी को दुहराने लगा। इसी तरह उसने एक महीना तो काटा और एक दिन कुतूहल को दबा न पाकर हाथ में बेग लिए महिम के घर जा पहुँचा।

सुरेश ने दोस्त की तरफ ताककर कहा—अब समम रहे हो महिम, मेरी बात कितनी सही थी ?

महिम न पूछा—कौन-सी बात ?

सुरश न विन जैसा कहा—देहात म मै रहता जरूर नही हूँ, पर उसका सब कुछ मैं जानता हूँ। मैंने आगाह नहीं किया था तुम्ह कि गाँव स समाज से बडा विरोध होगा ?

महिम ने सहज ही कहा—कहाँ विराध तो वसा कुछ नही हुआ ?

विरोध और किस कहत है ? तुम्हार यहा किसी न भाजन किया ? यही क्या काफी बेइज्जती नहीं ?

मैंन किसी का खाने के लिए कहा नही।

नही कहा ? अच्छा हा, दावत का मुझे ता न्याता नही दिया ?

दावत ही नही हुई।

सुरश न अचरज स कहा—दावत नही हुई ? ओ, तुम्हारा ता—लेकिन ऐस कब तक खर मनाओगे ? आफ्त-मुसीबत है, बाल-बच्चा का जनेऊ ब्याह है—दुनियादारी करो तो है क्या नही ? मैं कहता हूँ—

जल्दू स चाय का सरजाम निवाए खुद मिठाई की रिकाबी लेकर अचला आई। सुरेश की अतिम बात उसके काना पहुँची थी, पर चेहरे के भाव स सुरश उसे समझ न सका। दाना दास्तो का नाश्ता और चाय पीना हो चुका, तो कधे पर चादर रखकर महिम उठ खडा हुआ। गाव का जमीदार था मुसल मान। महिम उसके लडके को अग्रेजी पढाता था। जमीदार खुद लिखा पढा न था, मगर उदार था और महिम पर अच्छा ख्याल रखता था। इसलिए समाज की दुहाई देकर गाव के लाग उस पर जुल्म करन की हिम्मत न कर सके थ।

अचला न कहा—आज पढाने न जाते तो क्या था ?

महिम बोला—क्यो ?

अचला के मन का जोर और हृदय की निमलता जितनी बडी भी क्या न हो, सुरेश से उसका सम्बध जसा हो गया था उसस उसके इस अचानक आगमन से कोई भी स्त्री सकाच किए बिना नही रह सकती। सुरेश को वह पहचानती थी। उसका हृदय चाहे जितना बडा हो, उसकी सनक पर उस

आस्था न थी, बल्कि डर ही लगता था। उसी के साथ उसे अकेले छोड़कर जाने के प्रस्ताव से वह उत्कंठित हो उठी, मगर चेहरे पर उसे जाहिर न होने दिया और बोली—खूब! यह भी होता है, मेहमान को अकेला छोड़कर—

महिम ने कहा—मेहमान नवाजी में इससे कमी न होगी। फिर, तुम तो हो ही—

अचला ने कुछ रुककर कहा—लेकिन मैं भी नहीं रह सकूँगी। यह जो उड़िया रसोइया है अपना, ऐसा पक्का है यह कि उसके साथ न रहो, तो एक कौर भी मुँह में रखना मुश्किल। मैं बताऊँ, तुम बल्कि—

महिम ने सिर हिलाकर कहा—नहीं नहीं, सो न होगा। महज घण्टे दो घण्टे की तो बात है। और उसने खाने में अपनी छड़ी उठा ली। एक तो यों ही महिम का नियम टूटना मुश्किल, तिस पर एक मामूली सी बात के लिए बार बार आग्रह करने में भी अचला को शर्म आने लगी—कहीं इस डर का राज सुरेश को मालूम हो जाय और भी शर्मिंदा न होना पड़े।

महिम धीरे धीरे चला गया। उसे सुनाते हुए सुरेश ने अचला से कहा—नाहक ही जबान खोलना। शुरू से जानता हूँ, वह ऐसा आदमी ही नहीं कि किसी का कहा माने। तुम मुझे कोई किताब देकर अपने काम में चली जाओ, मेरा समय मजे में कट जायगा।

यह बात अचला को अचानक लग गई। सच ही महिम कभी उसका कोई अनुरोध नहीं मानता। यह उसका एक बड़ा गुण हो चाहे फिर भी सुरेश के मुँह से पति की इस कर्त्तव्य निष्ठा की बात उसी के सामने उसे अपमानजनक उपेक्षा सी लगी। वह कुछ बोली नहीं। जद्दू से एक किताब भिजवाकर वह रसोई में चली गई।

काफी रात हुए जब वह सोने गए तो महिम ने पूछा—सुरेश ने तुमसे कुछ कहा कि कितने दिन यहाँ रहेगा?

एक तो यों ही आज कई कारणों से पति के ऊपर वह प्रसन्न न थी जिस पर इस पूछने में कुछ टेढ़ा व्यङ्ग है, यह सोचकर वह कुढ़ गई। रुखाई से पूछा—इसका मतलब?

महिम अवाक् हो गया। उसने महज ही ढंग से जानना चाहा था, व्यङ्ग-मजाक नहीं किया था। अमन में इतनी देर की बात चीत में मनोचवश

वह मित्र से यह बात पूछ न सका न सुरेश ने ही बताया। उसे उम्मीद थी कि सुरेश ने अचला को जरूर ही बताया होगा।

महिम को चुप देख अचला आप ही बोली—इस बात का अर्थ इतना आसान है कि तुमसे पूछने की भी जरूरत नहीं। तुम्हारा ख्याल है, सुरेश बाबू कुछ नीयत लेकर आए हैं और उसे पूरा होने में कितना समय लगेगा—मैं समझती हूँ। यही न ?

महिम और कुछ देर चुप रहकर बोला—मेरा ऐसा कोई ख्याल नहीं। लेकिन मृणाल के व्यवहार से आज तुम्हारा मन ठीक नहीं है, तुम कुछ भी धीर होकर समझ नहीं सकोगी। आज सो जाओ, कल बात होगी। कहकर उसने करवट बदल ली।

अचला भी लेट गई पर उसे किसी भी प्रकार नींद न आई। उसके मन में दिनभर जो बोझ जमा होती रही थी वह किसी झगड़े के रूप में निकल जाती, तो शायद उसे चैन मिलती—लेकिन इस तरह से उसकी जबान ही बंद कर देने के कारण वह भीतर ही भीतर जलती रही। वह प्रसंग तो बंद हो गया, जबर्दस्ती उसे खोदकर झगड़ने में जो कमीनापन है, अचला के लिए वह भी असंभव था। सो कल्पना में ही पति को विपक्ष में खड़ा करके सुलगते सवालों से घायल करती हुई वह बिस्तर पर छटपटाती रही।

नींद जरा देर से टूटी। हड़बड़ा कर अचला बाहर निकली कि देखा, जद्दू चाय की केतली हाथ में लिए रसोई की तरफ जा रहा है। पूछा—बाबू कुछ कह गए हैं ?

जद्दू ने कहा—कह गए हैं, पहर भर में लौटेंगे।

अचला ने पूछा—नए बाबू जग गए हैं ?

जद्दू बोला—जी ! उन्होंने तो चाय के लिए कहा।

अचला ने झटपट मुंह धोया, कपड़े बदले और बाहर निकली। देखा, सुरेश कब का तैयार हो चुका है। कमरे की सारी खिड़कियां खोल दी हैं, दरवाजे के सामने एक कुर्सी रखकर कल वाली किताब पढ़ रहा है। अचला के पैरों की आहट से उसने नजर उठाकर देखा। अचला के चेहरे पर रात के जागने के सारे ही लक्षण साफ झलक रहे थे। आँखों के नीचे स्याही-सी, गाल

फीके, होंठ सूखे सुरेश देखने लगा और उसका जी डाह की आग से जलने लगा, मगर अपनी नजर वह किसी भी तरह हटा न सका।

उसके देखने के ढंग से अचला को अचरज हुआ, लेकिन वह मतलब न समझ सकी। बोली—कब जगे आप ? मुझे तो उठने में आज देर हो गई।

वही तो देख रहा हूँ कहकर सुरेश ने धीरे धीरे गर्दन हिलाई सामने की दीवाल पर बड़ा सा एक पुराना आईना टंगा था—ठीक उसी समय आईने की तरफ देखते ही एक ही पल में अचला के सामने सुरेश की उस निगाह का अर्थ साफ हो गया और अपनी श्रीहीनता की शर्म से वह मानो गड़ गई। अपना यह मुह वह कहां छिपाए, सुरेश की मूल धारणा का प्रतिवाद करे—वह कुछ भी न सोच सकी और जल्दी में कमरे से बाहर निकल गई—कहती गई—आपकी चाय ले आऊँ।

सुरेश कुछ नहीं बोला एक लंबा उसास भरकर वह सूनी आंखों देखता हुआ मौन बैठा रहा।

दसेक मिनट के बाद जब चाय लेकर अचला आई, तो सुरेश अपने को सम्हाल चुका था। चाय का घूंट लेते हुए वह बोला—तुमने नहीं पी ?

अचला हँसकर बोली—मैं अब नहीं पीती।

क्यों ?

अब अच्छी नहीं लगती। तिस पर यह जगह शायद गर्म है, पीने से नींद नहीं आती। कल तो तमाम रात सो ही नहीं सकी। एक रात नींद न आए तो ऐसी बन जाती है सूरत कि यह जला मुँह किसी को दिखाना मुश्किल। कहकर शर्माती हुई वह हँसने लगी।

सुरेश कुछ क्षण चुप रहकर बोला—मगर यह तो तुम्हारी बचपन की आदत है। महिम अनुरोध नहीं करता पीने का ?

अचला हँसकर बोली—करे भी तो सुनता कौन है ? और यह ऐसी चीज ही क्या है कि पिए बिना न चले ?

अचला की यह हँसी सूखी थी, यह सुरेश ने स्पष्ट देखा। वह फिर कुछ देर चुप रहकर बोला—तुम्हें तो मालूम है भूमिका बनाकर बात करने की मेरी आदत नहीं, मुझसे बनता भी नहीं। मगर तुमसे जी खोलकर दो एक बात पूँछू तो नाराज होगी ?

अचला हँसकर बोली—आपकी बात ! नाराज क्यों होने लगी ?

सुरेश ने कहा—खैर ! तो यह पूछूँ तुम यहां सुखी हो ?

अचला का हँसता मुखड़ा लाल हो उठा। बोली—आपका यह पूछना भी उचित नहीं।

उचित क्या नहीं ?

अचला सिर हिलाकर बोली—नहीं। मैं सुखी नहीं हूँ—यह बात आपके मन में आना ही नाजायज है।

सुरेश जरा फीका हँसा। बोला—मन क्या कुछ जायज नाजायज सोचकर मन में आता है अचला ? महज दो महीने पहले ऐसा सोचना मेरे लिए उचित ही नहीं, अधिकार था। इन दो महीनों के अरसे में वह अधिकार मेरा जाता रहा है, तो जाय, उसकी नालिश नहीं करूँगा—अब मैं केवल यह हकीकत जानकर जाना चाहता हूँ। जब से आया हूँ, कभी तो लगता है कि जीत गई हो, कभी लगता है हार गई हो। मेरा मन भी तुमसे छिपा नहीं, एक बार सच-सच कहो तो क्या है ?

रुलाई की एक बेराम उफान अचला के गले तक उठ आई—लेकिन जी जान से उसे रोककर जोरों से सिर हिलाकर बोली—मैं मजे में हूँ।

सुरेश ने धीमे से कहा—ठीक है।

इसके बाद कुछ देर तक दोनों में से किसी को जैसे ढूंढे कोई शब्द न मिला। अचानक चौंककर सुरेश बोला—और एक बात, मैंने तुम्हारे लिए इतना झेला, यह तुम्हें कभी

अचला ने दोनों कानों उँगली डालकर कहा—माफ करें, यह चर्चा आप न करें।

दोनों हाथ खुले दरवाजे में फैलाकर भागने की राह रोकते हुए सुरेश ने कहा—नहीं, माफ मैं नहीं कर सकता, तुम्हें सुनना ही पड़ेगा।

सुरेश की आंखों में वही दृष्टि—जिसकी याद आते ही अचला आज भी सिहर उठती है। थोड़ी पीछे हटकर डरती हुई बोली—अच्छा, कहिए।

सुरेश बोला—डरो मत, बदन में हाथ न लगाऊँगा—इतना होश अभी है। सुरेश फिर कुर्सी पर बैठ गया। बोला—इतना तो तुम्हें याद रखना ही

होगा कि तुम पर अपना अधिकार मैं सर्वे खो चुका हूँ, पर मेरे ऊपर तुम्हारा सारा अधिकार है।

टोककर अचला ने कहा—इस याद रखने में मुझे कोई लाभ नहीं, लेकिन —कहते कहते उसने देखा, इस बात ने चोट पहुँचाकर सुरेश का बदरंग बना दिया और तुरंत खुद भी उसने महसूस किया कि उसे भी अपमान ने चोट किया।

वह कुछ देर चुप रही। फिर बोली—सुरेश बाबू, ये बातें सुनना मेरे लिए पाप है और आपका भी बोलना उचित नहीं। आप य बातें उठाकर मुझे क्यों दुखाते हैं?

उसके चेहरे पर नजर रोक कर सुरेश ने कहा—दुःख होता भी है अचला।

अचला के मुह से एकाएक निकल पडा—आखिर मैं क्या पत्थर हूँ?

सुरेश ने अपनी निगाह अचला पर से नहीं हटाई पर अचला की आखें झुक गइ। सुरेश ने धीरे धीरे कहा—बस, यही मेरे जीवन भर का सहारा रहा—इससे ज्यादा नहीं चाहता मैं।

वह कुछ क्षण स्थिर रहकर फिर बोला—जब तुम पत्थर नहीं हो तो इस अंतिम भीख से तुम मुझे वंचित नहीं कर सकती। तुम्हारे सुख की जिम्मेदारी जिस पर है, रहे, लेकिन तुम्हारे हाथों जब दुःख ही मिलता रहा है, तो तुम्हारे दुःख का बोझा भी आज से मेरा रहे, यही वरदान मैं मांगता हूँ—यह भीख दो। कहते-कहते आसुओ से उसका गला रुँध गया। अचला की आखो से भी उसके पिछले दिन और रात की सारी संचित वेदना न चाहते हुए भी गल कर झरने लगी।

इतने में दरवाजे के बाहर जूता का शब्द सुनाई पडा और तुरंत ही अंदर दाखिल होते हुए महिम ने कहा—क्यों भई सुरेश चाय-वाय पी।

सुरेश से तुरंत जवाब देते न बना। उसने किसी प्रकार सिर झुकाकर धोती के छोर से आखें पोछी और अचला आंचल से मुह छिपाए महिम के बगल से जल्दी से निकल गई। महिम एक पाव चौखट के अंदर और एक बाहर रख कर काठ का मारा सा खडा रह गया।

## १७

अपने को जब्त करके महिम अन्दर एक कुर्सी पर बैठ गया।

जिस स्थिति मे मनुष्य का मन निहायत वेहयाई और तपाक से झूठ गढ सकता है, सुरेश के मन की वही स्थिति थी। इसने झट हाथ से आसू पोछकर शमाया सा कहा—सचमुच मैं वेहद कमजोर हो पडा हूँ। लेकिन महिम ने, इसके लिए कोई बेचैनी न दिखाई, यहा तक कि इसका कारण तक न पूछा।

तब सुरेश आप अपनी कैफियत देने लगा। बोला—कहने को जो चाहे कह लोग, मगर मैं यह जोर के साथ कह सकता हूँ कि इन लोगो की आखो मे आसू देखकर जाने कहा से तो अपनी आखो मे भी आसू आ जाता है—रोके नही रुकता। मैं नही पहुँच गया होता तो केदार बाबू तो इस बार हर्गिज नही बचते, मगर बडा अजीब बदमिजाज है। महिम, इकलौती लडकी—उसे भी खबर नही करने दी। शादी होने के दिन से ही जो नाराज ही हैं, सो नाराज ही है। मैंने कहा—होना था सो तो हो ही चुका—

महिम ने पूछा—चाय तो मिली ?

सुरेश ने सिर हिलाकर कहा—हा, मिल गई। मगर बाप से ऐसा सलूक मिले तो किसकी आखो मे आसू न आए, कहा मद ही नही झेल सकते, पर यह तो औरत ठहरी।

महिम बोला—बजा है। रात सोने मे दिक्कत तो नही हुई, नीद आई थी ठीक ? नई जगह—

सुरेश झट बोल उठा—नही, नई जगह मे मुझे नींद मे कोई दिक्कत न हुई। एक ही करवट मे सवेरा हो गया। अच्छा महिम, केदार बाबू ने अपनी बीमारी के बारे मे कतई बताया ही नहीं, अजीब बात है।

महिम ने बिल्कुल सहज भाव से कहा—बेशक अजीब है। फिर जरा हँसकर कहा—मुह धोकर जरा घूमने नही चलोगे ? जाओ, झटपट तैयार हो लो—मुझे फिर घण्टे भर मे ही निकलना पडेगा। मेरा तो सुबह का काम-काज भी नहीं हुआ।

सुरेश ने किताब में ध्यान गड़ाते हुए कहा—कहानी मजे की लग रही है, खत्म ही कर डालूँ।

यही करो। मैं एक घण्टे के अन्दर अन्दर लौट आऊँगा। कहकर महिम वहाँ से उठ गया।

उसके मुड़ते ही सुरेश ने नजर उठाकर देखा। लगा किसी अन्धे हाथों ने तो उसके समूचे चेहरे पर शर्म की स्याही फेर दी।

जिस दरवाजे से महिम गया उसी सूने दरवाजे की ओर एकटक देखता हुआ सुरेश काठ जैसा मग्न हो रहा। लेकिन अन्दर ही अन्दर उसके अयाचित उत्तरदायित्व की सारी विफलता कुंडल में उसके मगज में डंक मारती रही।

महिम ने नजर उठाई कि अचला ने, स्वाभाविक स्वर में पूछा—मेरे पिताजी ने कोई बहुत बड़ा अपराध किया है?

अचानक इस सवाल का मतलब न समझ कर महिम उत्सुक होकर उसका देखता रहा।

अचला ने फिर पूछा—मेरी बात शायद समझ नहीं सके।

महिम ने कहा—नहीं। प्रिय न होते हुए भी बात साफ है मगर मतलब समझना मुश्किल है—कम-से-कम मेरे लिए।

भीतर के क्रोध को भरसक दबाते हुए अचला ने कहा—कठिन तुम्हारे लिए दो में से कोई नहीं—कठिन है कबूल करना। जो बात सुरेश को तुम सहज ही जता आए वही बात मुझे बताने की तुम्हें हिम्मत नहीं पड़ रही है शायद। मगर आज मैं तुमसे साफ पूछना चाहती हूँ कि मेरे पिताजी तुम्हारे लिए इतने नाचीज हैं कि उनकी सख्त बीमारी की बात पर भी ध्यान देना तुम जरूरी नहीं समझते?

महिम ने कहा—बेशक जरूरी समझता हूँ। मगर जहाँ यह जरूरी न हो वहाँ मुझे क्या करने को कहती हो?

अचला ने कहा—कहाँ जरूरी नहीं है सुनूँ जरा?

महिम ने चुपचाप एक बार स्त्री की ओर ताका और कड़े स्वर में कह उठा—जैसे अभी अभी सुरेश के लिए नहीं था। और जैसे इसके लिए तुम्हारा भी नाराज होकर मेरे मुँह से कठोर शब्द कहना जरूरी न था। खैर छोड़ो। जिसके नीचे कीचड़ है उस पानी को गन्दा करना मैं बुद्धिमानी नहीं समझता।

कहकर महिम बाहर आ रहा था, अचला ने झपटकर सामने से रास्ता रोक लिया। जरा देर बाद वह दांतों में अपना होंठ जोरों से दबाये रही, ठीक जैसे किसी आकस्मिक सख्त चोट का मार्मिक चीख को जी-जान से दबा रही हो, ऐसा लगा। उसके बाद बोली—बाहर क्या कोई जरूरी काम है? दो मिनट रुक नहीं सकोगे।

महिम बोला—रुक सकता हूँ।

अचला बोली—तो फिर बात साफ ही हो ले। पानी जब हट जाता है कीचड़ का पता तभी चलता है, यहां तो?

महिम ने सिर हिलाकर कहा—हां।

अचला ने कहा—बाहर ही पानी को बर्दाश्त करने की मैं भी हिमायती नहीं मगर इसी डर से पनालों का भी बन्द रखना क्या ठीक है? कलोड होना हो तो हो—अगर कीचड़ से छुटकारा मिले। क्या खयाल है?

महिम ने सहज होकर कहा—मुझे कोई एतराज नहीं लेकिन उससे भी जरूरी काम पड़ा है—अभी समय नहीं है।

अचला ने भी वैसी ही सख्त आवाज में कहा—तुम्हारे इस ज्यादा जरूरी काम के हो जाने पर तो मिलेगी फुरसत? खैर, न होगा, मैं तब तक इन्तजार करूँगी। कहकर वह रास्ते से हट गई।

महिम कमरे से बाहर हो गया। जब तक वह दीखता रहा, तब तक वह स्थिर खड़ी रही, उसके बाद किवाड़ बन्द कर लिया।

घण्टे भर बाद जब नहाने का प्रसङ्ग लेकर वह सुरेश के कमरे में पहुँची, तो उसकी थकी और शोक भरी सूरत का अनुभव सुरेश नजर उठाते ही कर सका। वह समझ गया। हो न हो महिम से उसकी कुछ खटपट हुई है। वह सिमट-सा गया मगर प्रश्न करने की हिम्मत न हुई।

अचला चुप खड़ी रही, फिर पूछा—यह क्या हो रहा है?

सुरेश कपड़ों को बक्स में सहेज रहा था। बोला—गाड़ी तो एक ही बजे है। पहले ही सब ठीक ठाक किए लेता हूँ।

अचला ने आश्चर्य से पूछा—आप क्या आज ही चले जाएँगे?

सुरेश ने सिर बिना उठाये ही कहा—हां।

अचला बोली—लेकिन क्या भला?

सुरेश ने उसी तरह सिर झुकाए हुए ही कहा—और ज्यादा रहना क्या ? तुम लोगो स एक बार भेंट करनी थी, हा गई।

अचला जरा देर चुप रही। बोली—तो आप इधर आ जाइए। यह सब काम औरतो का है आप लोगो का नही। मैं सब सहेज देती हूँ। वह आगे बढ आई। सुरश बोल उठा—अरे नही-नही, तुम छाड दो—यह भी एसा क्या काम है—यह तो—

लेकिन उसके मुह की बात खत्म हाने से ही पहल अचला ने बैग उसके हाथ से ले लिया। उसकी चीजा को बाहर निकाला और तह किए हुए कपडो को फिर से चपोत चपोत कर बैग म भरने लगी। पास खडा सुरेश सकुचा कर कहता गया—कोई जरूरत नही थी इसकी—अगर—मैं खुद ही वगैरा-वगरा।

अचला न थोडी देर तक उसकी किसी बात का जवाब नही दिया। काम करते करते कहते लगी—आपके बहन या स्त्री होती तो यह काम वही करती—आपको नही करन देती। मगर आपको डर है, कही आपके दास्त आकर देख न लें—है न ? मगर देखें तो क्या ? यह काम तो औरतो का ही है।

सुरेश चुप खडा रहा। अभी अभी महिम के साथ उसका जो कुछ हो चुका अचला उस बेशक नही जानती, लिहाजा उस बात का जिक्र करके उसे दुखाने की हिम्मत न हुई, लेकिन डर भी लगता रहा, कही महिम आकर फिर अपनी आखा से यह न देख ले।

बग को ढङ्ग मे सजाकर अचला न धीर धीरे कहा—पिताजी की बीमारी का जिक्र न करना ही ठीक था, इससे उनका महज अपमान ही हुआ—उन्होन तो डकार भी न ली।

सुरेश ने चकित होकर कहा—महिम ने तुमस क्या कहा ?

अचला ने ठीक उसकी बात का जवाब नही दिया, आख क इशार से बगल के दरवाजे का दिखाकर कहा—वहा खडी होकर मैंने अपने कानो सब सुना।

सुरेश ने अप्रतिभ होकर कहा—इसके लिए मै तुम से माफी चाहता हूँ अचला।

अचला न हँसकर कहा—क्यो ?

अफसोस के साथ सुरेश बोला—कारण तो तुमन खुद ही बनाया। अपनी

गलती से मैंने तुम्हारा और उनका, दोनो का अपमान किया है। खास करके इसीलिए तुमसे क्षमा माँगता हूँ।

अचला ने नजर उठाकर देखा। अचानक भीतर के आवेग से उसकी आखें उसका चेहरा दमक उठा, वोली—आपने किया चाहे जो कुछ भी हो सुरेश बाबू, किया मेरे ही लिए है न ? मुझे शर्मिन्दगी से बचाने के लिए ही तो यह शर्मिन्दगी आपको झेलनी पडी। फिर भी आपको मुझसे माफी मागनी पड़े, ऐसी अनारी मैं नही हूँ। आप किसलिए लज्जित हो रहे है। जो किया ठीक ही किया।

सुरेश की ठगी-सी सूरत देखकर अचला न समझा, वह उसकी बात का मर्म समझ नही सका। इसलिए थोड़ी देर चुप रहकर बोली—आप आज न जाएँ सुरेश बाबू ! यहा आपको अगर कुछ शर्मिन्दा होना पडा है, तो वह मेरी ढाकने के लिए, वरना अपने लिए आपको पडी भी क्या थी ! और यह घर अकेले आपके मित्र का नही है, इस पर मेरा भी तो कुछ अधिकार है। उसी बलपर मैं आपको आमन्त्रित करती हूँ, आप मेरे अतिथि होकर और कुछ दिन रह।

उसका साहस देखकर सुरेश ठक रह गया। दुविधा मे पडकर वह कुछ कहना ही चाहता था कि देखा, महिम आ रहा है।

अचला उस समय तक सामने बैग को रखे इधर को पीठ किए बैठी थी। महिम के आने की बात न जानकर कही वह और कुछ न बोल उठे, इस डर से सुरेश सकुचाकर बोल उठा—तुम्हारा काम हो चुका महिम ?

हा, हो गया। कहकर अन्दर आते ही अचला को उस हालत मे देखकर बोला—यह क्या हो रहा है ?

अचला ने मुह फेरकर देखा, मगर उस सवाल का जवाब न देकर पिछले प्रसङ्ग के सिलसिले मे बोली—आप हमारे मित्र हैं, और मित्र ही क्या आपने जो कुछ हमारे लिए किया है, उससे आप मेरे आत्मीय हैं। आपके इस तरह से चले जाने से मेरी लज्जा और क्षोभ की सीमा न रहेगी। आज तो मैं आप को हर्गिज नही जाने दे सकती।

सुरेश सूखी हँसी हँसकर बोला—जरा सुन तो महिम ! तुम लोगो से मिलने आया था। मिलना तो गया बस। मगर इस जङ्गल म मुझे ज्यादा दिन

राकने से तुम लोगों को लाभ क्या होगा और मेरे लिए ही यह दुःख सहने का नतीजा क्या ?

महिम ने धीर भाव से कहा—शायद नाराज होकर चले जा रहे थे, यह इनको पसन्द नहीं।

अचला ने तीखे स्वर में कहा—तुम्हें पसन्द है क्या ?

महिम ने कहा—मेरी बात तो हो नहीं रही।

सुरेश मन ही मन अत्यन्त उत्कण्ठित हो उठा, इस अप्रिय प्रसङ्ग को किसी प्रकार दबा देने की नीयत से खुशी का भान करता हुआ बोला—झूठ आरोप क्या लगाना ! मैं नाराज क्या होने लगा भला, गजब के आदमी हो तुम लोग तो ! खैर यही चाहते हो तो दो एक दिन और ठहर जाऊँगा। भाभी कपड़े सहेजने की जरूरत नहीं निकाल दो। चलो महिम तुम लोगों के पोखर में ही आज नहाय—ऐसा ही होगा तो घर जाकर कुनैन की शरण लूगा।

चलो—महिम कपड़े बदलने के लिए कमरे से बाहर चला गया।

## १८

नए जूते की तीखी चिकोटी को चुपचाप बरदाश्त करके जो बेपरवा होने का भान करता है ठीक उसी आदमी जैसा सुरेश ने हंसी खुशी में तमाम दिन काट दिया, लेकिन दूसरे से जिसे और भी छिपे तौर पर उस चिकोटी का हिस्सा लेना पड़ा। ऐसा करते न बना।

पति के अटूट गभीर्य के आगे इस घिनौनी बनावट और बेहयाई के क्षोभ और अपमान से उसे सिर पीटकर मरने को जी चाहने लगा। उसे वह मनकी ओर से बेशक आज भी नहीं पहचान पाई थी पर बुद्धि की ओर से पहचाना था। उसने साफ देखा कि इस तेजस्वी बुद्धि वाले स्वल्पभाषी व्यक्ति के सामने यह नाटक नितान्त विफल हो रहा है जाकि शर्म की हवा ही हर पल मानो उसीके चेहरे पर गाढ़ी पुतती जा रही है। आज सुबह के बाद महिम कहीं

बाहर नही गया, सो दिन से लेकर रात का भोजन तक प्राय सारा समय इसी तरह बीत गया।

रात म बडी देर तक बिछावन पर छट-पट करते हुए अचला ने कहा—रात भर बत्ती जलाकर पढने से दूसरा कोई सो नही सकता—तुममे इतनी भी दया की क्या मैं आशा नही कर सकती ?

उसकी उस आवाज से चौंककर महिम न बत्ती उतार दी। कहा—मुझसे गलती हो गई, माफ करो। और उसने बत्ती बुझा दी। किताब रखकर बिस्तर पर सो रहा। इस माँगी हुई कृपा का पाकर अचला ने एहसान नही जताया लेकिन इससे उसकी नीद में भी कोई सुविधा न हुई। बल्कि जितना ही समय बीतने लगा यह मौन अँधेरा माना पीडा मे बोझिल होकर हर पल उसके लिए दुस्सह हो उठने लगा। जब सहा नही गया तो उसने धीरे धीरे पूछा—अच्छा, जानते हो, अजानते हो, दुनिया म गलती करने ही से सजा उठानी पडती है। यह क्या सच है ?

महिम न सहज ही उत्तर दिया—पडित लोग ऐसा ही तो कहते ह।

अचला फिर जरा देर चुप रही। उसके बाद बोली—तो फिर हम दोनो न जो गलती की है, जिसका बुरा अंजाम आरम्भ से ही शुरू हो गया है, उसका अतिम परिणाम क्या होगा ? अदाज कर सकते हो तुम ?

महिम न कहा—नही।

अचला बोली—मैं भी नही कर सकती। लेकिन सोच सोचकर मैंने इतना भर समझा है कि और बातें छोड भी दें, तो भी मर्द होने के नाते इस सजा का ज्यादा हिस्सा मर्द का उठाना चाहिए।

महिम बोला—थोडा और सोचा तो देखोगी, औरत का बोझ इससे एक तिल भी कम नही होता। मगर यह मर्द है कौन ? मैं या सुरेश ?

अचला सिहर जो उठी, महिम अँधेरे म भी जान सका। थोडी देर चुप रहकर अचला न कहा—कभी मेरे मुँह पर ही तुम मेरा अपमान करना शुरू कर दोगे, यह मैंने सोचा था और यह भी जानती हूँ कि एक बार यह शुरू हो जाय तो कोई कह नही सकता कि कहाँ जाकर खत्म होगा। मगर लगडना मेरे बस का नही और चूँकि ब्याह हो गया है, इसलिए झगडकर तुम्हारी गिरस्ती

करती रहूँ, यह भी न होने का। कल हो चाहे परसों, मैं पिताजी के पास लौट जाऊँगी।

महिम ने कहा—तुम्हारे पिता चकित होंगे ?

अचला बोली—नहीं। वे इसको जानते थे, इसलिए बार-बार मुझे सचेत करने की कोशिश की थी कि इसका नतीजा अच्छा न होगा। कलकत्ते में चल सकता है, लेकिन गँवई गाँव में समाज, सगे-सम्बन्धी, हित, मित्र सबको छोड़ कर सिर्फ स्त्री के साथ किसी का ज्यादा दिन नहीं चल सकता। लिहाजा, वे और चाहे जो हों चकित नहीं होंगे।

महिम ने कहा—तो तुमने उनकी मनाही मानी क्यों नहीं ?

जी-जान से एक उच्छ्वसित निश्वास को दबाकर वह बोली—मैं समझती थी, बिना समझे बूझे तुम कुछ भी नहीं करते।

वह ख्याल जाता रहा।

हाँ।

इसीलिए साझेदारी के व्यापार में मुनाफा न हुआ, यह जानकर दूकान उठाकर कर लौट जाना चाहती हो ?

हाँ।

महिम कुछ क्षण चुप रहा। चुप रहकर बोला—तो फिर चली जाना। लेकिन तुमने अगर इसे व्यापार समझना ही सीखा है, तो मुझसे तुम्हारे विचार का कभी मेल न होगा। मगर यह भी न भूलना कि व्यापार को समझने में भी समय लगता है। तुम्हारी यह धारणा कभी टूटे तो मुझे सूचित करना, मैं जाकर लिवा लाऊँगा।

अचला की आँख से आँसू की एक बूँद लुढ़क पड़ी, हाथ से उसे पोंछ-कर कुछ देर वह थिर रही, फिर कण्ठ स्वर को संयत करके बोली—भूल किसी से बार-बार नहीं होती। मैं नहीं समझती कि तुम्हें यह कष्ट कभी उठाने की जरूरत पड़ेगी ?

महिम बोला—समझा नहीं जा सकता, इसलिए उसे भविष्य कहते हैं। इसीलिए उस भविष्य की फिक्र भविष्य पर छोड़कर आज तो मुझे बख्शो मुझसे अब बकबक नहीं किया जा सकता।

अचला को चोट लगी। बोली—मजाक कर रहे हो? मजाक करना भूल है लेकिन। सच ही मैं कल परसा चली जाना चाहती हूँ।

महिम ने कहा—मैं सचमुच तुम्हे जाने देना नही चाहता।

अचला अचानक तैश मे आकर बोली—तुम क्या मेरी इच्छा के विरुद्ध मुझे रोककर रखओगे? यह हर्गिज नही कर सकते, पता है?

महिम न शा त स्वर सहज भाव से कहा—ठीक तो है, वह भी आज रात की बात नहीं। कल परसा जब जाओगी, सोचकर देखा जायगा। कहकर उसने तकिए को उलटा कर बात कतई ब द कर दी और थोडी ही देर मे सो भी गया शायद।

सवेरे चाय पर बठकर सुरश ने पूछा—महिम तो शायद आज भी खेती की निगरानी को निकल गया है?

अचला मिर हिलाकर बोली—दुनिया इधर स उधर हो जाय, उनका अपना नियम नही टूट सकता।

चाय का प्याला होठो से अलग करते हुए सुरेश ने कहा—एक हिसाब से वह हम लोगो से बहुत अच्छा है। उसके काम की एक गति है, जो कल के पहिए-सी तब तक जरूर चलेगी, जब तक की उसमे कुँजी भरी है।

अचला ने कहा—आप क्या कल-से होने का ही ठीक कहते हैं?

सुरेश गदन पर बल देकर बाला—हा, कहता हूँ, क्योकि ऐसा कर सकना अपनी समता के बाहर है। दुबल होना भी कितना बडा गुनाह है, यह तो मैं जानता हूँ, इसीलिए जो स्थिर मिजाज का है, उसकी प्रशसा किए बिना मैं नही रह सकता। लेकिन आज मुझे छुट्टी दो, मैं चलूं।

अचला तुरत राजी हो गई। बोली—जाइए। मैं कल जाऊँगी।

सुरेश न आश्चय से पूछा—तुम कहा जाओगी कल?

कलकत्ते।

अचानक? कहा, कल तो यह इरादा नही सुना था?

पिताजी बीमार है। उन्हे दखने जाऊँगी।

सुरेश के चेहरे पर उद्वेग की छाया उग आई। बोला—बीमार पिता को देखन की इच्छा दुनियाँ म अनहानी नही, मगर डर लगता है कही मेरे कारण नाराज वाराज होकर—

अचला ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। सामने से जद्दू जा रहा था। सुरेश ने पुकारकर पूछा—क्यों रे जद्दू तेरे बाबूजी खेत से लौट आए?

जद्दू ने कहा—जी आज सवेरे तो वे कहीं गए नहीं। अपने पढ़ने के कमरे में सो रहे हैं।

अचला सटपट गई। दरवाजे पर से झांककर देखा—महिम एक कुर्सी पर ओठंग कर सामने की मेज पर दोनों पांव रखे सो रहा है। रात की अधूरी नींद कोई इस तरह पूरी कर रहा है यह कोई अनोखी बात नहीं लेकिन अचला के आश्चर्य का वास्तव में ही ठिकाना न रहा, जब उसने देखा कि उसके पति दिन का काम बन्द करके असमय में सो गए हैं। वह पैर दबाए अन्दर गई और चुपचाप उसकी ओर ताकने लगी। सामने के झरोखे में से छनकर सवेरे की हलकी आभा उस सोए हुए मुखड़े पर पड़ रही थी। आज अचानक ही एक ऐसी चीज पर नजर पड़ी, जिसे इसके पहले उसने कभी नहीं देखा था। आज उसने देखा, शांत मुखड़े पर मानो अशांति का महीन जाल सा पड़ा है, ललाट पर जो कुछ लकीरें झलक रही हैं, साल भर पहले वे नहीं थीं। उसे लगा सारा चेहरा किसी छिपी वेदना से श्रांत और पीड़ित है। वह चुपचाप आई थी, चुपचाप ही चली जा रही थी लेकिन पीकदान को पैरों की ठोकर लग गई, उसी आहट से महिम ने आंखें खोल दीं। अचला ने पूछा—इस समय सो रहे हो? तबीयत तो खराब नहीं है?

महिम ने आंखें मलते हुए कहा—क्या पता! तबीयत खराब नहीं, यही तो ताज्जुब है!

अचला ने और कुछ न पूछा—कमरे से बाहर चली गई।

चाय-पानी चुकने के बाद सुरेश जाने की तैयारी कर रहा था—महिम पास ही एक कुर्सी पर बैठकर उससे बात कर रहा था। अचला दरवाजे के पास आकर बिना किसी भूमिका के बोल उठी—मैं भी कल जा रही हूं। सुविधा हो आप जरा पिता जी से मिल लेंगे।

सुरेश ने अचरज से कहा—अच्छा! फिर महिम की तरफ निगाह करके पूछा—भाभी जी को तुम कल ही कलकत्ते भेज रहे हो क्या?

स्त्री की इस जबर्दस्ती खिलाफत से महिम जल भुन उठा परन्तु चेहरे के भाव को प्रसन्न रखकर ही यह बोला—दूसरी कोई अड़चन नहीं थी, पर

देहात के गृहस्थ घर में नाटक करने का रिवाज नहीं। कल क्या आज ही तुम्हा
साथ भेज सकता था।

सुरेश का चेहरा शर्म के मारे तमतमा उठा। यह देखकर अचला तुर
जबरन हँसती हुई बोली—सुरेश बाबू हम लोगों का घर शहर में है, इसके लि
शर्म महसूस करने की कोई वजह नहीं। बीमार पिता को देखने जाना अग
गाँव में जायज नहीं है, तो मेरे ख्याल में अपने शहर का नाटक कहीं बेहतर है
न हो तो आज भर आप रुक जायें न सुरेश बाबू, कल साथ ही चलेंगे।

उसकी इस बेहद ढिठाई से सुरेश का चेहरा फक हो गया, वह सि
झुकाकर कहने लगा—नहीं-नहीं, मेरे रुकने की अब गुंजाइश नहीं भाभी जी
जाना हो, कल जाइए आप, मैं तो आज ही चला। कहते कहते उत्तेजना
वह अचानक बैग लेकर खड़ा हो गया।

उसकी उत्तेजना के इस आवेग ने अचला को भी एकबार मानो भूल
झक झोर दिया। वह व्याकुल होकर बोल उठी—गाड़ी को अभी काफी देर
सुरेश बाबू तुरत मत जाइए, रुक जाइए थोड़ी देर। कृपा करके मेरी दो बा
सुन जाइए। उसके आत करुण अनुरोध से दोनों ही श्रोता चौंक उठे।

अचला बिना किसी तरफ देखे कहने लगी—मैं आपके किसी भी का
न आ सकी सुरेश बाबू मगर आपके सिवा हमारा बुरे वक्त का मित्र कौन है
आप जाकर पिताजी से कह दें, इन लोगों ने मुझे बन्द करके रखा है, क
जाने नहीं देंगे—मैं यहाँ मर जाऊँगी। आप लोग मुझे यहाँ से ले चलें सुर
बाबू, जिसे प्यार नहीं करती, उसकी गिरस्ती करने को आप लोग मुझे य
न छोड़ें।

महिम विह्वल सा चुपचाप ताकता रहा। सुरेश ने मुड़कर दोनों आँ
चमका कर जोर से कहा—तुम्हें पता है महिम, ये ब्राह्म हैं। स्त्री हुई तो क्या
इन पर पाशविक बल-प्रयोग का तुम्हें अधिकार नहीं।

महिम जरा देर के लिए खो सा गया था। अपने को जब्त करके उस
कहा—तुम जिस लिए क्या कर रही हो, जरा सोच तो देखो अचला। फिर य
सुरेश से बोला—पशु-बल, मनुष्य बल—मैंने कभी किसी पर किसी भी बल क
प्रयोग नहीं किया। खैर, अगर रुक सको तो तुम आज रुक ही जाओ सुरेश, क
इन्हें साथ लेकर ही जाना। मैं खुद जाकर गाड़ी पर सवार करा आऊँगा, इस

गाँव की आँखों का इतना बुरा भी न दीखेगा ! कुछ क्षण रुककर बोला—मुझे जरा काम है मैं जाता हूँ। आज जब जाना ही नहीं हुआ, तो कपड़े बदल डालो सुरेश, मैं आधे घण्टे म लौट आता हूँ। और वह धीरे-धीरे बाहर हो गया।

अचला जैसी खड़ी थी मूरत की नाइ चौखट थामे उसी तरह खड़ी रही। सुरेश एक मिनट तो सिर झुकाए खड़ा रहा, फिर ठहाका मारकर हँसते हुए बोला—वाह, मजे का अभिनय हो गया एक भर का। तुमने भी कुछ बुरा नहीं किया मगर मैंने तो कमाल कर दिया ! उसके घर म उसी की स्त्री के लिए उसी पर आँखें तरेर दी मैंने ! इससे ज्यादा क्या चाहिए ? और मेरे दोस्त एक मीठी हँसी हँसकर मानो वाह-वाही देकर चल दिये। मैं शर्त बदकर यह कह सकता हूँ अचला, वह सिर्फ जी खोलकर हँसने के लिए काम का बहाना बना कर चला गया ! खैर, जरा आईना तो ला दो भाभी, एक बार देख लूं क्या शक्ल बनी है अपनी ! यह कहने के बाद सुरेश ने देखा, अचला का चेहरा बिल्कुल सफेद हो गया है। वह कुछ बोली नहीं—सिर्फ एक लम्बी निश्वास छोड़कर वहाँ से चली गई।

## १९

जिस सेज को छूने म भी अचला को आज नफरत होनी चाहिए थी, रोज की तरह शाम को वही सेज जब वह बिछाने के लिए कमरे मे गई तो उसका मन कहाँ और किस दशा मे था—जिनको भी मानव मन की थोड़ी-बहुत जानकारी है उनसे यह अजाना नही रह सकता।

कल के पुतले की नाइ नियमित काम करके जब वह लौट रही थी कि सामने की मेज पर नजर पड गई और एक मास म वह पैड पर पडी एक छोटी सी चिटठी को पढ गई। महज दो तीन पंक्ति। दिन नही तारीख नहीं—मृणाल ने लिखा था, सझले दादा जी, आखिर कर क्या रहे हो यह ? परसों से तुम्हारी राह देखते-देखते तुम्हारी मृणाल की आखें घिस गइ।

बडी देर तक अचला की पलक नही हिली। ठीक पत्थर की बनी प्रतिमा जमी पलक विहीन दृष्टि उसी एक पक्ति पर गडाए वह स्थिर खडी रही। यह चिट्ठी कब की है, कब कौन दे गया—यह सब उसे कुछ भी मालूम नही। मृणाल का घर किधर को है, किस मुह को है उसके घर का दरवाजा, किस रास्ते पर, क्यो वह इस उत्सुकता और आकुलता मे राह मे अपनी नजर छिपाए है—कुछ भी जानने की उसे गुजाइश नही। सामने स्याही की यह लकीर सिर्फ इतना ही बता रही थी कि जान किस परसा से कोई किसी की राह म नजर बिछाकर अपनी आखें चौपट कर रही है मगर दर्शन नही मिलते।

इधर उस झुटपुट कमरे के अन्दर एकटक देखते देखते उसकी अपनी आखें दु ख से दुखा गइ और काले-काले हरूफ पहले तो धुधले फिर मानो छोटे छोटे कीडे स कागज पर रेगने लगे। पता नही, कब तक वह इसी तरह देखती रह जाती, लेकिन अपने अजानते अब तक उसके अन्दर जो निश्वास जमता आ रहा था, वही जब रुँधे स्रोत के बाध तोड देने की तरह अचानक जोर से निकल पड़ा, तो उसी की आवाज मे चौककर वह आपे म आई। नजर उठाकर बाहर देखा, आगन म साझ का अँधेरा उतर आया था और जद्दू बाहर के कमरे म लालटेन देने के लिए चला जा रहा था। पूछा—जद्दू, बाबू लौट आए।

जद्दू ने कहा—नही मा जी, अभी तक तो नही लौटे?

अब अचला को याद आया दोपहर के उस शर्मनाक अभिनय के एक अक के बाद ही वे बाहर गए ह और तब से नही लौटे। पति के रोज रोज के रवैये म आज उसे जरा भी सन्देह न रहा। सुरेश के आने के बाद से घर म झगडा लडाई का रोज रोज एक ऐसा सिलसिला जारी हुआ कि उसमे उछलकर अचला और सब कुछ भुला बैठी थी। वह अपने पति को प्यार नही करती, मगर गलती से उससे विवाह किया है—इसी भूल की जिन्दगी भर गुलामी करने के खिलाफ उसका चचल मन बगावत की घोषणा करके रात दिन जूझ रहा था। मृणाल की बात वह एक तरह से भूल गई थी, पर आज साझ के धुँधलके म जब उसी मृणाल की एक पक्ति मारी जलन लिए पलट कर वह आई, तो पल भ यह प्रमाणित हो गया कि भूल स अपना पति बनाए हुए पुरुष का और किसी नारी से अनुरक्त होने का सन्देह जी को जलाने के लिए दुनिया की और किसी चिन्ता से हर्गिज छोटा नही।

उसने फिर एक बार चिट्ठी के पढने के ख्याल स हाथ बटाया, लवि शहरी घृणा से उसका हाथ आप ही लौट आया। चिट्ठी वही खुली पडी रही अचला बाहर आई और खभे के सहारे स्तब्ध खडी रही।

अचानक उसे लगा, सब झूठ है! यह घर द्वार, पति परिवार, खाना पहनना, सोना-बठना—कुछ भी सत्य नही। किसी भी चीज के लिए मनुष्य को हाथ बढाने की जरूरत नही। आदमी केवल मन के भ्रम से ही छटपटात रहता है, वरना क्या शहर इसका झापडा और राजमहल ही क्या, पति पत्नी मा-बाप, भाइ बहन का रिश्ता ही कहा! आखिर किसलिए यह लडाइ झगडा, रोना पीटना! दोपहर की उस उतना बडी घटना के बाद भी जा पति स्त्री को अकेली छोडकर घण्टो बाहर रह सकता है, उसके मन की बात को जानन के लिए सिरदद ही क्या? सब झूठ है सब कुछ धोखा! मरीचिका-सा ही भ्रम! परतु दुनिया उसके लिए ऐसी सूनी नही हो जाती, यदि वह मृणाल की भाषा पर ही सारी चिता न लगाकर मृणाल को ही जरा सोचन का कोशिश करती! दूसरी स्त्री से इस गवई, सदा आन दमयी नारी क आचरण की तुलना करती ता इनकी बाता की कालिमा ही उसके मा का इस कदर शायद काला नही कर पाती।

जदृदू उधए से लौटा। लौटकर उसने कहा—बाबूजी न पूछा चाय का पानी उबल गया है?

अचला मानो नीद से लगी, किन बाबू न?

जदृदू ने जोर देकर कहा—जी, अपन बाबूजी न। व लौट आय। चाय का पानी तो कब का तैयार हो चुका है मा जी।

अच्छा चलती हूँ। अचला रसोई की ओर बढी। थोटी देर म चाय और नाश्ता नौकर के हाथ दे वह बाहर गई। देखा, महिम अँधेरे बरामद पर पाय-चारी कर रहा है और सुरेश कमरे मे लालटेन के सामन ध्यान स अखबार पढ रहा है। गोया किसी को किसी की मौजूदगी का आज पता ही नही। इस अत्यन्त लज्जाकर सकोच ने जो इन दो आजीवन मित्रो के सहज शिष्टाचार की राह भी बन्द कर दी है, उसके उपलक्ष की याद से अचल के कदम आप ही आप रुक गए।

आज ज्यादा लगी। जो तुम जस आदमी को भी इतना गिरा दे—न, सुरेश, कल तुम जरूर घर चले जाओ। किसी बहाने अब रुका मत।

सुरेश फिर भी कुछ जवाब देना चाह रहा था, लेकिन अबकी उसके गले से आवाज भी न निकली वह गर्दन भी न उठा सका—उसके अजानते ही मानो गर्दन झुक गई।

तुम अन्दर जाओ अचला—यह कर दरवाजा खोलकर महिम अँधेरे में बाहर निकल गया।

अब सुरेश ने सिर उठाया। जबरदस्ती हँसकर बोला—सुन तो जरा बात। जाने ऐसी कितनी बन्दूक-पिस्तौल से खेलकर बुड्ढा हो गया, अब उसकी टूटी फूटी पिस्तौल के डर के मारे मर गया मैं! हँसी आती है—और सुरेश खींच-खींचकर हँसने लगा। उसकी हँसी में साथ देने लायक अचला के सिवाय कमरे में कोई न था। अचला लेकिन जैसे सिर झुकाए खड़ी थी, वैसे ही कुछ देर खड़ी रही फिर बगल के दरवाजे से चुपचाप अन्दर चली गई।

घण्टे भर बाद महिम अपने कमरे में आया। देखा, कोई नहीं है। बगल के कमरे में जाकर देखा, जमीन पर चटाई बिछाकर हाथ पर मुह रखे अचला लेटी है। पति को अन्दर आते देख वह उठ बैठी। पास ही एक खाली चौकी पड़ी थी। उस पर बैठकर महिम ने कहा—तो कल तुम्हारा मके जाना तय है न?

अचला नीचे देखती रही, कुछ बोली नहीं। महिम ने थोड़ा इन्तजार करके कहा—जिसे प्यार नहीं करती, उसी की गिरस्ती सम्हालो पति होकर भी मैं तुम पर इतना बड़ा जुल्म नहीं ढा सकता।

मगर अचला फिर भी बुत बनी बैठी रही—यह देख महिम कहने लगा—लेकिन तुमसे मुझे दूसरी शिकायत है। मेरा स्वभाव तो जानती हो। ब्याह के बाद से ही तो नहीं बहुत पहले से भी तो मुझे जानती थी कि सुख या दुःख जो भी हो अपने हक के सिवाय तिल भर भी ऊपरी पावना की उम्मीद नहीं रखता, मिलने पर भी नहीं लेता। मुहब्बत पर तो जबरदस्ती नहीं चल सकती, अचला। मुहब्बत न कर सको तो दुःख की चाहे हो शर्म की बात नहीं। फिर क्यों नाहक इतने दिनों से कष्ट झेल रही थी। मुझे जताए बिना ही यह क्या सोच लिया था कि मैं तुम्हें रोक रक्खूंगा? वे तुम्हें यहां से निकाल ले जायेंगे

तभी तुम्हारी जान बचेगी—और मुझे कहने से क्या कोई तदबीर नहीं होती ? तुम्हारी जान की कीमत केवल क्या वही समझते हैं ?

आँसू से स्पष्ट हुई आवाज को भरसक सहज और स्वाभाविक करती हुई अचला ने कहा—तुम भी तो प्यार नही करते ।

महिम ने चकित होकर कहा—यह किसने कहा ? मैंने तो कहा नहीं कभी ?

अचला को गम होते देर न लगी , बोली—कहना ही क्या सब कुछ है ? मुह की बात ही केवल सच होती है, बाकी सब झूठ ! गुस्से म मन के कष्ट से जो बात मुँह से निकल पडती है उसी को सत्य मानकर तुम जबदस्ती किया चाहते हो ? तुम्हारी तरह तौल तौल कर नही कह पाऊँ तो क्या ढकेलकर डुबा देना चाहिए ? कहते-कहते गला रुँध गया ।

महिम कुछ भी न समझ सका । बोला—इसका मतलब ?

उमडती हुई रुलाई को दबाकर अचला बोली—यह न सोचा कि तुम्हारे जसे सावधान आदमी भी मूठ को सदा छिपा कर रख सकते है। तुमसे भी कितनी भूल हो सकती है इसका सबूत अपनी मेज पर जाकर दखो । सिर्फ हमने ही—

महिम ने हतबुद्धि होकर पूछा—मेरी मेज पर क्या ?

मुह पर आचल रखकर अचला चटाई पर औधी लेट गई। उससे कोई जवाब न पाकर महिम धीरे धीरे अपनी मेज दखने गया। पढने के कमरे म मेज पर कुछ किताबें पडी थी, दस मिनट तक उनको उलट पुलट उनके नीचे, बगल म, सब देख गया पर पत्नी की शिकायत का कोई मतलब न निकाल पाया। विमूढ की नाईं लौट चला कि सोने के कमरे म कदम रखते ही मृणाल की चिट्ठी पर नजर गई। उसे उठाकर उसने पढा। पढते ही अँधेरे मे जैसे बिजली कौंध जाती हो, महिम को लहमे मे रास्ता सूझ गया। अचला का इशारा समझने मे उसे जरा भी देर न लगी। चिट्ठी को हाथ म लेकर महिम बिस्तर पर बठ गया और सूनी निगाहो मे बाहर अँधेरे की ओर ताकता रहा। मृणाल पहले दिन जसे आई थी, जसे चली गई थी, सौत कहकर अचला से जो-जो हँसी मजाक किया—एक-एक कर उसे सब याद आने लगा। गँवई गाव के ऐसे मजाकों की जो स्त्री आदी नही हो, उसे हर रोज यह कैसा चुभता रहा

और वह खुद भी जब वैसी दिल्लगियों में खुले जी से साथ न दे सका, बल्कि स्त्री के सामने लज्जित होकर बार बार रोकने की कोशिश की—उसकी वह लज्जा अगर इस शिक्षिता बुद्धिमति स्त्री के ख्याल में अपराधी की सही शर्म के नाते धीरे जमती गई हो, तो आज उसकी बुनियाद को उखाड कर कैसे फेंका जा सकता है? बाहर के अँधेरे में से ही बहुत से सत्य निकल कर उसे दिखाई देने लगे। दिन-दिन अचला का हृदय कैसे हटता गया है, स्वामी संग कैसे दिन दिन विपाक्त बनता गया है, स्वामी की पनाह उसके लिए कैद कैसे बनाती गई है—सब कुछ मानो वह साफ देख पाने लगा। इस दम घोटने वाली रुकावट से मुक्ति पाने की वह जो आकुल कामना सुरेश के सामने उस समय उबल पडी थी—वह उसके अंतरतम की कौन-सी गहराई से निकली थी, यह भी आज महिम के मन की आँखों से अगोचर न रही। अचला को वास्तव में उसने हृदय से प्यार किया था। इतने दिन इतनी पास होते हुए भी उसी अचला के मन की पीडा से लापरवाह रहने को उसने अपना बहुत बडा अपराध गिना। मगर ऐसे तो अब एक पल भी नहीं चलने का। स्त्री के हृदय को फिर से पाने की संभावना भी है या नहीं, वह कितनी दूर हट गया है—आज इसका अन्दाज कर सकना भी गैर मुमकिन है, लेकिन अनेक विरोधों से लडकर भी एक दिन जिसको उसने पति कहकर अपनाया था उसी से अपमान और फजीहत उठा कर आज उसे लौट जाना पड रहा है, इतनी बडी भूल तो उसे आग्रह कर ही देना है।

महिम उठा। धीरे धीरे अचला के दरवाजे पर पहुँचा। किवाड बंद मिला। ठेलकर देखा, अंदर से बंद था। धीरे धीरे दो एक बार आवाज दी और जब कोई जवाब न मिला, तो नाहक ही उसकी शांति को भंग करने की इच्छा न हुई—इसीलिए नहीं बल्कि एक मुश्किल इम्तहान से बहरहाल छुटकारा मिल गया इसीलिए जैसे वह बच गया।

महिम जाकर बिस्तर पर लेट रहा, लेकिन जिसके लिए सेज सूनी पडी रही वह दूसरे कमरे में जमीन पर भूखी पडी है यह सोच-सोचकर आँखों में नींद नहीं आई। उसे बुलाकर ले आना ठीक है या नहीं, आगा-पीछा करते-करते बहुत रात बीत जाने पर शायद कुछ देर के लिए उसकी आँखें लग गई थीं। एकाएक मुँदी पलकों पर तीखी रोशनी का अनुभव करके उसने आँखें खोल दीं।

सिरहाने के पास की खिड़की तथा छप्पर की फाँकों से बेहिसाब धुँए और प्रकाश से कमरा भर गया था। और पास से ही एक ऐसी आवाज उठ रही थी, जो कानों में प्रवेश करते ही सर्वांग को बेबस किए देती है। आग कहाँ लगी है, यह तो वह ठीक जान गया, फिर भी कुछ देर के लिए हाथ-पाँव न हिला सका। लेकिन उसी क्षण के अन्दर उसके दिमाग में सारी दुनिया घूम गई। उछलकर वह उठ खड़ा हुआ। दरवाजा खोलकर बाहर निकला। देखता क्या है कि रसोई घर और जिस कमरे में अचला सो रही थी, उसके बरामदे के एक कोने से आग की उठती लपटों ने ऊपर के जामुन गाछ को लाल कर दिया है। गाँव में फूस के घर में आग लग जाय, तो बुझाने की कल्पना भी पागलपन है। उसकी कोई कोशिश ही नहीं करता। मुहल्ले के लोग अपने असबाब और गाय-गोरू को हटाने में लग जाते हैं और दूसरे टोले के लोग, औरत एक तरफ, मर्द एक तरफ खड़े होकर मौखिक हाय हाय करते हैं। कितना सामान जल रहा है, कैसे यह आफत आई? इसी की चर्चा करते हुए जब तक घर जलता रहता है, खड़े रहते हैं। उसके बाद अपने-अपने घर जाकर बाकी रात सो रहते हैं। और सबेरे फिर लोटा लेकर मैदान जाते देखे जाते हैं और सबेरे के लिए उस चर्चा को वहीं खत्म करके नहाने खाने चले जाते हैं। लेकिन किसी के घर की राख की ढेरी दूसरे की रोजमर्रे की जिन्दगी में कोई अड़चन नहीं डालती।

महिम देहात का ही था, सब कुछ जानता था। सो नाहक ही शोर मचाकर उसने मुहल्ले के लोगों की नींद नहीं हराम की। जरूरत भी न थी। क्योंकि उसके आम कटहल के बड़े बगीचे को तड़प कर आग और किसी के घर को छूएगी, यह सम्भावना न थी। बाहर की कतार के जिन कमरों में सुरेश तथा नौकर चाकर साए थे, उन तक आग के फैलने में देर थी। देर न थी सिर्फ अचला वाले कमरे में। उसने उसी के दरवाजे पर जोर का धक्का मार कर पुकारा, अचला!

अचला जैसे जग ही रही हो, इस ढंग में बोली—*क्या है?*

महिम बोला—दरवाजा खोलकर निकल आओ।

अचला ने वर्फ-सी आवाज में कहा—क्यों? मैं तो मजे में हूँ।

महिम ने कहा—देर न करो, निकल आओ। घर में आग लग गई है।

जवाब में अचला भीत कंठ से चीख उठी, उसके बाद चुप! महिम के

फिर घबराकर पुकारने का जवाब भी न दिया। महिम को इसी का डर था, क्योंकि घर में आग लगना क्या होता है, इसकी कोई धारणा ही अचला को न थी। महिम ने समझ लिया जब तक वह आँख मूँदे ही बात कर रही थी। लेकिन आँख खोलते ही जिस नज्जारे ने उसको भी कुछ देर के लिए बेबस बना दिया था, उसी वह्निमाव प्रकाश से भरे घर को देखकर अचला का होश जाता रहा। इस दुर्घटना के लिए महिम तैयार ही था। उसने किवाड़ के एक पल्ले को उठाया और साँकल को खोल कर अन्दर दाखिल हो गया। मूर्छित पड़ी स्त्री को गोदी में उठाकर तुरन्त बाहर निकल गया।

अब घर के और लोगों को जगा देने के लिए वह नाम ले ले कर पुकारने लगा। सुरेश फक हुआ चेहरा लिए बाहर निकल आया। जद्दू आदि नौकर भी दौड़कर निकले। उसके बाद जोरों की एक आवाज से चेत में आकर अचला ने दोनों बाहों से पति की गर्दन पकड़ ली और फफककर रो पड़ी।

सब को लेकर महिम जब बाहर की खुली जगह में जा खड़ा हुआ, तो बड़े कमरे में आग सुलग गई। उसे याद पड़ गया, अचला के गहने पात आदि जो भी कीमती सामान है सब उसी में है और अब थोड़ी भी देर हो तो कुछ भी हाथ नहीं आने का।

अचला होश में आ गई थी, वह जोर से पति का हाथ दबाकर बोली—नहीं यह नहीं हो सकता। बदला चुकाने का यही क्या मौका मिला? मैं तुम्हें उसके अन्दर हर्गिज नहीं जाने दे सकती। जलने दो खाक हो जाय सब।

बिना गए काम न चलेगा अचला—कहते हुए जबरदस्ती अपना हाथ छुड़ाकर वह दौड़ा हुआ धुएँ के उस पहाड़ में जा घुसा। जद्दू चीखता हुआ पीछे-पीछे दौड़ा।

सुरेश अब तक हक्का-बक्का सा खड़ा ही रहा था। अचानक वह आपे में आया। अचानक दौड़ने की कोशिश करते ही धोती का छोर थामकर अचला ने कठोर स्वर में कहा—आप कहाँ चले?

सुरेश ने खींच-तान करते हुए कहा—महिम जो गया—

अचला रूखे स्वर में बोली—वे तो अपनी चीज बचाने गए। आप कौन हैं? आप को मैं हर्गिज नहीं जाने दूँगी।

उसके स्वर म स्नेह का नाम भी न था—यह मानो अनधिकारी के उत्पात को फटकार से दबाया उसने।

दो-तीन मिनट के बाद ही महिम दोनो हाथो मे दो पटिया और जद्दू माथे पर एक बहुत बडा बक्स लेकर निकला। पेटी को अचला के परो के पास रखकर महिम ने कहा—गहने की पेटी को छोडना मत—हम लोग जरा कोशिश कर देखें, अगर बाहर के कमरे से कुछ निकाल सकें। अचला के मुँह से एक भी शब्द न निकला। उसकी मुट्ठी मे तब भी सुरेश की धोती का छोर था। बसा ही रहा। महिम ने एक नजर उधर देखा और जद्दू के साथ तुरत ओझल हो गया।

## २०

सुबह की पहली जोत म पति के चेहरे पर नजर पडते ही अचला का हृदय हा हाकार करके रो उठा। किसी भी तरह से वह अपने आसू रोक न सकी। यह क्या हो गया। धूल, बालू राख से सिर के बाल रुखे, सूखे रुखे चेहरे का झुलसा कर आग की लपटो ने उसक वसे पति को एक ही रात मे बूढा बना दिया था। चारो तरफ घूम फिरकर बस्ती के लाग शोर कर रह थे। कासे-पीतल के बतन वासन तो सब गए—दिखाई ही दे रहे थे। खैर, बतन जायें, मगर शाल दुशाले गहने पाते ही एक बक्स मे कितन बच रह होग—इसी पर खासी समालोचना चल रही थी। थोडी ही दूर पर बुझने हुए अग्नि स्तूप की तरफ सूनी निगाहो से दखता हुआ महिम चुप खडा था। सुन वह सब कुछ रहा था, पर लोगो का कौतूहल मेटने जैसी म ा की अवस्था नही थी। उस टोले के भीखू बनर्जी—जाने माने आदमी वात की तकलीफ के कारण अब तक पहुँच नही पाए थे। अब लाठी के सहारे लोगा के साथ उह आत देखकर महिम उनकी आर बढा। बनर्जी बाबू तरह तरह से विलाप करने के बाद बोले—महिम तुम्हारे पिता को गुजर थोडे दिन हो गए, मगर हम दाना दो नही थ। एक जान दो कालिब।

महिम गर्दन हिलाकर उत्सुक आंखों ताकता रहा। पास ही घेरे की आड़ में सामान के पास अचला बैठी थी। वह भी उद्ग्रीव हो उठी—इतनी ही भूमिका के बाद बनर्जी बाबू कहने लगे—ब्रह्मा का क्रोध तो कुछ यों ही नहीं होता बेटे! हम लोगों से पूछा तक नहीं, एक इतने बड़े ब्राह्मण का लड़का होकर क्या कुकर्म कर बैठे?

महिम समझ नहीं सका। अपनी बात की विस्तार से व्याख्या करने के लिए अपने अनुचरों की ओर ताककर कहने लगे—हम सभी यही कहा करते थे कि कुछ न कुछ हो ही गा। भला और किसी पर ब्रह्मा का क्रोध क्यों नहीं उमड़ा? बेटे, ब्राह्म जो है, ईसाई भी वही है! साहब का कहते हैं ईसाई और बंगाली हो तो ब्रह्मा। यह हमसे—जिन्हें शास्त्र का ज्ञान है—नहीं छिप सकता।

जो वहां मौजूद थे, सबने हामी भरी। उत्साहित होकर बोल उठे—करने को जो चाहे करो बेटे पहले इसका प्रायश्चित करके और उसे त्याग कर—

महिम ने हाथ उठाकर कहा—रुकिए। आप लोगों का मैं अनादर नहीं करना चाहता, मगर ऐसी बात न कहिये, जो कि है नहीं। मैं जिन्हें ले आया हूं, उनके पुण्य से घर रहे तो ठीक नहीं तो बार बार जल जाए, मुझे यह भी कबूल है। कहकर वह दूसरी तरफ चला गया!

बनर्जी बाबू जमात के साथ कुछ देर हक्का किए खड़े रहे फिर लाठी ठक-ठकाते हुए घर लौट गए। मन ही मन जो कहते गए उसे जबान पर न लाना ही बेहतर।

अचला ने जब सुना। उसकी आंखों से आंसू की बड़ी-बड़ी बूंदें टपकने लगीं।

जदूदू ने आकर कहा—मां जी, बाबूजी ने कहा—आपसे पूछ कर मैं पालकी-कहार बुला दं। बुला दूं?

आंचल से आंखें पोंछकर अचला ने कहा—बाबू को एक बार बुलाओ तो जदूदू।

और पालकी?

रहने दो अभी।

महिम के नजदीक आकर खडे होते ही उसकी आखो मे फिर आँसू आ गए। झुककर अचानक उसने उसके पैरो की धूलि ली कि महिम चकित और व्यग्र हो पडा। शायद हो कि वह पति के हाथ पकडकर पास बैठाती या कि और कोई बचपना कर बैठती, क्या करती यह उसके अतर्यामी ही जानें, लेकिन सबेरा हो चुका था, चारो तरफ उत्सुक लोग। अचला ने अपने को सयत करके कहा—पालकी किस लिए ?

महिम ने कहा—नौ बजे वाली गाडी पकडना ही तो सब तरह से अच्छा रहेगा। एक बजे तक घर पहुँच कर नहा-खा सकोगी। रात भी तो तुमने नही खाया।

और तुम ?

मैं ? महिम ने जरा सोचकर कहा—मेरा भी कोई न कोई उपाय हो ही गा।

तो फिर मेरा भी होगा। मैं नही जाऊँगी।

कौन-सा उपाय होगा, कहो।

अचला इस बात का जवाब न दे सकी। एक बार तो उसकी जबान पर आया, जगल मे पेड तले ! मगर वास्तव मे तो यह सभव नही। और बस्ती मे किसी के यहा घण्टे भर के लिए भी पनाह लेना कितना अपमान-जनक है, उसका आभास तो अभी अभी अच्छी तरह से वह पा चुकी है। मृणाल की बात याद नही आई, सो नही—बार-बार याद आई, पर शर्म से वह बोल नही सकी। कुछ देर चुप रहकर बोली—तुम भी मेरे साथ चलो।

महिम ने आश्चर्य से कहा—मैं साथ चलू ? लाभ ?

अचला ने कहा—लाभ-हानि देखना अब मेरे जिम्मे रहा। तुम्हारे हितू यहाँ ज्यादा हैं नही, यह मैं खूब देख चुकी। फिर तुम्हारी सूरत रात ही भर मे कैसी हो गई है—तुम नही देख पा रहे हो, मैं देख रही हूँ। मेरा गला भी काट डालो, तो भी तुम्हे यहा अकेला छोडकर मैं नही जाऊँगी।

महिम के मन मे उथल पुथल होने लगी—लेकिन वह स्थिर ही रहा।

अचला बोली—तुम इतना सोच क्या रहे हो ? मेरे गहने तो है। इनसे पश्चिम मे जहाँ भी हो, कोई छोटा सा मकान हम मजे मे खरीद सकेंगे। जहा

भी रहूं, मुझे तुम भूखों न मारोगे। कोशिश तुम्हें करनी ही होगी और वह तो दिया वह भार अवस मुझ पर रहा।

जद्दू ने आकर पूछा—पालकी ले आऊँ मा जी ?

जवाब के लिए अचला उत्सुक हो पति की ओर ताकने लगी। महिम ने जवाब दिया। जद्दू को पालकी लाने का हुक्म दिया और स्त्री से कहा—मगर मैं तो अभी नहीं जा सकता।

सुनकर अनिर्वचनीय शांति और तृप्ति से अचला का हृदय भर गया। मन के आवेग को दबाकर उसने कहा—मानती हूँ, तुरत चल सकना तुम्हारा नहीं हो सकता मगर यह कहो कि सांझ की गाड़ी से जरूर जाओगे ? नहीं तो मैं भोजन लिए बैठी सोचती रहूँगी, और—

मगर उसका मंतव्य महिम के निश्वास में मानो डूब गया। वह उदास होकर बोली—सांझ को नहीं जा सकोगे ? तो फिर अँधेरी रात में किसके यहां—पर कहते कहते वह रुक गई। जिसके यहां पति के रात बिताने की संभावना थी, उसकी याद आते ही उसका चेहरा गंभीर और फीका हो गया। महिम ने शायद उसके मन की बात नहीं समझी। पूछा—कलकत्ते से मुझे कहां जाने को कहती हो ?

अचला ने तुरत जवाब दिया—क्यों पिताजी के यहां ?

महिम ने सिर हिलाकर कहा—नहीं।

नहीं क्यों ? वह भी क्या तुम्हारा अपना घर नहीं ?

महिम ने वैसे ही सिर हिलाकर कहा—नहीं।

अचला ने कहा—न हो तो वहां दो ही दिन रहकर हम पश्चिम चले जाएँगे।

नहीं।

अचला जानती थी, उसे डिगाना मुमकिन नहीं। कुछ सोचकर बोली—तो चलो यहीं से हम पश्चिम के किसी शहर को चलें। मैं खूब जानती हूँ, मैं साथ दूंगी तो हमें कहीं तकलीफ न होगी। लेकिन गहने तो बेचने पड़ेंगे, यह काम कलकत्ते के सिवा कैसे होगा ?

महिम दूसरी ओर देखता हुआ चुप हो रहा। अचला ने अकुलाकर पूछा—पश्चिम में भी तो बड़े शहर हैं, वहाँ भी तो बेचा जा सकता है ? मेरे कसम

मे लगभग दो सौ रुपए हे। उनसे जाना तो हो ही जायगा। चुप हो ? जल्दी बोलो न ?

महिम स्त्री की नजर की ओर न देख सका। मगर जवाब दिया—तुम्हारे जेवर मैं नही ले सकूगा अचला।

कोई भारी धक्का खाकर अचला जैसे पीछे हट गई। क्या नही ले सकोगे, जान सकती हू क्या ?

महिम ने इसका कुछ जवाब न दिया। कुछ देर तक दोनो निस्तब्ध हो रहे। अचानक अचला ने प्रश्नो की झडी लगा दी—ससार म पति क्या अकेले एक तुम ही हो ? आडे वक्त मे आखिर वे कैसे लेते हैं ? स्त्री का गहना रहता किस लिए है ? इतने कष्ट स आखिर तुम इन्हें बचाते ही क्यो गए ? यह कहकर टिन के छोटे मे बक्स को हाथ से ठेलकर कहा—मुसीबत की घडी म ये काम ही न आए तो यह बोझा ढोते फिरने से क्या लाभ ? आग तो अभी जलही रही है —मैं इस उसी मे डालकर निश्चित होकर चली जाती हूँ, तुम्हारे जी मे जो हो, वही करना। उसने आँचल से आँखें दबाली।

दो एक मिनट चुप रहकर महिम ने धीरे-धीरे कहा—मैंने सब सोच देखा अचला। मगर तुम्हें तो मालूम है, मैं कोई काम झोक पर नही करता। कोई बाई करे, यह भी नही चाहता। तुम जो देना चाह रही हो, उसे अपना समझ कर मैं ले सकता तो आज मेरे सुख की सीमा नही रहती। लेकिन किसी भी प्रकार से ले नही सकता। मेरी तकलीफ देखकर और भी बहुतेर लोगो ने बहुत-बहुत देना चाहा था, लेकिन वह भी जैसी दया थी, यह भी वैसी ही दया है। लेकिन इसमे न तुमलोगो का, न अपना, किसी का भला न होगा, ऐसा ही मेरा विश्वास है।

अचला और न सह सकी। रोना भूलकर शायद प्रतिवाद करने के लिए ही दोनो जलती आखें ऊपर उठाकर स्वामी की नजर का अनुसरण करते हुए देखा, थोडी दूर पर उन लोगो का जो पोखरा है, उसी के घाट के पास वेदी बँधे नीमगाछ के नीचे हाथ पर सिर टिकाए सुरेश आसमान की ओर पडा-पडा ताक रहा है। अचला के मुँह की बात मुँह म रह गई और उसका उठा हुआ सर आप ही आप झुक गया।

लेकिन महिम बहुत कुछ अपमान सा अपने आप ही कहने लगा—यह ना

कि मुझे कभी चैन नहीं मिलेगा, बल्कि बार बार तुम्हें वंचित करूँ, हममें यही सम्बन्ध कभी नहीं हुआ। थोड़ी देर रुककर बोला—अचला, अपने को उजाड़कर दान करने का दुःख बहुत बड़ा है। सनक में कभी पल भर में वह किया तो जा सकता है। पर उसका नतीजा भोगना पड़ता है जिंदगी भर! मैं जानता हूँ एक भूल के चलते तुम लोगों के अफसोस का हद्दोहिसाब नहीं। एक भूल और बन जाय तो न तो कभी तुम खुद को माफ कर सकोगी, न मुझ को। इस नुकसान को सहने का तुम्हारे पास कोई सम्बल नहीं, इस बात का पता मुझको आज चाहे न चले, दो दिन बाद चलेगा। इसीलिए तुमसे मैं कुछ भी नहीं ले सकता।

ये बातें अचला के कलेजे में चुभीं। पति की नजरों में वह कितनी पराई है, इस बात का अनुभव आज जितना किया, और कभी नहीं किया था तथा साथ ही साथ मृणाल की याद आते ही वह गुस्से से भर उठी। वह भी सख्त होकर बोल उठी—इतनी देर से तुम मुझे जो समझा रहे हो, वह मैंने समझा। शायद हो कि तुम्हारा कहना सही है, या तुम्हारा मुँह देखकर दया से ही मैंने अपना सबस देना चाहा था। शायद दो दिन के बाद वास्तव में ही मुझे इसके लिए पछताना पड़ता—सब सही है, लेकिन देखो, दूसरों के मन की भावना को समझ लेने की जितनी भी शक्ति तुम्हें हो लेकिन तुम्हें समझा देने वाली चीज भी है। स्त्री की चीजों को जबर्दस्ती लेने की बात तो जाने दो, हाथ फैलाकर ही लेने का तुम्हें कौन-सा सहारा है? तुम से अब तक नहीं करूँगी। आज से मेरी यही सांत्वना रही कि इतनी-सी विवेक-बुद्धि तुममें है। लेकिन मैं जहां कहीं भी रहूँ, कभी न कभी सारा कुछ तुम्हें समझना ही पड़ेगा। और हथेलियों से मुँह छिपाकर उसने अपनी रुलाई रोकी।

नौ बजे की गाड़ी से सुरेश भी घर लौट रहा था। रात की अगलग्गी ने उसे ऐसा ता कर दिया। उसे मानो किसी से बात करने की शक्ति ही न थी। गाड़ी को कुछ देर थी। महिम को स्टेशन के एक किनारे ले जाकर सुरेश ने कहा—महिम इस अगलग्गी के लिए तुम्हें मुझ पर तो सन्देह नहीं है?

उसके दोनों हाथों को कसकर दबाकर महिम ने कहा—छि!

सुरेश की आँखें डबडबा गईं। रुँधे स्वर से बोला—कल से इसी के लिए मुझे चैन नहीं है महिम।

महिम ने चुपचाप उसके हाथ को सिर्फ दबा दिया। उसके बाद बोला—एक सच्चा गुनाह बहुतेरे झूठे गुनाहों को ढो लाता है सुरेश। लेकिन बेहद दुःख पाकर तुम और चाहे जो करो, जिसे 'क्राइम' कहते है, वह नही कर सकते ऐसा आज भी मेरा विश्वास है। जरा रुककर बोला—तुम भगवान को नहीं मानते सुरेश, लेकिन जो मानते हैं वे सदा यही प्रार्थना करते है कि भगवान जिसमे उनके इस विश्वास को न तोड दें।

गाडी आ लगी। औरतो के डिब्बे म अचला और उसकी नौकरानी को चढाकर सुरेश के पास आते ही उसने खिडकी से हाथ निकालकर महिम का हाथ पकड कर कहा—तुमने मेरी कल की क्षति पूर्ति करने की प्रार्थना न मानी पर ईश्वर जिसमे तुम्हारी प्रार्थना को मजूर करे भाई। मुझको व और छोटा न करे—कहकर उसने हाथ छुडाकर मुह फेर लिया।

उधर खिडकी पर मुँह रखकर अचला अब तक जद्दू से चुप चुप क्या ता कह रही थी, महिम के करीब आते ही उसने पूछा—मृणाल दीदी के पति क्या आज गुजर गए?

महिम ने सिर हिलाकर कहा—हा, सुना, थोडी देर पहले चल बसे।

अचला ने पूछा—दस बारह दिन से न्यूमोनिया के शिकार थे। मुझे यह बताना भी तुमने आवश्यक नही समझा?

महिम ने इसका जवाब देना चाहा—पर कैसे क्रम बिठाकर कहे, यही सोचते-सोचते सीटी बजाकर गाडी खुल गई।

## २१

कदार बाबू की सेहत अभी भी पहले जसी नही हो पाई थी। खा-पीकर बरामदे के एक ईजी-चेयर पर पडे-पडे अखबार पढते हुए शायद जरा आखे लग गई थी। दरवाजे पर खटका और गाडी की रूखी आवाज से उन्होने आँख खोलकर देखा, सुरेश और उसके साथ-ही साथ उसकी बेटी और दाई गाडी से

उतरी। नींद उनकी काफूर हो गई। जाने कैसी एक शङ्का से उन्होंने जोर से कहा—अचला? तुम कहा से सुरेश? मामला क्या है? मैं तो कुछ समझ नहीं पा रहा हूँ।

अचला ने आकर पिता के चरणों की धूल ली। सुरेश ने नमस्ते करके कहा—सुरेश का तार नहीं मिला?

केदार बाबू ने घबराकर कहा—कहां नहीं तो।

एक कुर्सी खींचकर बैठते हुए सुरेश बोला—तो या तो वह तार लगाना भूल गया या अभी पहुचा नहीं है।

केदार बाबू बोले—भाड़ मे जाय तार, माजरा क्या है, यह बताओ न। इन्हें तुम ले कहा से आए?

सुरेश बोला—कल रात महिम का घर जल गया।

घर जल गया? सवनाश! कहते क्या हो—घर जल गया? कैसे जला? महिम कहा है? तुम्हें ये कहा मिले? एक साँस मे इतने सवाल पूछकर केदार बाबू धप्प से अपनी आराम कुर्सी पर बैठ गए।

सुरेश ने कहा—मैं इन्हें वहीं से लेकर आ रहा हूँ। मैं वहीं था न।

केदार बाबू का मुखड़ा बड़ा अप्रसन्न और गम्भीर हो उठा। बोले—तुम वहीं थे? कब गए वहा मुझे तो नहीं मालूम। मगर वह कहा है?

सुरेश बोला—महिम तो आ नहीं सकता, इसीलिए—

उनका गम्भीर मुखड़ा स्याह पड़ गया। सिर हिलाकर बोले—नहीं नहीं यह सब अच्छी बात नहीं। बड़ी बुरी बात। घोर अन्याय। यह मैं हर्गिज—कहते कहते नजर उठाकर उन्होंने बेटी की ओर देखा।

अचला अब तक एक कुर्सी का हाथ थाम खड़ी थी। पिता का यह सन्देह उस के हृदय में गड़ा। उसके यों अचानक आ जाने के हेतु पर वे जरा भी यकीन नहीं कर सके यह साफ समझकर लज्जा और घृणा से उसके चेहरे पर लहू का चिह्न तक न रहा।

केदार बाबू से यहां भूल हो गई। बेटी की सूरत मे उसका सन्देह और मजबूत हो गया। आराम-कुर्सी पर लेटकर अखबार को चेहरे पर रखते हुए एक निश्वास छोड़ बोल उठे—तुम लोग जो ठीक समझो, करो। मैं कल ही घर छोड़कर और कहीं चला जाऊँगा।

सुरेश ने अचरज भरी नाराजगी से कहा—आप यह सब कह क्या रहे हैं केदार बाबू ? आप घर छोड़कर ही क्यों जाएँगे और हुआ ही क्या है ? कह-कर वह कभी अचला और कभी उसके पिता की ओर ताकने लगा। लेकिन उसे किसी का मुँह दिखाई नहीं पड़ा।

केदार बाबू का कोई जवाब न पाकर सुरेश उठ खड़ा हुआ। बोला—खैर, महिम ने मुझे जो भार सौंपा था, हो गया। अब आप लोग जो अच्छा समझें, करें। मैं नहा खा नहीं सका हूँ, घर जा रहा हूँ। कहकर वह द्वार की तरफ दो एक कदम बढ़ा ही था कि केदार बाबू उठकर थकी सी आवाज में बोल पड़े—आह, जा क्या रहे हो ? बात क्या है, यह तो बताओ। आग लगी कैसे ?

सुरेश ने जमे रूठे हुए-से कहा—सो नहीं जानता।

तुम वहाँ गए कब ?

पाँच छः दिन पहले। मैंने अभी भोजन नहीं किया। अब देर नहीं कर सकता। कहकर फिर जाने का उपक्रम करते ही केदार बाबू बोल उठे—अहा-हा, नहाना खाना तो देख रहा हूँ, किसी का नहीं हुआ है—मगर जंगल में तो नहीं आ निकले, यह भी घर ही है, यहाँ भी नौकर चाकर हैं। अचला, बैरे को आवाज दो न जरा, खड़ी क्या हो ? बैठो बैठो सुरेश, माजरा क्या है, खोलकर ही बताओ।

सुरेश पलटकर बैठ गया। जरा चुप रहा, फिर बोला—रात सो रहा था। महिम की चीख पुकार से निकला। देखता हूँ कि सब धू धू जल रहा है। फूस की छौनी, बुझाने का उपाय न था। वह बेकार कोशिश किसी ने की भी नहीं—सब राख हो गया।

केदार बाबू उछलकर बोल उठे—ऐं, सब जल गया। कुछ भी निकाला न जा सका ? अचला के गहने ?

वे बच गए।

गनीमत। कहकर एक लम्बा निश्वास छोड़कर वे बैठ गए। कुछ देर चुप रहकर बोले—फिर भी, आग लगी कैसे ?

सुरेश ने कहा—कहा तो आपसे, इस बात का पता अभी नहीं चला है। लेकिन इतना मैं देख आया कि गाँव में उसका खास कोई हितू नहीं है।

नहीं है ?

नही।

केदार बाबू और कुछ नही बोले। बडी देर तक चुप बैठे रहे। आखिर एक गहरा निश्वास छोडते हुए उठकर बोले—जाओ नहा लो सुरेश, अब देर न करो। देखूं चलकर क्या कुछ बन बना रहा है—और उसे साथ लेकर कमरे से बाहर चले गए।

खान पान के बाद भी उन्होंने सुरेश को जाने नही दिया। एक आराम कुर्सी पर वह अर्धनिद्रा पडा था। अचला वही जो नहाकर अपने कमरे में दाखिल हो दरवाजे को बन्द किए रही सो उसका पता नही। चैन न थी सिर्फ केदार बाबू को। अब तार जाने न आने का कोई मतलब न था लेकिन उसी के लिए बेताबी से इधर उधर करते हुए—शाम के समय सोना ठीक नही है—कहते हुए उन्होंने बेटी को बुलवाया और बोले—तुम लोगो ने तो बताया, उसने तार भेजा है, तार भेजा है कहा कुछ पता तो नही उसका। तुम लोग ट्रेन से चलकर आ पहुँचे और तार की खबर अभी तक नही आ पहुँची। अच्छा ठहरो देखता हूँ—बेटी के उत्तर का इन्तजार किए बिना ही वे चप्पल फट फटाते हुए तेजी से नीचे उतर गये और थोडी ही देर में नीचे से उनकी तेज आवाज सुनाई देने लगी। अचला की दाई से वह तरह तरह का जिरह करने लगे और वह बेचारी अचरज से बार-बार प्रतिवाद करने लगी—जी, अपनी आखो देख आई, आग लगी, घर-द्वार राख हो गया और आप क्या कह रहे है, नही जला है! सोच देखें, आग ही नही लगी तो घर दरवाजा जल कर राख कैसे हो गया।

सुरेश सब सुन रहा था। नजर उठाकर उसने देखा, चौखट पकडे खडी खडी उडे हुए चेहरे से अचला एक एक बात को पी रही है। सूखे उपहास के ढग से कहा—तुम्हारे बाबूजी को हो क्या गया, बता सकती हो?

अचला ने चौंककर देखा। कहा—नही।

सुरेश बोला—मैं बेधडके कह सकता हूँ, उन्हें यकीन नही आया। उनका ख्याल है आग लगने का किस्सा हमने गढ लिया है। जरा देर थमकर बोला—असली बात का पता आखिर एक न एक दिन चल ही जायगा, लेकिन उनका सन्देह कुछ ऐसा है कि मेरा यहा आना असम्भव हो उठा।

अचला ने उदास होकर पूछा—आप क्या अब नही आएँगे?

खड़े होकर सुरेश ने कहा—मुमकिन नहीं लगता है। आखिर मुझे भी तो कुछ आत्म-सम्मान है? किसी आदमी से मेरा बैग मेरे यहां भिजवा देना।

अचला ने सिर हिलाकर कहा—अच्छा। लेकिन उसके यहां आने न आने के बारे में एक शब्द न बोली।

कल सवेरे ही भिजवा देना। बहुत सी जरूरी चीजें हैं इसमें और केदार बाबू की राह देखे बिना ही चला गया।

लौटने पर केदार बाबू कुछ चकित जरूर हुए लेकिन मन में नाखुश हुए हैं, ऐसा न लगा।

रात काफी देर तक बिस्तर पर करवट बदलते रहने के बाद अचला उठ बैठी। जी में आया, बरामदे पर टहलती हुई वह बाहर के तांगों को सड़क पर जाते-जाते देखकर थोड़ी अनमनी हो जाय।

कमरे के उस ओर वाले दरवाजे को खोलकर वह बरामदे पर पहुँची। देखा बैठके की रोशनी अभी जल रही थी। पहले यह जी में आया कि नौकर शायद गैस बन्द करना भूल गए, लेकिन कुछ ही दूर बढ़ने पर पिता की आवाज कानों में पड़ने से उसके आश्चर्य की सीमा न रही। वे सदा दस बजते बजते सो जाते मगर आज साढ़े दस बज गए। तुरत दाई की आवाज सुनाई पड़ी। वह कह रही थी—पति चल बसे, मृणाल दीदी अब पति का घर संभालेगी, मुझे तो ऐसा नहीं लगता बाबू। मेहमान से दादा पोती का कैसा रिश्ता है, वही जानें।

केदार बाबू, हूँ, करके रह गए।

अचला समझ गई, इसके पहले काफी बातें हो चुकी हैं। मृणाल के बारे में, महिम के बारे में, उसके बारे में—बाकी कुछ नहीं छूटा है। लेकिन कहीं अपने बारे में अपने ही कानों निहायत कटु बातें सुननी पड़ें, इस डर से वह जैसे चुपचाप आई थी, वैसे ही चुपचाप चल देना चाहने लगी, लेकिन जानें किस बात ने तो लोहे की जंजीरों से उसके पांवों को बांध दिया।

कुछ देर चुप रहकर केदार बाबू ने पूछा—गरज कि दोनों में पटी नहीं, यह कहो।

दाई बोली—रत्ती भर नहीं, तिल भर नहीं बाबू। एक दिन भी नहीं।

इस दाई को अचला आज तक नादान ही समझती थी—आज पता चला, अक्ल उसे किसी से भी कम नही।

केदार बाबू मिनट भर चुप रहकर फिर बोले—ता कल रात किसी का खाना नसीब नही हुआ, क्यो? सुरेश के चले जाने के बाद से लगभग लडते झगडते ही बीता?

दाई का जवाब सुना न जा सका, लेकिन पिता की बात से ही समझ म आ गया कि गदन हिलाकर उसने क्या राय जाहिर की? क्योकि दूसरे ही क्षण केदार बाबू एक गहरा निश्वास छोड कर बोले—मै पहले ही जानता था कि एक दिन यह नौबत आएगी। आजकल के लडके लडकिया मा-बाप की बातो की तो परवा करते नही। नही तो मै तो करीब-करीब सब ठीक पर ले आया था। आज उस चिन्ता किस बात की थी! कहकर उन्होने फिर एक निश्वास फेंका, वह भी साफ सुनाई पडा।

दाई ने पूरी हमदर्दी के साथ छूटते ही कहा—आप ही कह बाबू, नहा तो आज चिन्ता किस बात की थी! कैसे तो एक गवई-गाव मे माटी का घर! वह भी न रहा! और मेहमान भी तो—कहकर उसने भी बात को अधूरा ही रखकर एक लम्बे निश्वास से काफी दूर तक ठेल दिया।

नसीब! कहकर केदार बाबू कुछ देर चुप रहे, फिर खडे होकर बोले—खैर, तू जा। उसे रुखसत करके बत्ती गुल करने के लिए वे बैरे को पुकारने लगे।

अचला पाव दबाए धीरे धीरे अपने कमरे म जाकर पड रही। पिता की उदारता, उनके सज्जनता बोध की धारणा कभी भी उसके मन की ऊँची नही रही थी, लेकिन वह इस हद तक नीचे है कि व घर की दाई से भी अकेले म ऐसी चर्चा कर सकते हैं अचला यह नही सोच सकती थी। आज उसका मन छोटा होकर जमीन पर लोट रहा था पर उसका पति, उसका पिता, उसकी दासी, उसका मित्र—सभी जब उसकी तरह धूल म लुट पडे हैं तो किसी का सहारा लेकर जो वह कभी इस गिरावट से ऊपर भी उठ सकेगी, इस भरोसे की वह कल्पना तक नही कर सकी।

## २२

दुनिया के और-और लोगो की तरह केदार बाबू दोप गुण वाले ही आदमी थे। लडकी के ब्याह के लिए पढे लिखे दामाद, सम्पन्न घर की ही उन्होंने कामना की थी। महिम लडका भला है। एम० ए० पास है, गाव मे रहने-खान का ठौर-ठिकाना है। लिहाजा उसके हाथो बेटी को सौपना उन्होंने सौभाग्य ही समझा था। लेकिन एकाएक एक दिन उसका धनी दोस्त सुरेश अपनी गाडी पर आकर उलटा बताकर जब खुद ही ब्याह का उम्मीदवार बन बैठा, तो दोनो की माली हालत का लेखा लगाकर महिम को जवाब देकर सुरेश को अपनाने म केदार बाबू को जरा भी एतराज न हुआ। प्यार के बारीक तत्वो से उन्ह कोई वास्ता न था उनकी धारणा थी कि लडकिया पति के रूप मे उसी को अच्छा समझती है जिसके पास गाडी पालकी चढकर, गहना कपडा पहनकर आराम से रह सकें। लिहाजा बेटी को खुशी बनाना ही अगर पिता का फर्ज है, तो ऐसे एक अपन आप आए हुए मौके को हाथ से निकलने देना ठीक नही यह तै कर लेने म उन्ह खास कुछ मगजपच्ची नही करनी पडी।

यहा तक कि विवाह के पहले ही दामाद से पाच हजार रुपया कर्ज लेना भी उन्ह अनुचित न लगा। उसे चुकाने की चिंता न भी उन्हे परेशान नही किया, इसलिए कि वह घर तो उसी का रहेगा।

मगर इस दईमारी लडकी ने सब कुछ गोबर कर दिया, हर्गिज राजी न हुई। लाचार, अन्त तक उन्ह महिम के हाथो ही बेटी को सौपना पडा जरूर, लेकिन इस दुर्घटना से उनके क्षोभ की सीमा न रही, उसके सिवाय जो बात उन्ह अपने आप कबूल करनी पडी, वह यह कि रुपया अब लौटा देना चाहिये। लेकिन चूँकि कर्ज की लिखा-पढी न थी और वसूल करने का उपाय भी उतना साफ सहज न था, इसलिए उस चिंता को भी वे मन म उतना महत्व नही दे सके। सो गर्चे कि यह सवाल मन म उठा लेकिन जवाब वैसा ही धुँधला रहा।

अचला ससुराल चली गई। इसके बाद सुरेश का आना जाना, घनिष्टता केदार बाबू को पसन्द न थी। घर मे नही है, यह कहलाकर ज्यादातर भेंट भी नहीं करते थे। लेकिन उसे चाहते थे, इसलिए बेटी के दुर्व्यवहार स व मन ही मन लज्जित हो दुखी ही रहते थे।

ने उसकी कोई खोज नहीं ली ? उदासीनता का गहरा अपमान और लाछना रात भर मानो उसे आग मे झुलसाती रही ।

सुबह देर से नीद टूटी । सूरज की तरुण किरणें झरोखे से आकर कमरे के फर्श पर पड रही थी ।

वह विस्तर पर उठ बैठी और सिरहाने की खिडकी खोलकर चुपचाप रास्ते की तरफ देखती रही ।

कलकत्ते की सडक पर लोगो का ताँता टूटने वाला नहीं । कोई काम से निकला था, कोई घर लौट रहा था और कोई सुबह की धूप हवा म यो ही घूम रहा था—यह देखते हुए अचानक याद आया, ऐसे समय अपने घर म तो कोई नही बैठा है । मैंन ही ऐसा कौन सा गुनाह किया है कि मुँह नही दिखा सकती—खुद को कैद करके रखा है ! गुनाह कुछ किया भी हो, तो उनसे किया है । उसकी सजा वही देग, किंतु नाहक ही जो कोई दण्ड देने आए, उसे ही सिर झुकाकर क्या उठा लू ?

अचला तुरत उठ बठी और सारी ग्लानि को मानो बलपूर्वक झाड फेंक-कर हाथ मुँह धोया, कपडे बदले और बठके मे गई ।

केदार बाबू आराम कुर्सी पर बैठे अखबार पढ रहे थे । उन्होंने एक बार नजर उठाकर देखा और फिर अखबार पढने लगे ।

थोडी ही देर के बाद बैरा केतली म चाय का पानी और और और सामान रख गया , केदार बाबू उठकर आए । अपने लिए एक प्याला चाय तयार करके ले गए और अखबार लेकर आराम-कुर्सी पर बैठ गए ।

अचला नजर झुकाए पिता का सारा आचरण देखती रही , परतु खुद जाकर चाय तयार कर दने या कुछ पूछने की उसे हिम्मत भी न हुई, इच्छा भी नहीं ।

लेकिन घर म मूर्त-सा इस तरह मुह सिए रखना भी मुश्किल । यहा तक कि इस तरह ज्यादा दिनो तक एक घर म उनके साथ रहना सभव और उचित है या नहीं और न हो तो वह क्या करेगी, इस पेचीदे मसले पर कहीं अकेले बठकर जरा सोचने के लिए वह उठना ही चाहती थी कि असह्य विस्मय म उसने देखा, सुरेश आ रहा है ।

उसने हाथ उठाकर केदार बाबू को नमस्ते किया। केदार बाबू ने सिर उठाकर जरा गर्दन हिलाई और फिर अखबार पढने लगे।

सुरेश कुर्सी खीचकर बैठ गया। चाय का सामान ले जाने के लिए जैसे ही बैरा कमरे मे आया, वह बोला—मेरा बैग कहाँ है उसे मेरी गाडी पर रख आओ तो। हजामत बनाने तक का सामान उसी मे है। देर मत करो, मुझे तुरन्त जाना है।

जी—कहकर उसके चले जाने के बाद सारे कमरे में फिर सन्नाटा छा गया। थोडी देर मे हठात् सुरेश पूछ बैठा—महिम की कोई खबर मिली?

केदार बाबू बोले—नही।

सुरेश बोला—ताज्जुब है!

उसके बाद फिर सब चुपचाप। बैरे ने आकर बताया—बैग गाडी पर रख दिया है।

तो मैं जा रहा हूँ। महिम की चिट्ठी आए तो मुझे जरा खबर भेज देंगे। सुरेश उठने लगा। एकाएक हाथ का अखबार नीचे फेंककर केदार बाबू बोल उठे—तुम जरा ठहर जाओ सुरेश मैं अभी आया। और उसकी ओर ताका तक नही चप्पल चट चटाते हुए जरा तेजी से ही चले गए।

अब तक अचला नजर झुकाए ही थी। केदार बाबू के चले जाने पर सुरेश ने जैसे ही नजर उठाकर देखा अचला की डरी दुखी और मलिन आँखें दिखाई दी। पूछा—बात क्या है?

मुह नीचे किए अचला ने सिर्फ गर्दन हिलाई।

सुरेश ने कहा—मैं कितना दुखी हुआ हूँ कितना लज्जित—यह कह नही सकता।

अचला वैसी ही चुप बैठी रही।

वह फिर बोला—तुम्हारे पिताजी मुझे इतना नीच, ऐसा मक्कार सोच सकते हैं यह मैंने स्वप्न में भी नही सोचा था।

इस शिकायत का भी अचला ने कोई जवाब नही दिया। वैसी ही स्थिर बैठी रही।

सुरेश ने कहा—मुझे तो ऐसा लग रहा है कि इसी वक्त महिम के पास जाकर उसे—बात पूरी न कर सका। केदार बाबू लौट आए।

उनके हाथ मे छोटा-सा कागज । सुरेश के सामने मेज पर उस कागज को रखते हुए बोले—तुम्हारे उस रुपए की रसीद आज कल करते नही दी जा सकी थी। पाँच हजार का हैंडनोट ही लिख दिया सूद शायद न दे सकू। लेकिन मकान तो रहा ही, इससे मूल भर तो वसूल हो ही जायगा।

सुरेश कुछ देर हक्का-बक्का-सा खडा रहा, बोला—मैंने तो आपसे हैंडनोट माँगा नही केदार बाबू!

केदार बाबू बोले—तुमने मागा बेशक नही, मगर मुझे तो देना चाहिए। अब तक नही दे पाया, यही बहुत बडा अन्याय हो गया है सुरेश, इसे जेब मे रख लो! थका आम हो रहा हूँ, अचानक कही चल बसू तो तुम्हारे रुपए का गोल-माल हो सकता है।

सुरेश ने आवेग के साथ जवाब दिया—महिम और चाहे जो करे केदार बाबू, रुपए का कभी गोल माल नही कर सकता। तिस पर आप खुद भी मानते हैं कि मुझे ये रुपए नही चाहिए—यह मैंने मित्र को दहेज दिया है।

केदार बाबू ने कहा—तो वह अपने मित्र को ही देना—मुझे नही। जो मैंने लिया है, वह ऋण मेरा ही है।

सुरेश बोला—खैर दोस्त का ही दूगा—कहकर सुरेश ने कागज मेज पर से उठाया और दो कदम पीछे हटकर अचला के पास जाकर खडा हुआ कि केदार बाबू आग की नाई भभककर चीख उठे—खबरदार सुरेश, कल से मैंने बहुत अपमान चुपचाप बर्दास्त किया। लेकिन मेरी आखो के सामने मेरी बेटी को तुम रुपए दे जाओ यह मै हर्गिज बर्दास्त न करूँगा। कहे देता हूँ! कहकर कापते-कापते आराम कुर्सी पर बठ गए।

सुरेश पहले तो चौककर केदार बाबू की तरफ एकटक ताकता रह गया। उनके उस तरह से बठ जाने पर उसने उदास होकर अचला की ओर मुडकर देखा, अचला पल भर म मानो पत्थर हो गई है। बडी कोशिश करके सुरेश ने क्या तो कहना चाहा, लेकिन उसके सूखे गले से एक बेमानी आवाज के सिवा और कुछ नही निकला। फिर मुडकर देखा, केदार बाबू दोनो हथेलियो से मुह छिपाए पडे थे। उसने और कुछ कहने की कोशिश भी न की, कुछ क्षण काठ का मारा सा खडा रहकर आखिर धीरे धीरे चला गया।

वह चला गया, लेकिन बाप-बेटी दोनो ठाव वसे ही बैठे रह। और दीवाल घडी की टिक-टिक के सिवा कमर म एक बेरहम चुप्पी छा रही थी।

सुरेश की रवर टायर वाली गाडी फाटक पार हो गई, यह घोडे की टापो से ही समझ मे आ गया। दूसरे ही क्षण वरे ने अन्दर आकर आवाज दी—बाबू!

केदार बाबू न नजर उठाकर देखा, उसके हाथ मे कागज का एक टुकडा था। और कुछ कहना न पडा। व उछल पडे और अपना दाया हाथ बढाकर चीत्कार कर उठे। ले जा हरामजादा ले जा सामने से! निकल जा कहता हू—बैरा मालिक का रवया देखकर अवाक रह गया और भाग खडा हुआ। उसके जाते ही जलती आखो बेटी को देखते हुए गले की आवाज पर एक पर्दा और चढाकर वे बोले—हरामजादा, कमीना, फिर कभी किसी बहाने मेरे यहा आया कि म उसे पुलिस के हवाले करूँगा—यह मैं तुमसे कह देता हूँ अचला!

अपना नाम सुनकर अपना निहायत पीला पडा चेहरा उठाकर अचला चुपचाप अपनी पीडित आखो से पिता की ओर देखती रही।

वे बोले—रुपए बखेर कर बाप की आँखो को अधा नही किया जा सकता। यह बात जिसम वह याद रक्खे।

बेटी इस पर भी चुप रही लेकिन उसकी मलिन आखें धीरे धीरे तेज हो उठने लगी। यह पिता की नजर मे न आया। उ होने तर्जनी तानकर कहना शुरू किया—हैडनोट फाडकर बाप को घूस नही दिया जा सकता, यह बात उसे समझा कर तब छोडूगा मै। मैं यह घर बेचकर कज अदा करके जी चाहे जहा चला जाऊँगा। मुझे कोई रोक नही सकता कान खोलकर सुन लो।

अब अचला न बात कही। शुरु म रुकावट पडी पर बाद म स्थिर अविचलित स्वर म कहा—कज बिना दिए घर मेरे लिए छोड जायेंगे मैं क्या यही आशा रखती हूँ? तुम न करते तो यह काम तो मुझे ही करना होता।

केदार बाबू और भी गम होकर बोले—तुम लोग जो कर आय हो मालूम है, उसी के मारे तो मैं भले समाज म मुँह दिखाने लायक नही रहा?

अचला न वैसे ही शान्त और दृढ स्वर म कहा—नहा नही मालूम है। मैने ऐसा कुछ अगर किया होता जिससे समाज म तुम मुँह नही दिखा पाते तो उससे पहले तो मेरा ही मुँह तुम लोग कोई नही देख पाते। वहाँ और किसी

चीज का अभाव चाहे हो, डूब मरने लायक पानी का अभाव नही। कहते कहते रुलाई से उसका गला रुँध आया। बोली—कल से तुम मेरा जो अपमान कर रहे हो, चूँकि झूठ है इसलिए सह पा रही हूँ, नही तो—

यहा पहुँचकर उसका गला बिल्कुल बन्द हो गया। मुँह पर आचल रख कर किसी तरह रुलाई रोकती कि वह कमरे से बाहर भाग गई।

केदार बाबू एक बारगी हक्का बक्का हो गए। रज होने, आघात करने, शोक करने यानी कन्या के दूषित आचरण से हर तरह का गहरा दुःख उठाने की स्थिति महज उन्ही की हुई है, यही उनकी धारणा थी, लेकिन दूसरा पक्ष भी अचानक उन्ही के आचरण को नितात निन्दनीय कहते हुए मुँह पर भिडक कर तीखे अभिमान से रोकर चल सकता है इसकी सम्भावना उन्हे ख्वाब मे भी न सूझी थी। सो कुछ क्षण हक्के-बक्के से खडे ही वे धीरे धीरे बैठ गए। और सर पर हाथ फेरते हुए बार-बार कहने लगे—यह लो, फिर दूसरा प्रसाद !

इसके बाद बाप बेटी के आठ-दस दिन कैसे निकले यह सिर्फ अन्तर्यामी ने ही देखा। अचला अपने कमरे से निकली ही नही, घर के नौकर-चाकरो के सामने भी मुह दिखाना उसे मुहाल था। पिछले दिनो की तरह रास्ता देख कर ही समय काटने के ख्याल से वह खुली खिडकी के सामने बैठी थी।

जाडे के दिन, दोपहर के साथ-साथ धुधली छाया मानो आसमान से धीरे धीरे धरती पर उतर रही थी। और उस धुँधलेपन से अपने सारे जीवन का क्या तो एक अनात सम्बन्ध हृदय की गहराई से अनुभव करके उसका मन उस अल्पायु बेला की ही तरह चुपचाप अवसन्न होता जा रहा था। यह नही कि उसकी आखे ठीक कुछ देख रही थी, पर जैसी आदत थी, ऊपर नीचे, अगल-बगल कुछ भी उसकी निगाह से बच नही पा रहा था। एक जगी बैठी-बैठी जब बेला बीत चली तो अचानक उसने देखा, सुरेश की गाडी उसके फाटक मे घुस रही है। बात की बात मे उसका चेहरा फक हो गया और पुलिस को देखकर चोर जैसे बेतहाशा भागता है, ठीक उसी तरह खिडकी के सामने से भागकर वह आकर बिस्तर पर सो रही।

कोई बीसेक मिनट के बाद उसके दरवाजे पर खट-खटाहट हुई और बाहर से पिता ने स्निग्ध स्वर मे पूछा—जाग रही हो बेटी ?

मगर फिर भी जब जवाब न मिला, तो और भी कोमल स्वर मे बोले—

वेला जाती रही बटी, उठो। सुरश की फूफी तुम्ह लेने आई हैं। क्या तो, महिम बहुत बीमार है।

अचला ने उठकर चुपचाप दरवाजा खोल दिया और सुरेश की फूफी अदर आइ।

झुककर अचला न उनके पैरा की धूल ली।

केदार बाबू सबसे पीछे कमरे के भीतर गए और बिस्तर के एक किनारे बैठ कर बेटी से बोले—तुम लोगो के चले आन के बाद से ही महिम को जारा का बुखार आ गया। मेरा ख्याल है ठड लगन से, फिक्र मे यह बुखार आया है। उसके बाद सुरेश की फूफी से बोले—मैं तो सोच के मार परशान था। आखिर इन लागा को भेज देने के बाद से कोई खबर क्या नही भेजी उसन? सुरेश दीघजीवी हो वह सोच समयकर इन्ह न ले आया होता तो क्या जो होता। भगवान् ही जान। स्नेह भर अनुपात से बूढे का गला भर आया।

अचला चुपचाप सब सुनती रही। उसने काई सवाल नही किया, कोई घबराहट नही जाहिर की।

सुरेश की फूफी ने अचला की बाह पर अपना दाया हाथ रखकर शात स्वर मे कहा—डरने की बात नही बिटिया दो ही दिन मे वह ठीक हो जायगा।

अचला न कुछ कहा नही—फिर से एक बार उनको झुककर प्रणाम करके अलगनी पर से चादर उतार कर वह जान के लिए तयार हा गई।

सर्दिया की साझ—इस ठन्ड मे बिना कोई गम कपडा पहन उसी रूप म बाहर जान को तैयार होते देख बूढे पिता के जी को चोट लगी। लेकिन सुरश की विधवा फूफी के पहनाव को देखकर उन्ह उस टोकने की इच्छा न हुई। व सिफ इतना ही बोले—चलो बिटिया, मैं भी चलता हूँ। और चप्पल पहने सबस आगे सीढिया से नीचे उतर गए।

## २३

अचला को महिम से सबस बडी शिकायत यही थी कि स्त्री होन के बावजूद उसे कभी पति के सुख दु ख मे हाथ बटान का मौका नही मिला।

इसके लिए सुरेश भी अपने दोस्त से छुटपन से ही काफी झगड़ता आया, पर कोई नतीजा नहीं निकला। कंजूस के धन की तरह उस चीज को सदा सारी दुनिया से बचाकर महिम कुछ इस तरह से अगोरता रहा है कि दुःख-दुर्दिन में किसी की मदद की बात तो दूर रहे, उसे अभाव क्या है कहां उसे पीड़ा है, यही कभी कोई समझ नहीं पाता।

लिहाजा घर जब जलकर राख हो गया तो बाप दादा के उस राख की ढेरी में बदले हुए मकान की ओर देखकर महिम के मन में क्या चोट लगी, इसे उसके मुँह को देखकर अचला समझ नहीं सकी। मृणाल विधवा हो गई, इसमें भी उसके स्वामी के दुःख का अन्दाज करना वैसा ही असम्भव था। जिस दिन अचला ने मुँह पर यह दिया था कि वह उसे प्यार नहीं करती, महिम के लिए वह आघात कितना बड़ा था, उसके बारे में भी अचला अँधेरे में ही रही। मगर इतनी नासमझ भी वह नहीं थी कि हर बदनसीब घड़ी में पति की निर्विकार उदासीनता को सत्य ही कबूल कर लेने में उसके जी में कोई खटका होता ही न हो। इसलिए, उस दिन स्टेशन पर पति के दृढ़ शान्त मुखड़े को बार बार देखकर तमाम रास्ता सिर्फ यही सोचती आई थी कि सहिष्णुता के उस झूठे नकाब की ओट में उसके वास्तविक मुख का स्वरूप जाने कैसा है!

आज जब उसकी बीमारी को मामूली और स्वाभाविक घटना का रूप देने के लिए केदार बाबू ने कहा कि उन्हें ताज्जुब नहीं हुआ, बल्कि इतनी बड़ी दुर्घटना के बाद ऐसी ही कुछ की आशंका मुझे थी—तो अचला के जी में जो भाव पल के लिए उदय हुआ था, उसे उत्कंठा भी नहीं कहा जा सकता।

सुरेश के रबर टायर वाली गाड़ी तेजी से दौड़ रही थी। फूफी एक ओर का दरवाजा खींचकर चुप बैठी थी और उनके बगल में अचला पत्थर की मूर्ति जैसी स्थिर थी। अकेले केदार बाबू किसी तरफ से कोई उत्साह न पाकर रास्ते की ओर देखते हुए बकते चले जा रहे थे। सुरेश जैसा दयावान, बुद्धिमान, गुणवान तरुण देश में दूसरा कोई नहीं, महिम के एक बगापन से मैं तो ऊब गया हूँ, जहां आदमी ढूंढे न मिले, डाक्टर-वैद्य का नाम नहीं, सिर्फ चोर डकैत और गीदड़ रहते हैं ऐसे गांव में जा बसने की सजा एक-न-एक दिन उसे भोगनी ही पड़ेगी,—ऐसी ही वे सिर पैर की बातें बिना सोचे-समझे वे उस चुप बैठी नारी के कानों डालते चले जा रहे थे।

वे चले गए तो यह गाडी, गाडी-बरामदे म जाकर लगी। सुरेश खडा था। केदार बाबू न चिल्लाकर पूछा—महिम कसा है सुरेश ? बीमारी क्या है ?

सुरेश ने कहा—ठीक है। आइए।

केदार बाबू और परेशान होकर बाले—बीमारी क्या है, सा तो कहा।

सुरेश बोला—बीमारी का नाम बताऊँ, तो आप समझ नही सकेंगे कदार बाबू ! बुखार है। छाती म थोडी सर्दी जमी है। लेकिन आप उतरें तो सही, उन्ह उतर आन दें।

कदार बाबू न उतरन की जरा काशिश न की। बोल—थोडी-सी सर्दी जम गई है, तो इसका इलाज ता तुम खुद कर सक्त हो ! आखिर मैं कोई नन्हा-मुना नही हूँ सुरश, दा दो डाक्टर क्यो ? और फिर अँग्रेज डाक्टर ? कहते कहत उनकी आवाज काँपन लगी।

सुरश करीब आ गया। हाथ पकडकर उन्ह उतारत हुए बाला—फूफी अचला को अन्दर ले जाओ। मैं आता हूँ।

अचला ने किसी स कुछ पूछा-ताछा नही, अन्धेरे म उसकी शक्ल भी नही दिखाई पडी। उतरत समय पादान पर उसका पाव लडखडाने लगा, यह भी किसी न नही देखा—यह भी किसी का नजर न आया कि वह जसी चुप चाप आइ थी, वसी ही चुपचाप फूफी के पीछे पीछे भीतर चली गई।

दो एक मिनट बाद जब परदे को हटाकर वह कमर म दाखिल हुई, तो महिम शायद अपन घर के बारे मे क्या सब कह रहा था। उस लडखडाती आवाज के दो-एक शब्द काना मे पहुँचते ही यह समझना बाकी न रहा कि वह अल्ल-बल्ल बक रहा है और रोग कितना ज्यादा बढ गया है, जरा देर दीवाल का सहारा लेकर उसने अपने को सम्हाला।

सिरहाने बैठकर जा स्त्री माथे पर बर्फ पट्टी दे रही थी, उसने उलटकर दखा और धीर से उठकर आई, झुककर उस प्रणाम करके सीधी खडी हा गई। विधवा का वेश। बाल गदन तक छोटे छोटे छँटे चेहर पर युग युग की सभी विधवाओ का वैराग्य मानो गहरा होकर विराज रहा था। मद्धिम राशनी म अचला पहले यह न पहचान सकी कि वह मृणाल है, अब जब दाना आमन-सामने खडी थी, तो दोना ही जरा देर के लिए ठक् सी रह गइ। अचला का सारा शरीर जैसे हिल उठा, क्या तो कहन के लिए उसके होठ भी काप उठे,

पर एक भी शब्द न फूटा और दूसरे ही क्षण उसका बेहोश शरीर टूटी लता की नाइ मृणाल के कदमो पर लुढक पडा।

होश म आई तो पाया पिता की गोद म सिर रक्खे अचला एक काच पर पडी है। एक नौकरानी आख मुह म गुलाब जल के छीटे दे रही है। पास खडा सुरेश धीमे धीमे पखा झल रहा है।

हा क्या गया, यह सोचने म उसे देर लगी। लेकिन याद आते ही लाज से घबराकर उसने उठने की कोशिश की। बाधा देते हुए केदार बाबू बोले—जरा आराम कर लो बिटिया, अभी उठो मत।

अचला ने धीमे से कहा—मैं अब ठीक हूँ बाबूजी, और उसने फिर उठने की कोशिश की। पिता ने जबदस्ती उसे रोक्कर कहा—उठने की अभी जरूरत नही, बल्कि थोडा सो जाने की चेष्टा करो।

अस्फुट स्वर म सुरेश ने भी शायद इसी बात का समथन किया। अचला ने चुपचाप एक बार उसकी ओर ताका और उत्तर मे पिता का हाथ ठेलकर सीधी खडी होकर बोली—सोने के लिए यहा नही आई हूँ। मुझे कुछ नही हुआ है—मैं उस कमरे म जा रही हूँ। और वह बाहर चली गई।

इस मकान के कमरो को वह भूली नही थी। बीमार का कमरा ढूढने मे देर न लगी। अन्दर जाते ही मृणाल ने उसे देखा। बोली—सझली दी जरा देर तुम यहा बैठो मैं आह्निक कर लू। जरा ख्याल रखना, बफ की टोपी लुढक न जाय। मृणाल अपनी जगह पर अचला को बिठाकर चली गई।

## २४

सख्त न्यूमोनिया, चँगा होने म कुछ देर लगेगी। लेकिन महिम धीरे धीरे चँगा होने की तरफ ही जा रहा था, डर की कोई बात न थी—यह सभी देख रहे थे। उसका वह प्रलाप, आखो की खोई-खोई निगाह शान्त और स्वाभाविक होती आ रही थी।

दसेक दिन बाद एक दिन तीसरे पहर महिम शान्त-सा लेटा हुआ था। इस साल तमाम सर्दी ज्यादा पड़ी थी। तिस पर अभी-अभी बाहर एक बौछार बारिश हो गई। रामी की खाट से सटाकर ही एक बड़ी सी चौकी डालकर उस पर बिस्तर बिछाया गया था, सब लोग उसी पर अच्छी तरह से कपड़े ओढ़कर बैठे थे। सबकी आंखों में चिन्ता रहित तृप्ति की झलक। केवल फूफी घर के धंधों में कहीं जुटी थी और केदार बाबू घर से अभी तक यहां पहुँच नहीं पाये थे।

सुरेश की ओर ताककर हाथ जोड़ते हुए मृणाल ने कहा—अब मुझे छुटकारे का हुक्म मिले सुरेश बाबू, मैं अपने घर जाऊं। इस कड़ाके की सर्दी में बुढ़िया सास मेरी चल न बसी हो!

सुरेश बोला—अब भी क्या उनके जीने की जरूरत रह गई है? उँह, उनके लिए आपका जाना नहीं हो सकता।

मृणाल ने जरा देर के लिए गर्दन घुमाकर शायद एक लम्बे निश्वास को ही रोका। फिर सुरेश की तरफ देखकर मुस्काती हुई बोली—आप ही क्यों, मैंने भी यह सवाल पहले बहुत बार पूछा है? लगता भी है कि अब उनके जाने से ही कल्याण है। लेकिन जो मरने जीने के मालिक हैं, उनको तो ऐसा ख्याल नहीं। होता तो संसार में आदमी बहुतेरे दुःख-कष्टों से बच जाता।

अचला अब तक चुप रही थी। मृणाल की बातों पर शायद उसके पति की ही मौत की बात याद करके बोली—इसके मानी जो अंतर्यामी हैं, वे जानते हैं कि हजारों तकलीफ के बावजूद आदमी मरना नहीं चाहता।

मृणाल के चेहरे पर एक छिपी वेदना की झलक झांक गई। सिर हिलाकर बोली—नहीं सझली दी, ऐसी बात नहीं। ऐसा समय सचमुच में आता है, जब मनुष्य सचमुच ही मौत चाहता है। उस दिन किसी रात को अचानक नींद जो छूटी तो अपनी सास को बिस्तर पर नहीं पाया। जल्दी से बाहर निकली। देखा पूजा घर का दरवाजा जरा सा खुला है। चुपचाप करीब करीब में जाकर खड़ी हुई। मैंने देखा, गले में आंचल डाले हाथ जोड़कर वे देवता से मौत की भीख मांग रही हैं। कह रही हैं, हे देवता, अगर एक दिन को भी तन-मन से मैंने तुम्हारी सेवा की हो, तो आज मेरी लाज रख लो। मैं मुक्ति नहीं मांगती, स्वर्ग नहीं चाहती, सिर्फ इतना ही चाहती हूँ कि मुझे और शर्मिंदा न करो

ठाकुर—मैं अपना यह मुह अब बहू को दिखा नही सकती हूँ। कहते-कहते मृणाल रो पडी।

इस प्रार्थना म माँ के हृदय की कितनी गहरी वदना थी, यह समझने म किसी को कठिनाई न हुई। सुरेश की दोनो आखें भर आइ। किसी के भी मामूली दु ख पर वह डोल उठता था—आज उस पुत्रहीना जननी के मार्मिक दु ख की कथा सुनकर उसके हृदय म आधी-सी बहन लगी। वह जरा देर स्तब्ध होकर जमीन की ओर ताकता रहा और अचानक सिर उठाकर आवेगमय स्वर मे बोला उठा—अच्छा जाओ दीदी, अपनी बूढी सास की सेवा करके अपना फज अदा करो, मैं तुम्हे नही रोकूगा। इस अभागे देश के पास आज भी अगर गव करने को कुछ है, तो वह है तुम जसी नारिया! ऐसी चीज और कोई भी देश नही दिखा सकता! कहकर उसन जिज्ञासु दृष्टि से एक बार अचला की ओर देखा। लेकिन वह खिडकी से बाहर धुमैले मेघ के एक टुकडे पर नजर टिकाए बैठी थी, इसलिए उसकी तरफ स कोई उत्तर न आया।

लेकिन शर्माकर मृणाल ने आलोचना को अपन पर स हटाकर दूसरी ओर मोडने के ख्याल से झटपट कहा—नही, नही क्यो है? आप सभी देश की बात जानते हैं न! अच्छा सझले दादा स आप बडे है या छाटे?

इस अजीब सवाल पर सुरेश हँसकर बोला—क्यो भला? कहिए तो?

मृणाल न बाधा दी मुझे अब आप सम्बोधन न करें। मैं दीदी हूँ पर उम्र मे जब छोटी हूँ तो सझले दादा, छाटे दादा—? कहिए जल्दी कहिए, क्या?

अब की अचला ने आसमान की ओर से नजर हटाकर उसकी तरफ देखा। बहुत दिन पहले एक दिन उसने इसी जल्दी और सहजता से उससे सझली दीदी का नाता जोड लिया था वह बात याद आ गई। लेकिन चूकि सुरेश को मृणाल के चरित्र की यह खासियत मालूम न थी, इसलिए वह उस अजीब औरत की ओर ताकते हुए कौतूहल भरी हँसी के साथ कहा—छोटे दादा! तुम्हारे सझले दादा से मैं कोई डेढ साल का छोटा हूँ।

मृणाल बोली—तो कृपा करके छोटे दादा जो एक आदमी ठीक कर दीजिए कि सुबह की गाडी से मुझे पहुँचा आए।

सुरेश ने यह नहीं सोचा था कि जाने की अनुमति मिल जाने से वह व
हीं जाने को तैयार हो जायगी।

इसलिए वह जरा देर चुप रहा और गम्भीर होकर बोला—और दो f
भी क्या नहीं रुक सकोगी दीदी ? तुम्हारे जिम्मे छोड़कर महिम की ओर
हम लोग निश्चित थे। मुझे ऐसा ख्याल नहीं आता कि इस सावधानी अ
सहज कर सेवा करते मैंने अस्पताल में भी किसी को देखा है। क्यों अचला

जवाब में अचला ने सिर्फ सिर हिलाया।

सुरेश को चिन्तित सा देखकर मृणाल बोली—आप इसके लिए तनि
भी न सोचें। जिसकी चीज है, उसी के हाथों सौंप कर जा रही हूँ, नहीं
शायद मैं जा भी नहीं सकती। आपको तो याद है, हमें किस जल्दी में च
आना पड़ा था। कोई इन्तजाम ही करके न आ पाई। कल आप मुझे छुट्टी
फिर जब हुक्म होगा, चली आऊँगी।

सुरेश फिर कुछ देर चुप रहा। सहसा बोल उठा—अच्छा मृणाल
घोर देहात में एक बूढ़ी सास की सेवा और पूजा-आह्निक करके तुम्हारा स
कैसे कटेगा मैं केवल यही सोच रहा हूँ।

मृणाल के चेहरे पर फिर पीड़ा झलकी। मगर वह हँसकर बोली—स
काटने का भार मुझी पर तो नहीं है छोटे दादा, जिन्होंने समय को बनाया
वही उपाय करेंगे।

सुरेश ने कहा—अच्छा, यह तो हुआ। लेकिन तुम्हारी सास तो ज्या
दिन जिन्दा न रहेगी और डाक्टर की सलाह के मुताबिक महिम को भी
दिनों के लिए पश्चिम के किसी स्वास्थ्यकर स्थान में रहना होगा। फिर
वहाँ अकेली कैसे रहोगी ?

मृणाल ऊपर की ओर देखकर सिर्फ जरा हँसी। बोली—यह वही जानें

सुनते ही सुरेश के एक दीर्घश्वास छूट गया। मृणाल ने कहा—छो
दादा शायद यह सब नहीं मानते ?

क्या सब ?

वही, जैसे भगवान्—

नहीं।

फिर हम लोगों के लिए शायद आपके मुँह से उपेक्षा का श्वास छूटा ?

सुरेश ने अचानक इसका कोई उत्तर नहीं दिया। कुछ देर अनमना सा उसकी ओर देखते रहकर हठात् गरदन हिलाकर बोला—नहीं मृणाल, यह बात नहीं। किसी अजान भविष्य का भार अजाने एक ईश्वर पर छोड कर बैस नाग वल्कि हम लोगों से जीत के ही रास्ते पर चलते हैं, यह मैंने खूब देखा है। मगर इस तर्क को छोडो भी दीदी शायद हो कि मुझसे तुम्हें नफरत हो जाय।

मृणाल ने झट झुककर सुरेश के पैरों की धूल ली। कहा—अच्छा, न्ह!

सुरेश ने अवाक होकर पूछा—यह फिर क्या हुआ मृणाल?

क्या?

कोई बात नहीं और या पैरों की धूल ले ली?

मृणाल बोली—बडे भाई के पैरों की धूल लेने के लिए दिन तिथि देखनी पडती है क्या? और वह हँस पडी।

अजीब लडकी है! कहकर स्नेह से हँसते हुए उसकी ओर देखकर सुरेश अचरज से अवाक रह गया! उसे ऐसा लगा, उसकी सारी शक्ल सावन की काली घटा वाले आसमान-सी घिर गई है। लेकिन अचरज के इस धक्के को सम्भाल कर इस सम्बन्ध में कुछ भी पूछने-ताछने की चेष्टा करने के पहले ही अचला हक्का-बक्का हुए सुरेश को आकाश-पाताल की सोचने का काफी मौका दे सजी से मृणाल के प्रायः साथ ही साथ कमरे से बाहर हो गई।

वहीं हत-सा बैठा सुरेश बार-बार अपने ही आपको पूछने लगा, यह फिर क्या से क्या हो गया! मृणाल के यों प्रणाम करने के साथ इसका कस तो कोई गहरा सम्बन्ध है, इसका वह आप ही अनुमान करने लगा—लेकिन वह सम्बन्ध है कहाँ? अचानक उसकी पद धूलि लेकर मृणाल चलती क्यों गई और साथ ही साथ यों उडा हुआ चेहरा लिए अचला ही क्यों बाहर हो गई? शुरू से आखिर तक अपनी एक एक बात को दुहराकर वह देख गया, पर खाक समझ में नहीं आया क्योंकि उसने खूब समझा कि आस पास ही दो-दो इतनी बडी घटनाएँ कुछ यों ही नहीं घटीं। हो न हो उसी का कोई बुरा आचरण इसकी जड है, यह सदेह उसके मन में काँटे-सा चुभने लगा।

मगर मृणाल से भी इसके बारे में कुछ पूछना असभव था। रात तो उसने कतरा कतराकर काटी, लेकिन सवेरे एक समय अचला को अकेली पाकर कहा—तुम्हें मेरी एक बात का जवाब देना होगा।

अचला का मुह शम से लाल हो उठा—बात क्या थी, यह उसकी अजानी न थी। पिछली रात की हरकत की कफियत देनी होगी, यह ताडकर उसने मृदु स्वर मे पूछा—कौन सी बात का ?

सुरेश ने धीमे-धीमे कहा—कल मृणाल एकाएक मेरे पैरो की धून लेकर चली गई और तुम भी रज होकर मुह लटकाए चली गई, क्या इसलिए कि मैंन उसकी सास के मरने की बात कही थी ?

इस अप्रत्याशित प्रश्न से एक राह मिल गई, इससे अचला मन ही मन खुश हुई। बोली—यह प्रसग छेडना क्या उचित था ? बेचारी के पति नही, सास के मरने से उसके अकेलेपन की तो सोच देखो जरा !

सुरश बहुत ही खीझकर बोला—मुझसे बडी गलती हो गई। लेकिन यह तो मणाल भी समझती है कि वे अब चन्द दिनो की मेहमान हैं। फिर वह असहाय ही क्यो होने लगी ?

अचला ने कहा—हम लोगो न तो यह बात उससे एक बार भी नही कही। तुमने ही बल्कि उसे तरह तरह से डराया कि गाव म वह अकेली रहेगी कसे !

सुरश न पछताकर पूछा—तो उसके जाने के पहले क्या हमे भरोसा नही देना चाहिए ? यह कि उसे कोई डर नही। यह बात—

कहते कहते करुण से उसका गला भर आया।

अचला उसकी शक्ल देखकर हँसी। पराए दु ख से दु खी इस युवक की दया की हजारा कहानिया उसे पल भर म याद आ गइ। बोली—नही, नही भरोसा नही देना होगा और डर दिखान की भी जरूरत नही।

सुरश आवेग मे आत्मविस्मृत हो अकस्मात उसके हाथ को थमकर पकड-कर जोरो से झकझोर दिया। कहा—वह तुम्हार लायक बात हुई ! तुमसे यही तो मैं चाहता हूँ अचला ! कहते ही लेकिन अशेष लज्जा से उसका हाथ छोडकर वह भाग गया।

उसका जो आवेग क्षणभर पहले दूसरे की भलाई के स्वच्छ आनन्द मे विजयी हुआ था, इस शमनाक भाग खडे होने से पल मे ही वह घिनौना और कलुषित-सा हो उठा। अचला की नसा का खून बिजली की रफ्तार म दौडा, और पसीने की बूँदो से कपाल भर गया, बदन बार-बार सिहर उठा। वह एक

कुर्सी खीचकर निर्जीव की तरह बैठ गई। थोडी देर म वह भाव तो जाता रहा, पर बीमार पति की खाट पर बैठने मे सुबह का सारा समय कसे तो एक भय मे बीतने लगा।

जाते जाते भी मृणाल को दो एक दिन की देर हो गई। महिम स विदा मागने गई तो देखा, आज वह करवट बदलकर असमय मे सो गया है। जो विदा मागन गई थी, इस झूठी नीद का निश्चित कारण समझते हुए भी बोली—उन्हें अब जगान की जरूरत नही सझली दीदी। है न ?

जवाब म अचला के होठ पर एक बाकी मुस्कान खेल गई। मृणाल मन मे समझ गई उसके इस बहाने को एक और भी स्त्री समझ गई है। मन ही मन अचला उससे ईर्ष्या करती है महिम से इसका कोई आभास न पान के बावजूद मृणाल जानती थी। यह निरा निरथक ढंग उसे काटा सा गडा करता। फिर भी अचला अपनी हीनता से उस बीमार आदमी की पाव कमजोरी का उलटा मतलब लगाएगी यह वह नही सोच पाई थी एक क्षण के लिए उसका जी जल उठा। लेकिन अपने को जब्त करके उसन उसके कान मे कहा—तुम तो सब कुछ जानती हो सझली दीदी मेरी ओर से उनसे क्षमा माग लेना। कहना, चगे होकर जब गाव लौटेंगे तो जिंदा रही मैं तो भेंट होगी।

नीचे केदार बाबू बैठे थे। मृणाल ने जसे ही उन्हें प्रणाम किया कि उनकी आखें गीली हो गइ। इसी छोटे-स अरसे मे औरो की तरह वे भी इस विधवा को बहुत स्नेह करने लगे थे। कुरत के आस्तीन स आख पोछते हुए बोले— बेटी तुम्हारे मगल से ही हमने महिम को यम के जबडे से वापस पाया है। जभी फुरसत मिले, घूमने की इच्छा स तो इस बूढे चाचा को भूलना मत बिटिया। मेरा घर तुम्हारे लिए रात-दिन खुला रहेगा।

कुछ दूर पर अचला खडी थी मृणाल ने उसे दिखाते हुए मुस्कराकर कहा—इनके होते यम के बाप की क्या मजाल कि सझले दादा को ले जाय। मैंने जिस दिन उन्हें मझली दीदी के जिम्मे कर दिया, मेरा काम उसी दिन चुक गया।

केदार बाबू कुछ गम्भीर-से हो गए, मगर बोले कुछ नही।

दो प्रौढ से कारिंदे और एक नौकरानी, मृणाल को उसके घर छोड आने को तयार थे। उन सबको लेकर घोडा-गाडी फाटक स बाहर निकल गई तो

केदार बाबू के अंतस्तम से एक दीर्घ श्वास निकला। उन्होंने आहिस्ते से इतना ही कहा—अजीब, अनोखी लड़की!

सुरेश का मन भी शायद इसी भाव से भरा था। उसने और किसी तरफ गौर न करके हामी भरते हुए आवेग के साथ कहा—मैंने तो ऐसा कभी नहीं देखा। न तो ऐसी मीठी बात सुनी है कभी, न ऐसा कुशल काम काज ही देखा है। जो भी काम दीजिए, इस कुशलता से करेगी कि जी में होगा, जीवन भर शायद वह यही करती आई है। मगर गजब तो यह कि गाँव से बाहर कभी कदम भी नहीं रखा।

केदार बाबू ने सच मानते हुए भी अचरज के साथ पूछा—अच्छा!

सुरेश बोला—जी। उसे देख देखकर मेरे जी में आता था, पूर्व जन्म के संस्कार की जो बात कही जाती है सच न हो कहीं। कहकर वह हँसने लगा।

पूर्व जन्म के प्रसंग से केदार बाबू कुछ चिंतित से होकर सहसा बोल उठे—सो जो भी हो, इसे देखकर मेरी निश्चित धारणा हुई है कि स्त्रियों में यह अनमोल रत्न है। इसे आजीवन यों जीवन्मृत बनाये रखना पाप ही नहीं, महापाप है। मेरी लड़की रही होती वह तो मैं हर्गिज ऐसा निश्चित नहीं रह सकता था।

सुरेश ने ताज्जुब में आकर पूछा—क्या करते आप?

बूढ़े ने ओज भरे शब्दों में कहा—मैं फिर से उसकी शादी करता। एक बुड्ढे को सौंपकर जिन लोगों ने इस उन्नीस-बीस साल की उम्र में उसे जोगन बनाया है, वे उसके हितू नहीं, कट्टर दुश्मन हैं। दुश्मन के काम को मैं किसी भी हालत में वाजिब नहीं मानता।

वे जरा चुप रहकर फिर बोले—जरा उसके स्वामी के ही सलूक को तो देखो। दो दो बीवी के गुजरने के बाद जब पचास साल की उम्र में उस खूसट ने इस लड़की से गठबंधन किया, तो अपने मौज-मजे के सिवाय उसने इसके भविष्य के बारे में सोचा भी?

सुरेश को निरुत्तर देख वे और भी जोश में आ गए। बोले मैं विधवा-विवाह के बुरे भले का तर्क नहीं करना चाहता। लेकिन इस पर तुम्हारा सारा हिंदू समाज चीख-चीखकर मर ही जाय तो मैं यह नहीं मानने का कि उस दूध पीनी बच्ची के लिए यही विधान श्रेयस्कर है। उसे ऐसा कुछ भी नहीं, जिसे

देखकर वह एक भी दिन गुजार सके। सारी जिंदगी कोई खिलवाड है कि ब्रह्मचय ब्रह्मचय का शोर मचाने से सारी दुनिया रातो-रात तपोवन हो जायगी। उस लडकी के कपडे लत्ते देखकर ही मेरा कलेजा टूक टूक हो जाता था।

*सुरेश न जवाब नही दिया, नजर उठाकर देखा तक नही।* लेकिन कन खियो से देखा कि अचला अब तक चौखट का सहारा लिए बुत जसी खडी थी—वहा अब वह नही है। जाने कब अन्दर चली गई है।

मृणाल के चले जान के बाद अचला जब-जब सुरेश के चेहर की तरफ ताकती, उसे लगता वह अनमना हो गया है। और जान कौन सा शान उस क्रमश नीरस किए दे रहा है।

दो दिन के बाद की बात। तीसर पहर निचले बरामदे क एक ओर धूप मे आराम कुर्सी पर बैठा सुरश जाने कौन सी तो किताब पढ रहा था। आहट पाकर उसन उलटकर दखा। देखा, अचला खुद उसके लिए चाय लेकर आ रही है। पहले कभी ऐसा नही हुआ, सो हैरत म आकर सुरेश न सीधा बैठत हुए पूछा—बैरा कहा है? खुद ही लिए आ रही हो!

अचला ने इसका जवाब न दिया। एक छोटी सी तिपाई पर चाय का प्याला रखते हुए दूसरी कुर्सी खीचकर आप भी बठ गई।

उसके इस बिल्कुल नए आचरण से दूसरा सवाल करन का साहस सुरश को न हुआ। उसने चुपचाप चाय का प्याला हाथ म उठा लिया।

कुछ देर चुप बैठी रहकर अचला ने धीम से कहा—अच्छा सुरेश बाबू, विधवा विवाह को आप किसी भी हालत म अच्छा नही समझते?

चाय के प्याले मे होठ लगाए रखकर ही सुरश ने कहा—समझता हूँ। इसलिए मेरा कुसस्कार अभी उस हद तक पहुँचा नही है।

अपने को सोचने का और ज्यादा मौका न देकर अचला बाली—फिर तो मृणाल जसी लडकी से विवाह करन म आपको रत्ती भर भी एतराज न हाना चाहिए।

चाय के प्याले को हाथ म लिए सत्न होकर बठत हुए सुरश न कहा—इसका मतलब?

अचला की शक्ल या आखा म उत्तेजना क आसार न दिखाई दिए। वह सहज ढङ्ग से बोली—*आपके आग मैं असख्य ऋणी से ऋणी हूँ। इसक सिवा*

मैं आपका भला चाहने वाली हूँ। आपको मैं सुखी सहज सांसारिक और स्वाभाविक देखना चाहती हूँ। एक दिन आप विवाह करने को तैयार थे, आज मेरा एकांत अनुरोध है, स्वीकार कीजिए।

जैसे कण्ठस्थ हो, एक ही सांस में इतनी-इतनी बात बोलकर अचला हाँफने लगी।

बड़ी देर तक सुरेश बुत-सा स्थिर बैठा रहा और आखिर बोला—इससे क्या तुम सच ही खुशी होगी?

अचला ने कहा—हाँ।

वह राजी होगी?

मैं समझती हूँ, होगी।

सुरेश जरा फीका हँसकर बोला—लेकिन मैं ऐसा नहीं समझता। तुमने किताब में पढ़ा है, कोई-कोई सती सहमरण में हँसते-हँसते जल मरती थी। मृणाल उसी कोटि की औरत है। मुँह की बात पर उसे राजी करना तो बहुत दूर की बात है एक-एक करके उसके हाथ पाँव काटते जाओ, तो भी दुबारा ब्याह करने के लिए उसे राजी नहीं कराया जा सकता। इस असंभव को संभव करने की चेष्टा में नाहक ही उसके सामने मेरी मिट्टी पलीत मत करो अचला। उसने मुझे दादा कहा है, इस सम्मान को मैं सुरक्षित रखना चाहता हूँ।

देखते ही देखते अचला का चेहरा मारे गुस्से के काला पड़ गया। सुरेश का कहना खत्म हुआ कि सख्त-सी होकर बोल उठी—संसार में अकेली मृणाल ही सती नहीं है सुरेश बाबू। ऐसी भी सतियाँ हैं जिन्होंने मन में भी किसी को पतिरूप में चुन लिया हो, तो लाखों प्रलोभनों से भी उन्हें डिगाया नहीं जा सकता। इनका जिक्र छापे की किताबों में न भी मिले, तो भी इसे सच जानें! इतना कहकर हैरान से रहे, हक्के-बक्के से सुरेश की तरफ नजर तक न उठाकर वह गर्वित नारी दृढ़ कदम बढ़ाती हुई बाहर चली गई।

## २५

किसी की उच्छ्वसित निश्छल प्रशंसा में किसी और के लिए कितना

कठोर आघात और अपमान छिपा रह सकता है, वक्ता और श्रोता, दोनो म से शायद कोई थोडी देर पहले तक भी इस नहीं जानते थे। हाथ का प्याला हाथ ही म लिए सुरेश बेबस सा बठा रहा और अचला अपने कमरे म जाकर तकिए म मुँह गाडकर रुलाई के बेरोक वेग को रोकने लगी—बगल मे ही महिम का कमरा था—कही उसके कानो आवाज न पहुँचे ! अन्तर्यामी के सिवाय वास्तव मे इस रुलाई का इतिहास और कोई नही जान सका।

लेकिन इस गहरे दु ख स उस एक नया तथ्य मिला। नारी जीवन मे यह सतीत्व कितनी मूल्यवान वस्तु है इतन दिनो के बाद आज ही मानो पहले पहल उसकी आखो के सामन प्रकट हुआ। उस रोज सुरेश ने उसके सस्पश पर पिता की सदेहालु दृष्टि से वह बेहद दु खी और नाराज हुई थी, समझा था कि यह उस पर जुल्म है, पर आज जब अचानक उसी धमहीन, पराइ स्त्री पर निगाह रखन वाले सुरेश को ही सतीत्व के चरणो पर सिर नवाकर इस तरह प्रणाम करते देखा, तो उस यह समझना बाकी न रहा कि उसका असली स्थान क्या है ?

एक बात और। उसन आज यह भी अनुभव किया कि स्पष्ट कहन की ताकत क्या होती है ? वह शिक्षिता थी। मन मन से स्वामी के लिए निष्ठा ही सतीत्व है, यह बात उसकी अजानी न थी। यह वह अच्छी तरह जानती थी कि अकेला मन या अकेला तन, कोई भी पूण नही। फिर भी मन जब उसका डाँवाडोल हुआ है, जबान स यह कहन म जब उसे हिचक नही हुइ कि पति को वह प्यार नहीं करती—तब भी लेकिन उसे अपने आप को छोटा नही लगा। पर आज जब सुरेश की जबान स निकली हुई बात न अजानते ही उसके नाम स असली शब्द को जोड देना चाहा तो उसकी अन्तरात्मा एक हृदय भेदी वदना के आत स्वर म चीखकर रो पडी।

मगर इसका यह मतलब नही कि मणाल पर उसकी श्रद्धा बढ गई हो, उसके सम्बन्ध मे आज उसे जो चेतना मिली उसे वह जिन्दगी म कभी नही भूलेगी मन ही मन वह बार-बार यही प्रतिज्ञा करने लगी।

बाहर पिता की छडी की ठक् ठक और पीछे से सुरेश के परो की आहट उसन सुनी। समझ गई कि व लोग महिम के पास जा रहे हैं। जरा ही देर म

पिता की पुकार पर उसने आचल से भली तरह आखें पोछकर किवाड खोला और उस कमरे मे पहुँची।

उसकी सूरत देखकर केदार बाबू ने पूछा—क्यो, बात क्या है ? दो ही बजे शोरबा देना था, चार बज रहे हैं। अरे, यह शक्ल ऐसी क्यो ? सो रही थी ?

अचला जवाब न देकर जल्दी से चली गई। जब से मरीज को शोरबा देने को कहा गया था, यह काम मृणाल ही करती थी। नौकर चूल्हे पर चढा देता था, वह समय पर अन्दाज से उतार लिया करती थी। उसके जाने के बाद यह भार अचला पर आ पडा था। आज उसे इसकी याद ही नही रही। दौडी-दौडी गई। देखा, आग कब की ठण्डी हो गई है और शोरबा जलकर सूख गया है।

बडी देर तक मग्न सी खडी होकर जब वह लौटी, तो यह सुनकर केदार बाबू ने अचला से कुछ नही कहा। सुरेश से बोले—मैंने तो तुम से तभी कहा था सुरेश कि अभी एक अच्छी नर्स न रखोगे तो महिम को बचा नही पाओगे। मेरी लडकी को मुझसे क्या तुम लोग ज्यादा जानते हो ?

सुरेश चुप बैठा रहा। लेकिन यह किसी ने नही देखा कि महिम अब तक स्त्री के शर्म म फीके पडे चेहरे की ओर देख रहा था। वह धीरे-धीरे बोला—सुरेश नर्स के हाथो से मुझे दवा तक न रुचेगी। लेकिन मदद के लिए इन्हें कोई आदमी दो। कल-परसो, दो-दो रात इन्ह रात-रात भर जगना पडा है। दिन के वक्त थोडा सा आराम न करने दो तो कल-पुर्जे के आदमी से भी काम नही ले सकते।

बात अक्षरश सत्य न हो, झूठ न थी। सुरेश खुश हो गया लेकिन केदार बाबू अपनी रूखी बात पर लज्जित हो कुछ कहने ही जा रहे थे कि अचला कमरे से बाहर चली गई।

रात मे बहुत बार उसके जी मे आया कि बीमार पति से रो रोकर अपने अनेक अपराधो के लिए क्षमा माँगकर पूछे कि उसकी जैसी पापिनी को फजीहत स बचाने की उन्ह क्या पडी थी ? लेकिन चरम लज्जा से यह सवाल किसी भी प्रकार से उसके मुह से न निकला।

सुरेश का एक नियमित काम था, वह रोज रात को महिम के कमरे मे

चुपचाप त्याग किया है या नहीं। हर बार इस आशंका को वह असंगत अमूलक कहकर टालने लगी, अपने आप पर व्यंग करके कहने लगी—इस असम्भव के सम्भव होने से पहले वह डूब मरेगी—तो भी यह बात छाया सी उसके पीछे ही लगी रही, घूमते-फिरते वह इसे अपनी आँखों से देखने लगी और शायद इसीलिए इस विभीषिका से पिंड छुड़ाने की नीयत से नहाने खाने भर के समय को छोड़कर रात-दिन में थोड़ा भी समय पति से अलग रहने का साहस न कर सकी। बगल का जो कमरा उसके लिए था, इन कै दिनों में उसमें जाने की भी उसकी इच्छा न हुई। ऐसे भी कुछ दिन बीत गए।

महिम लगभग चंगा हो गया। आबहवा बदलने के लिए जल्द ही जब्बलपुर जाने की बात चल रही थी। उस दिन अचला नीचे बैठकर स्टोव पर पति के लिए दूध गरम कर रही थी। दूध बार-बार उफन रहा था, उसे किसी तरफ ताकने की फुरसत न थी—वह जानती न थी कि महिम अब तक उसी की ओर ताक रहा था—अचानक पति की लम्बी उसास की आवाज सुनकर उसने सिर उठा कर एक बार देख भर लिया और फिर अपने काम में लग गई।

महिम कभी भी ज्यादा नहीं बोलता, मगर आज एकाएक निश्वास फेंककर बोल उठा—सच अचला, बहुत बड़े दुःख के बिना कभी कोई बड़ी चीज नहीं पाई जा सकती। मेरा घर भी फिर बनेगा और यह बीमारी भी जाती रहेगी—लेकिन इससे भी जो अनमोल चीज मैंने पाई, वह तुम हो। आज मुझे लगता है, तुम्हारे बिना मेरा एक क्षण भी नहीं कट सकेगा।

अचला चुपचाप कटोरे के गरम दूध को ठण्डा करती रही, बोली नहीं। कुछ देर रुककर महिम ने फिर कहा—मृणाल सुरेश—इन लोगों ने भी कुछ कम सेवा नहीं की मेरी, लेकिन न जाने क्यों जभी मुझे होश आता, मैं घुटन महसूस करता। बार बार जी में आता, इन्हें इतनी तकलीफ, इतनी असुविधा हो रही है, इनके इस एहसान का बदला जीवन में कैसे चुकाऊँगा। लेकिन ईश्वर के हाथों का बाँधा यह ऐसा सम्बन्ध है कि तुम्हारे बारे में यह फिक्र ही नहीं होती कि यह ऋण कभी मुझे चुकाना ही पड़ेगा? मुझे बचाना मानो तुम्हारी ही गरज है—कहकर महिम जरा हँसा।

अचला गर्दन झुकाए दूध को चलाती ही गई, बोली कुछ नहीं।

महिम ने कहा—और कितना ठंडा करोगी, लाओ।

अचला ने तो भी कुछ नही कहा । नजर झुकाए उसी तरह बठी हा रही । पहले तो महिम को हैरानी-सी हुई लेकिन वह तुरत समझ गया कि मुझ से अपने आसू छिपाने के ही लिए वह उस तरह सिर गाडे बठी है ।

सुरश क्यो नही आता है, इसका वास्तविक कारण न समझते हुए भी महिम ने कुछ अनुमान नही किया था, सो नही । इसके लिए उसके मन मे क्षोभ मिली हुई एक खुशी ही थी । क्याकि अचला सतक हो गई है, अकेले म अचानक भेंट हो सकती है इस खतरे से वह सहज ही कमर से बाहर नही निकलती, महिम ने यह अनुभव किया । इसलिए आज उसका मन मानो वसन्त की हवा मे उडता रहा । उसकी खाट क करीब ही एक चौकी पटी थी । उस दिन काफी रात तक अचला उसी पर बैठी कोई किताब पढ रही थी और थककर बाकी रात वही सो रही । सबेरे महिम के जगाए वह हडबड म जगी । खिडकी खालकर देखा, वेला हा आई है ।

महिम किसी काम के लिए उस कहत कहते रुक गया और सिर से पाव तक स्त्री का बार-बार गौर करके अचरज स पूछा—तुम्हारी अपनी चादर क्या हो गई ?

उसस भी ज्यादा हैरत मे आकर अचला न दखा—अभी अभी जगन के बाद जो चादर वह लपेट कर आई है, वह सुरेश की है । पति के इस सवाल न मानो उसे कोडा लगाया । लाज और दु ख से सारा चेहरा बदरग हो गया । मगर यह हुआ कैसे, वह सोच ही न पाई । याद आया, रात जब वे सो गए थे तो अपनी चादर चपोतकर वह उनके पैरो पर रख कर खुद अचरा ओढ ही पढने बठ गई थी । इतना ही सिफ याद आया, कि नीद म उसे सर्दी सी लगी थी और अब जगकर यही देख रही है ।

स्त्री के शर्माए चेहरे को देखकर महिम स्नह स कौतुकपूण हँसी हँसा । बोला—इसम इतने शर्माने की क्या बात है अचला ? हो सकता है नौकर न ही उलटा-पुलटा कर दिया हो, तुम्हारी चादर वहा और उसकी यहा रख दी हो । या सुरेश खद ही कल शाम को यहा छोड गया हो, तुमने वदन पर रख ली । बैरे से कह दो, वदल देगा ।

कहती हूँ, कहकर अचला चादर लिए बाहर आई और जव अपने कमरे म विमूढ-सी बठ गई, तो कुछ भी समझना बाकी न रहा । काफी रात बीतन

पर सुरेश चुपचाप कमरे मे आया होगा और उसे जडासे देख स्नेह जतन से अपनी चादर उढाकर चला गया होगा। इस बात मे उसे जरा भी सन्देह न रहा। आँखें मूद कर उसकी वह झुकी और प्यास भरी निगाह वह स्पष्ट देख पाई और उसके रोगटे खडे हो गए। उसे ऐसा लगा कि सुरेश उसी को देखने तथा अच्छी तरह से देखने के लिए आया होगा और शायद रोज ही आता है, किसी को मालूम भी नही हो सकता।

इस आचरण से उसकी लज्जा की सीमा न रही। इस घिनौना, निंदनीय, असभ्य कहकर वह हजार तरह से लथेडने लगी मेहमान के प्रति मकान मालिक का चोरी-चोरी एसा करने को अपने जीवन म कभी न क्षमा करने की बार बार प्रतिज्ञा की। फिर भी उसका मन इस अभियोग के लिए खुलकर हामी नही भर रहा है, यह भी उसने समझा। लेकिन साथ ही उसके आगे यह भी स्पष्ट हो गया कि आज तक क्या और कहा चुभता रहा उसे।

केदार बाबू के कोई बचपन के साथी जबलपुर म रहते थे। उनके यहा से जवाब आया, जलवायु और कुदरती नज्जारा के लिए यह जगह बडी ही अच्छी है। मेरा घर भी काफी बडा है। महिम आये तो बडे मजे म यही रह सकता है।

एक दिन सबेरे केदार बाबू ने आकर यह बताया। कहा—माघ महीना बीत चला। और राह की थोडी बहुत तरद्दुद झेलने लायक भी हो ही गए तो अब देर काहे की ? चल ही देना चाहिए। जवानी म एक बार वे जबलपुर गए थे। उसकी स्मृतिया मन मे थी उन्ही का बडे उमग से वणन करते हुए बोले —जगदीश की स्त्री अभी जीवित है, वे माँ के समान महिम को जतन करेंगी और इसी बहाने उनका भी फिर एक बार जबलपुर जाना हो जायेगा। महिम चुपचाप सब सुनता रहा, पर कोई उत्साह नही दिखाया। उसकी यह उदासी सिर्फ अचला ने ही देखी। पिता जब वहा से चलने गये तो उसने धीमे धीमे पूछा—क्यो जबलपुर तो अच्छी जगह है, नही जाना चाहते हो ?

महिम ने कहा—तुम लोग मुझे जितना तन्दुरुस्त और सबल समझ रही हो, हकीकत मे उतना मैं अभी हुआ नही—कभी हूँगा या नहीं, मैं इसकी भी आशा नही करता।

अचला ने कहा—जभी तो डाक्टर ने जलवायु परिवर्तन करने की सलाह दी है। घूम आओ, सब ठीक हो जायगा।

महिम ने धीरे धीरे गर्दन हिलाई और जरा देर चुप रहा। बोला—क्या जानें। लेकिन ऐसी हालत में अपने या और किसी के भरोसे मुझे स्वर्ग जाने का भी भरोसा नहीं होता। अन्दर से मैं बहुत अस्वस्थ, बहुत कमजोर हूँ अचला? तुम पास न रहो, तो शायद ज्यादा दिन न बचूंगा। कहते कहते उसकी आवाज भर्रा गई।

वह जबान खोलकर कभी कुछ मांगता नहीं, कभी कोई कमी और दुःख नहीं जाहिर करता। सो उसके मुंह की इस व्याकुल याचना ने मानो कील चुभोकर अचला के हृदय में अब तक के मारे रुँधे स्नेह, करुणा और माधुर्य का मुंह खोल दिया। वह अपने आपको और सम्हाल न सकी और कहीं कुछ कर न बैठे इस डर से आंसू दबाती हुई दौड़कर वहां से भाग गई। महिम बड़ी देर तक अचरज और दुःख में खुले दरवाजे की तरफ देखता रहा, फिर धीरे-धीरे लेट गई।

फिर जब दोनों की भेंट हुई, तो दो में से किसी ने भी इसके बारे में कोई बात न की। दूसरे दिन सवेरे हाथ में एक तार लिए आई और मुस्कुरा कर बोली—जगदीश बाबू ने तार का जवाब दिया है, उन्होंने अपने मकान के पास ही हम लोगों के लिए एक छोटा-सा मकान ठीक किया है।

महिम ठीक न समझ पाकर बोला—मतलब इसका?

अचला बोली—वे पिताजी के मित्र हैं इस नाते उन्होंने आपको जगह दी, माना, मगर दो दो आदमी तो उनके कंधे पर जाकर नहीं लद जा सकते। इस लिए मैंने कल ही पिताजी को लिख भेजा था एक दूसरा मकान ठीक करने के लिए उन्हें तार दे दें। उसीका यह जवाब है। यह कहकर उसने पीला-सा लिफाफा पति के बिछावन पर फेंक दिया।

महिम ने उसे उठाकर शुरू से अन्त तक पढ़कर सिर्फ अच्छा कहा। वह समझ गया कि अचला स्वेच्छा से साथ जाना चाहती है। लेकिन कल वाले आचरण को याद करके जो आज भी उसके लिए ऐसा ही दुर्बोध, बल्कि ही दुर्गम है किसी तरह की चंचलता दिखाने की उसे इच्छा न हुई।

किन्तु अचला की ओर से सफर की पूरी तैयारी होने लगी। उस दिन

दोपहर का इस घर म आकर वह अपने सरा-सामान ठीक कर रही थी। केदार बाबू दरवाजे के पास कुछ देर तक खडे खडे देखते रहकर बोले—तुम न जाओ, तो कोई हज है बेटी ?

अचला ने चौंककर देखते हुए पूछा—क्यो पिताजी ?

सेहत और इलाज क लिहाज से उसका साथ रहना ठीक नही है। पिता होकर बेटी स यह कहने मे उन्ह शम नही आई। इसलिए महिम की मौजूदा आर्थिक स्थिति का इशारा करते हुए बोले—कौन ज्यादा दिन की बात है! फिर जगदीश के यहा उसे कोई तकलीफ ही नही होगी। कुछ दिनो के लिए नाहक ही ज्यादा खच करके—

असली बात अचला ने नही समझी। उसन पिता की ओर नजर उठाकर पूछा—शायद उन्हान कहा था।

नहा-नही महिम न कुछ नही कहा—मैं ही ऐसा सोच रहा हूँ—

तुम कुछ न साचो—मैं सब ठीक कर लूगी—कहकर उसने अपने सामान म ध्यान लगाया। दूसरे ही दिन अपन दो जेवर बेचकर उसने नकद रुपये मगवाकर रखे।

फागुन के बीचा-बीच जाने का विचार था, पर सुरेश की फूफी ने पडित से पत्रा दिखवाकर पहले ही हफ्ते म यात्रा का दिन तै कर दिया। सबको वही राय माननी पडी।

जाने के दो दिन पहले से ही अचला का मन हवा म तैरता फिरने लगा। कलकत्ता मे बाहर कुछ दिना क लिए ससुराल मे रहन के सिवाय वह कभी बाहर नहा गई, पश्चिम की तो उसने कभी शक्ल ही नही देखी। वहा कितनी निशानियाँ हैं, कितने वन जङ्गल, पहाड पवत, नद नदी, जल प्रपात, कितना कुछ है, जिनके बारे म लोगा की जबानी सुनने के सिवाय आखो देखने की कल्पना कभी उसके मन म भी नही आई। वही सारे आश्चय, अब वह अपनी आखो देखने जा रही है। इसके सिवाय वहा उसके पति को सेहत मिलेगी, वहा अकेली वही पति की घरनी, गृहिणी, सभी कामो म हाथ बटाने वाली रहेगी। तन्दुरुस्ती के लिए वहा की आबहवा अच्छी है, जीवन-यात्रा का पथ सहज सुगम है, ये अच्छे हो गए ता वही कभी अपनी दुनिया बसाएगी, और निकट भविष्य म जो अनचाहे अतिथि एक-एक करके आकर उनकी

गिरस्ती को भरी पूरी कर देंगे, उनके कोमल मुखड़े निहायत चिह्न जान स ही मानो उसकी निगाहा पर नाचन लगे। ऐसे जाने सुख के कितने सपन उसके दिमाग मे रात दिन चक्कर काटन लगे। पति उस छोडकर अकेले अब स्वग जाने का भी भरोसा नही करते, इस बात न तो उसकी सारी चिन्ता को मधुमय कर दिया। अब उसे किसी के लिए न तो शिक्वा रहा, न शिकायत, हृदय की सारी ग्लानि धुल गई और मन गङ्गाजल-सा निमल तथा पवित्र हो गया। उस इस बात की बडी इच्छा होन लगी कि जान के पहले एक बार मृणाल से भेंट हो जाय, उसे अपनी छाती से लगाकर जान-अनजाने अपन सभी अपराधो के लिए क्षमा माग ले। आज सुरेश के लिए भी उसका प्राण रोन लगा। परम बन्धु होन के बाद भी जो वह आज लाज और सकोच स उन लोगा के सामने नही आता उसकी बदनसीबी की इस वेदना का उसन आज जैसा अनुभव किया और कभी नही किया था। उससे भी हृदय से क्षमा मागनी है। लेकिन खोज करने पर पता चला, व कल से ही घर पर नही हैं।

जाने के दिन सुबह से ही बदली घिर आई। बूँदा-बादी शुरू हो गई। सामान बाधे जा चुके थे, कुछ कुछ स्टेशन भी भेज दिए गए थ, टिकट तक कटा लिया गया था। अचला के लिए भी दूसरे दर्जे का टिकट लेने की बात चली थी, लेकिन उसने एतराज किया। कहा—रुपया फूँकने ही का शौक हो, तो कटाओ। मैं स्वस्थ हूँ सबल हूँ और कितन बडे-बडे घर की स्त्रिया डयोढे दर्जे के जनाना, डब्बे म सफर करती ह, मैं नहा कर सकती ? डयोढे स ऊपर मैं हर्गिज नही जाऊँगी।

आखिर वसा ही किया गया।

पूरे दो दिन सुरेश के दशन नही। लेकिन आज दिन अच्छा न था, चाहे इसलिए या और किसी कारण से, वह अपन पढने वाले कमरे मे ही था। उस आनन्दविहीन कमरे म अचला ने वसन्त के एक झोका सा प्रवेश किया। उसकी आवाज मे खुशी झलकी पड रही थी। बोली—इस जन्म म अब हम लोगा की आप शक्ल ही न देखेंगे क्या ? ऐसा क्या अपराध किया है कहिए तो ?

सुरेश चिट्ठी लिख रहा था। नजर उठाकर उसने देखा। अपना घर जल जाने के बाद उसने आस पास के पेड-पौधा को जो सूरत अचला देख आई थी, सुरेश के इस चहरे ने उसकी ऐसी याद दिला दी कि वह मन ही-मन

सिहर उठी। वसन्त की हवा निकल गई—वह भूल गई कि क्या कहने आई थी, पास जाकर उद्विग्न होकर पूछा—तबीयत खराब है सुरेश बाबू ? मुझसे नहीं कहा ?

सुरेश ने क्षण को ही नजर उठायी थी। तुरत झुका कर बोला—नहीं, तबियत मेरी खराब नहीं है, मैं ठीक हूँ। उसके बाद किताब के पन्ने पलटता हुआ बोला—आज ही तो जा रही हो—सब ठीक हो गया ? जानें अब कब तक भेंट न होगी।

लेकिन दो एक मिनट तक दूसरी तरफ से कोई जवाब न पाकर अचरज से उसने सिर उठाकर ताका। अचला की दोनों आँखें लबालब भर गई थीं, आँख मिलते ही आँसू की बड़ी-बड़ी बूँदें टपाटप चू पड़ीं।

सुरेश की नसों में गरम खून खौल उठा, लेकिन आज सारी शक्ति लगा कर अपने को जब्त करके उसने सर झुका लिया।

आँचल से आँसू पोंछकर अचला ने गाढ़े स्वर में कहा—तुम्हारी तबियत हर्गिज अच्छी नहीं है। तुम भी हम लोगों के साथ चलो।

सुरेश ने सिर हिलाकर कहा—नहीं।

नहीं क्या ? तुम्हारे लिए—बात पूरी न हो सकी। बाहर से बेरे ने आवाज दी—बाबूजी, चाय—और पर्दा हटाकर वह अन्दर आया, साथ ही साथ मुँह फेरकर अचला बाहर चली गई।

घण्टे भर बाद जब वह कमरे में गई तो महिम ने पूछा—सुरेश दो दिनों से गया कहाँ है, जानती हो ? फूफी से भी कुछ नहीं बताया है। वह आज मुझसे भेंट नहीं करेगा क्या ?

अचला ने धीरे-धीरे कहा—आज तो वे घर ही पर हैं। महिम ने कहा—नहीं! अभी-अभी नौकरानी कह गई—वह सवेरे ही निकल गया है।

अचला चुप रही। थोड़ी ही देर पहले उससे भेंट हुई है, वह बीमार है, छुटपन की तरह इस बार भी उसने तुम्हारी जान बचाई है—केवल इसी एहसान से उसको एक बार बुलाना तुम्हारे लिए उचित है—उससे अब खतरा नहीं—शर्म से भरी हुई शंका की निगाह से देखकर और मत लजाओ—उसके मन की इन बातों में से एक भी आवाज जीभ से बाहर नहीं निकली। वह पति की ओर ठीक से ताक भी न सकी। चुपचाप किसी काम में लग गई।

धीरे-धीरे स्टेशन जाने का समय करीब आ गया। नीचे केदार बाबू की चीख पुकार सुनाई पडी और फूफी भरा घट लिए व्यस्त हो पडी। नौकरों ने गाडी पर सारा सामान लाद दिया, लेकिन जो मकान मालिक थे, उन्ही का कोई पता नही चला। फिर भी इस पर खुलकर आलोचना करने की किसी की हिम्मत न हुई। अन्दर अन्दर मामला कुछ ऐसा था कि उसने मानो सबको कुण्ठित कर दिया था।

अकेले मे पाकर बेटी के माथे पर हाथ रखकर केदार बाबू ने स्नेह सने स्वर मे कहा—सती हो बिटिया, मा सी हो ओ। बुढापे के कारण बहुत बुरा-भला कहा है—रज मत होना, कहकर व झटपट वहा से खिसक गए।

गाडी पर सवार होकर अकेले मे महिम ने दु खी होकर अचला से कहा—आखिर उसने हमसे भेंट नही की। उससे एक बात कहने के लिए मैं दो दिनों तक उसकी प्रतीक्षा करता रहा।

पिता की बात से उस समय अचला की आखो से आसू बह रहे थे। उसने केवल गर्दन हिलाकर कहा—नही।

ओट मे फूफी खडी थी। भक्ति से उन्हे प्रणाम करके अचला ने उनके चरणो की धूल जो ली, गद्गद् होकर असख्य आशीर्वाद देती हुई वे बोल उठी—तुम्हारा सुहाग अक्षय हो बिटिया, पति को आरोग्य करके जल्द लौट आओ, ईश्वर से यही प्रार्थना है।

मेरे लिए यही सबसे बडा आशीर्वाद है फूफी!—आखें पोछती हुई वह गाडी पर जा बैठी। बात केदार बाबू के भी कानो गई। वे अक्षम्य लज्जा से मानो मर-से गए।

## २७

हावडा से गाडी छूटने मे दसेक मिनट की देर थी। बाहर बादलो से भरा आसमान। बूँदा-बाँदी का विराम नही। लोगो के चलने से सारा प्लेट

धाम कीचड से भर गया था, लोग मठरी-मोटरी लिए किसी तरह सम्हल-सम्हल कर जगह ढूंढते फिर रहे थे, ऐसे मे अचला ने देखा, हाथ मे एक बडा सा बैग लिए सुरेश आ रहा है।

अचरज और दुश्चिता से केदार बाबू का चेहरा स्याह हो उठा, उसके पास न आते न आते वे चीख उठे—अरे, माजरा क्या है सुरेश? तुम कहाँ चले?

जवाब सुरेश ने अचला को दिया। उसी की ओर देखकर सूखी हँसी हँसते हुए कहा—न, मैंने देखा, तुम्हारा उपदेश, तुम्हारा आमन्त्रण, किसी की उपेक्षा नहीं की जा सकती। आज सवेरे आँख मे उँगली गडाकर तुमने बता न दिया होता, तो मैं समझ ही न पाता कि सेहत मेरी कितनी खराब हो गई है। चलो, कुछ दिन तुम्हारा ही मेहमान होकर रहूँ, देखूँ ठीक हो सकता हूँ कि नहीं! सच कह रहा हूँ न—

ठीक तो है, ठीक तो। उसके अलावा नई जगह मे हम काफी मदद भी मिल जायगी, कहकर महिम ने अचला की ओर देखा। उसकी उस मौन और दुखी निगाह ने मानो शोर करके सबको सुनाते हुए अचला से कहा—मुझसे क्यो नही कहा? जिसकी सेहत के लिए इतनी उत्कठा रही, आज सुबह तक तुम दोनो ने जिस बात की चर्चा की—उसकी खाक भी खबर मुझे क्या नही होने दी? इस चुप चुप की क्या जरूरत थी अचला?

लेकिन अचला उधर को मुह फेर रही और सुरेश कुछ समय तक विमूढ सा रहकर अचानक अन्दर की उत्तेजना को बाहर ढकेलकर नाहक ही परेशान सा बोल उठा—लेकिन अब समय तो है नही। चलो, गाडी पर ही बातें होगी। चलिए केदार बाबू कहकर केवल सामने की ओर ही नजर किए मानो सब को ठेलता ही ले चला।

बडी देर तक केदार बाबू कुछ नही बोले। महिम को उसकी जगह पर बिठा-कर अचला को उन्होने औरतो वाले डब्बे म चढा दिया। केवल उस समय जब गाडी छूटने लगी और झुककर उन्हे प्रणाम करके सुरेश महिम की बगल मे जा बैठा, तो उन्होने कहा—तुम्ही साथ रहे आशा है, रास्ते मे कोई तक-लीफ न होगी। औरतो वाला डब्बा जरा दूर है बीच-बीच म जरा खोज-खबर लेते रहना सुरेश! महिम से कहा—पहुँचते ही समाचार भेजना न

भूलना। ख्याल रहे। मैं बेताब रहूँगा—कहकर उन्होंने आँसू रोकते हुए प्रस्थान किया। उनका वह उदास चेहरा और स्नेहगीला स्वर बडी देर तक दोनो मित्रों के कानो मे गूजता रहा।

गाडी छूटी और सर्दी लगने के डर से महिम झट कम्बल लपटकर लेट गया, लेकिन सुरेश वही उसी तरह बैठा रहा। वहा उसकी शक्ल की तरफ गौर करने वाला काई नही था, अगर होता तो कोई भी देखकर कह सकता कि आज उन दो आखो की निगाह हर्गिज स्वाभाविक न थी—भीतर बहुत बडी कोई अगलग्गी न होते रहने से किसी की आँख से एसी तीखी रोशनी छिटक ही नही सकती।

पैसेंजर गाडी हर स्टेशन पर रुकती-रुकती धीमी चाल से बढने लगी और बाहर बारिश होती रही। किसी बडे स्टेशन पर गाडी रुकने को हुई तो चादर मे लिपटा मुह बाहर निकाल कर महिम ने कहा—भीड तो थी नही, थाडा सो क्या नही लिया सुरेश ? ऐसी सुविधा तो हर वक्त नही मिल सकती।

सुरेश न चौंककर कहा—हाँ, सो रहा हूँ।

इसका यह चौंकना ऐसा बेतुका और अहेतुक लगा कि महिम आश्चय से अवाक हो गया। मानो वह उससे छिपाकर काई गुनाह कर रहा था, पकड जाने के खौफ से डर गया है। इस आशङ्का को महिम देर तक मन से निकाल नही सका।

गाडी रुक गई।

अपनी स्थिति समझकर हँसी के आभास से मुखडे को कुछ सरस बनाकर कहा—मैंने सोचा था तुम सो रहे हो, सो चौंका उठा—

महिम ने केवल 'हूँ' कहा—बिना जरूरत की यह सफाई भी उसे अच्छी नही लगी।

सुरेश बोला—उन्ह किसी चीज की जरूरत है कि नही, पूछना—

लेकिन पानी नही पड रहा है ?

खास नही। मैं झपटकर देख आता हूँ, और सुरेश दरवाजा खोलकर बाहर निकल गया। औरतो वाले डब्बे के पास जाकर देखा—अचला को एक हम उम्र साथिन मिल गई है। वह उसीसे गप शप कर रही है। उसी लड़की ने पहले सुरश को देखा और अचला को छूकर इशारा करके मुह फेरकर बठ

गई अचला ने पलटकर देखा। सुरेश ने, कुछ चाहिए या नहीं यह पूछा—अचला ने सिर हिलाकर नाही की। कहा—तुम्हें पानी में नहीं भीगना है, चल दो। कहकर वह खिड़की के पास आ गई। धीमे से कहा—मेरी फिक्र की जरूरत नहीं, जिनकी फिक्र है, उनका जरा ख्याल रखना।

सुरेश ने कहा—उसका ख्याल है। लेकिन तुम्हें खाने को कुछ, पानी—

अचला ने मुस्कराकर कहा नहीं नहीं, कुछ भी नहीं चाहिए। तुम भीग-भीगकर बीमार पड़ना चाहते हो क्या ?

सुरेश ने एक नजर अचला को देखा और निगाह नीची कर ली। कहा—चाहता तो जमाने से हूँ, मगर अभागे के पास बीमारी भी तो फटकना नहीं चाहती।

सुनकर अचला की कनपटी तक शर्म से लाल हो उठी—लेकिन नजर उठाते ही सुरेश कहीं देख न ले, इस आशंका से किसी कदर उसने इसे दिल्लगी की शक्ल देने की कोशिश करते हुए हँसकर कहा—अच्छा तुम चलो तो सही वह काम कराऊँगी तुमसे कि—

लेकिन बात को वह पूरी नहीं कर सकी। उसकी छिपी लज्जा ने इस बनावटी दिल्लगी के बाहरी प्रकाश को बीच में ही खिड़कते हुए रोक दिया।

गाड़ी छूटने की घण्टी बजी। क्या कहना चाहते हुए भी सुरेश बिना कहे चला जा रहा था कि बाधा पाकर उसने उलटकर देखा—उसकी चादर का एक छोर अचला की मुट्ठी में है। वह फुसफुसा कर गरज सी उठी—मैंने तुम्हें साथ चलने को कहा था, यह बात तुमने सबके सामने क्यों कह दी ? मुझे इस तरह से अप्रतिभ क्यों बनाया ?

ठीक इसी बात के लिए तब से सुरेश के अन्दर उथल पुथल मची थी और वह पश्चाताप से जल रहा था। इसलिए वह करुण स्वर में बोला—अनजानते मुझसे अपराध हो गया अचला।

अचला जरा भी नरम न पड़ी। वैसी ही गरम होकर कहा—अनजानते ! सबके सामने मेरी हेठी कराने के लिए जानकर ही कहा तुमने।

गाड़ी चल पड़ी। सुरेश को और कुछ कहने का मौका न मिला, अचला ने उसकी चादर छोड़ दी और वह धड़कता दिल लिए तेजी से चला गया। वह बेशक किसी तरफ निगाह किए बिना चल पड़ा, लेकिन नजरों से उसका

पीछा करते हुए और एक जन की धडकन थम जान को हुई। अचला न दखा —अपने डब्बे म खिडकी से बाहर सर निकाल कर महिम उन्ही लोगा को देख रहा है। अचला जब अपनी जगह पर आ बैठी, तो उस लडकी ने पूछा— यही हैं आपके बाबू ?

अनमनी अचला केवल हूँ करके सूनी आखा बाहर खेत खलिहान, पड पौधो को देखती रही। जिस गप का अधूरा छोडकर वह सुरेश के पास गई थी उसे फिर से पूरा करने की उसे इच्छा न हुई।

फिर गाव और गाँव शहर और शहर पार होन लगा, उसके मन की घुटन फिर जाती रही तथा चेहरा निमल और प्रशान्त हो गया। फिर स वह अपनी हमसफर स खुशी-खुशी बात करन लगी जिस शम न घटा भर पहले उसे मायूस कर दिया था वह याद भी न रही।

किसी बडे स्टेशन पर सुरेश खानसामा के हाथा चाय और खान की चीज लेकर हाजिर हुआ। अचला न सब कुछ रखवाकर शिकायत करत हुए कहा— इन झपटो के लिए तुमसे किसन कहा ? तुम्हारे मित्र रत्न न शायद ?

अचला खूब जानती थी कि इन बाता मे सुरश किसी के कहन की अपेक्षा नही रखता, फिर भी अन माग इस जतन के लिए इतनी सी चिकौटी काट बिना वह न रह सकी।

सुरेश होठ दबाकर हँसते हुए चला जा रहा था अचला न आवाज दी— उसके होठ पर हँसी का वह आभास अभी था ही। उस देखते ही अचला सहसा फिक करके हँस पडी नि लाज मे लाल हो उठी। उस लाल आभा को सुरश न दोना आखा मानो जी भर कर पी लिया।

अचला न दर असल पति क बारे म जानन के लिए ही सुरेश को फिर से पुकारा था कि उन्ह कोई तकलीफ या असुविधा तो नहीं है या कि कोई जरूरत है या नही—एक बार आ सकेंगे क्या—एक-एक कर यही बात जानन की इच्छा उसके बाद उन एक भी बात पूछा की उसे शक्ति न रही। उसन चतुर्य गभीरता से सिर्फ इतना पूछा—हम इलाहाबाद म गाडी बदलनी होगी ? कितनी रात का गाडी वहाँ पहुँचेगी, मालूम है आपको ? पता करके बह जाएँगे मुझे।

अच्छा। इतना कहकर सुरश कुछ चकित सा हो चला गया।

लौटकर अचला न देखा वह लडकी अपनी जगह स दूर हटकर बैठी है।

जी की खीज को सम्हाल न पाकर अचला ने पूछा—आपके यहाँ लोग चाय-डबल रोटी नही खाते ?

वह नम्रता के साथ हँसकर बोली—भला पूछती है, इस बला से भी कोई घर बचा है ? सभी खाते हैं।

अचला ने कहा—फिर घृणा से दूर क्या खिसक गईं ?

उसने शर्माकर कहा—नही बहन, घृणा से नही, मद तो सभी खाते हैं, लेकिन मेरे ससुर यह सब पसन्द नही करते और हम औरतो को—

ऐसे ही खाने-छूने के मामले मे मृणाल से उसकी जुदाई हुई थी। उस दिन भी जिस कारण से अपने को रोक नही सकी थी, आज भी वैसी ही एक जलन से वह अपने को भूल बैठी और रुखाई के साथ उससे बोली—मैं आपको तङ्ग नही करना चाहती, आप मजे मे अपनी जगह पर जाकर बैठ सकती हैं—और पलक मारने भर की देर मे अचला ने चाय-रोटी खिडकी के बाहर फेंक दी। वह लडकी बडी देर तक काठ की मारी सी रही, उसके बाद मुह फेरकर आचल से आसू पोछने लगी। शायद उसने यही सोचा, इतनी देर के परिचय और बातचीत की जिसने कोई मर्यादा नही रक्खी, आसू देखकर न जानें वह क्या कर बठे ?

थोडी देर के लिए बारिश थम जरूर गई थी, मगर आसमान मे बादल जमते ही चले जा रहे थे। तीसरे पहर के करीब फिर बारिश जम गई। वह लडकी इसी पानी मे उतर जायगी—तयार होने लगी।

अचला से और रहा न गया, वह उसके पास जा बैठी। उसकी हथेली अपनी मुट्ठी मे लेकर स्निग्ध स्वर मे कहा—अपने व्यवहार पर मैं बेहद शर्मिन्दा हूँ। आप मुझे माफ करें।

वह हँसी, लेकिन तुरन्त उत्तर न दे सकी। अचला ने फिर कहा—मेरा मन ठीक नही रहने पर मैं क्या कर बैठती हूं, कोई ठिकाना नही। पति बीमार हैं उन्हे लेकर जल वायु परिवर्तन के लिए बाहर जा रही हूँ—अच्छे हो गए तो ठीक ही है, नही तो इस परदेश मे क्या बीतेगी, भगवान् ही जानते है। कहते कहते उसका गला भर आया।

उस लडकी ने आश्चर्य से कहा—मगर आपके पति को देखकर तो यह नही लगता कि बीमार हैं।

अचला ने कहा—मेरे पति इसी गाडी मे हैं, आपने उन्हें नही देखा है। ये मेरे पति के मित्र है।

वह लडकी और भी हैरान होकर चुप रही।

उस समय जब उसने पूछा था, यही क्या आपके बाबू हैं, तो अनमनी अचला ने हूँ कर दिया था यह अचला को याद न था, लेकिन वह न भूली थी। सो उसके चकित होने को अचला ने अनुभव से ग्रहण किया। सुरेश से उसकी बातचीत का ढङ्ग उसे कैसा बुरा लगा मन ही मन इसकी कल्पना करके वह लाज से मर गई। और निहायत बमानी और भद्दा सा जवाब दे बठी—हम लोग हिंदु नही हैं, ब्राह्म है।

उसने फिर भी जब कोई जवाब नही दिया, तो अचला ने उसका हाथ छोड दिया। कहा—आप चूकि हमारा व्यवहार ठीक ठीक समझ नही सकती, इसलिए हम अजीबो-गरीब न समझें।

अबकी वह लडकी हँसी। बोली—हम तो ऐसा नही सोचती, आप ही लोग बल्कि जिस कारण से भी हो, हमसे दूर रहना चाहते हैं। यह मैंने कम जाना, कि हमारे दो एक अपने लोग आपके समाज के है। उन्ही स मैंने जाना। कहकर वह हँसने लगी।

अचला ने पूछा—वह कारण क्या है?

वह बोली—वह आप जरूर जानती होगी। नही जानती हो, तो समाज के किसी से पूछ देखें। इसके बाद हँसकर इस प्रसङ्ग को दबाते हुए बोली—अच्छा अपने पति को लेकर इतनी दूर न जाकर हमारे यहा क्यो नही चलती?

कहाँ आरा?

राम कहिए! वहा भी आदमी रहता है! मेरे पति ठेकेदारी करते हैं, इसीलिए मुझे कभी कभी वहा जाकर रहना पडता है। मैं डिहरी की बात कह रही हूँ। सोन नदी के किनार अपना छोटा-सा घर है। वहाँ दो दिन रहन स आपके पति चंगे हो जायेंगे। चलेंगी?—अचला के दोनो हाथ अपनी गोदी म लेकर वह उसकी ओर ताकने लगी।

इस अपरिचित स्त्री की उत्सुकता और हार्दिक आग्रह देखकर अचला मुग्ध हो गई। बोली—लेकिन इसके लिए आपके पति की अनुमति होनी चाहिए। उनके कहे बिना कैसे जा सकती हूँ?

उसने सिर हिलाकर कहा—ऐसा भी क्या ! हम सेवा करने के लिए दासी हैं, इससे क्या सब बात मे दासी ? ऐसा सोचें भी मत हुक्म देन मे तो हम ही मालिक हैं। वह जगह आपको पसन्द न आए तो आप सीधे टिहरी चली आएँ—बिल्कुल न सोचें, मैं कह रही हूँ। अनुमति लेनी हो तो मैं लूँगी, आपका क्या गज पडी है ? यह कहकर उस सुहागिन लडकी ने अपनी खुशी की अधिकता से मानो अचला को आच्छन्न कर दिया।

गाडी की धीमी चाल से समझ मे आया कि आरा स्टेशन करीब आ रहा है। उसने फिर अचला के दोनो हाथ अपनी गोद मे लेकर कहा—मेरा स्टेशन आ रहा है, मैं अब उतरूँगी। लेकिन आप सोच-सोचकर जी न खराब करें, कहे जाती हूँ। कोई डर नहीं आपके पति अच्छे हो जायेंगे। परन्तु वचन दीजिए, लौटती बेर एक बार मेरे घर मे पैरो की धूलि देंगी ?

अचला न आसू रोकते हुए कहा—वह सुअवसर मिला, तो आपमे जरूर मिलती जाऊँगी।

उसन कहा—क्यो नही, सुअवसर जरूर मिलेगा। आपको मैंने पहचान लिया। मैं कह जाती हूँ, आपकी ऐसी भक्ति और प्यार की ईश्वर कभी उपेक्षा नही कर सकते ऐसा हो ही नही सकता।

अचला जबाव न दे सकी। मुह फेरकर उसने उमडे आसू को रोका।

बारिश मे गाडी प्लेटफार्म पर लगी। उसका देवर वहीं खडा था। उसने आकर दरवाजा खोल दिया। उसके कान के पास मुँह ले जाकर अचला ने चुपचाप कहा—अपने पति का नाम तो नही लेगी आप, जानती हूँ, मगर अपना नाम तो बताइए। अगर कभी आऊँ, तो आपको ढूँढूगी कैसे ?

उसने जरा हँसकर कहा—मेरा नाम राक्षसी है। डिहरी म जिस बगाली लडकी से भी पूछेंगी, मेरा ठिकाना बता देगी। मगर दोनो जने एक बार आइए, मेरे सर की कसम, मैं राह देखती रहूँगी। सोन के किनारे पर ही मेरा घर है। इसके बाद उसने दानो हाथ जोडकर अचला को नमस्कार किया और भीगती हुई चली गई।

भाप की गाडी फिर धीरे धीरे चल पडी। अभी-अभी साझ हुई थी, कि तु वर्षा के साथ हवा के झोको ने दुर्योग की इस रात को और भी भयकर कर दिया था। खिडकी के काँच के बाहर देखते-देखते उसकी आँखें खुल गई—

उसे यही लगने लगा, कि इस हाथ का हाथ न सूझने देने वाले अँधेरे ने उसके आदि अन्त को लील लिया है। जीवन का, आनन्द का मुखड़ा अब कभी नहीं देख सकेगी—जीवन में अब इससे छुटकारा नहीं। साथीहीन सूने कमरे के एक कोने में जाकर चादर लपेट कर आँखें बन्द किए वह लेट गई। अब उसकी दोनों आँखों से आँसू की धारा बहने लगी। यह आँसू आखिर क्या, उसका यह दुःख ही आखिर क्या है—यह भी नहीं सोच सकी वह परन्तु रुलाई भी किसी तरह नहीं रोक सकी। अटोक लहरों सी वह उसके कलेजे को चूर चूर करती हुई गरजती फिरने लगी। पिता की याद आई, छुटपन की सहेलियों की याद आई, फूफी की भी याद आई मृणाल की याद आई अभी अभी जो लड़की राक्षसी के नाम से अपना परिचय दे गई, उसकी याद आई—यहाँ तक कि नौकर जग्दू भी मानो उसकी नजर में आने जाने लगा। उसके मन में ऐसी ही पीड़ा होने लगी, मानो वह जिन्दगी भर के लिए सबसे विदाई लेकर निरुद्देश्य यात्रा में निकली हो।

लगातार यों रोते रोते अगले स्टेशन तक में उसकी वेदना विकल हृदय कुछ शान्त हो आया। वह उठकर आकुल सी देखने लगी कि शायद कोई स्त्री मुसाफिर इस आफत की रात में उसके डब्बे में आ जाए। भीगते भीगते कोई कोई उतर कोई कोई सवार भी हुए, पर उसके डब्बे के पास भी कोई नहीं फटकी।

गाड़ी छूट जाने के बाद एक लम्बी उसास भरकर वह अपनी जगह पर लौट आई और सिर से पाँव तक चादर लपेट कर पड़े रहते ही अब की किसी अचिन्तनीय कारण से उसका भूखा हृदय सहसा सुख की कल्पना से भर उठा—लेकिन यह कोई नई बात न थी, जिस दिन जलवायु परिवर्तन का प्रस्ताव हुआ था, उस दिन भी उसने ऐसा ही स्वप्न देखा था। आज भी उस उसी प्रकार अपने बीमार पति को याद करके उनके स्वास्थ्य और दीर्घायु की कामना करके एक अजानी जगह में आनन्द और सुख शान्ति का जाल बुनते-बुनते विभोर हो गई।

वह कब सो गई थी और कितनी देर सोई, पता नहीं, एकाएक अपना नाम सुनकर चौंक कर उठ बैठी—देखा दरवाजे के पास सुरेश खड़ा है और

खुले दरवाजे से हवा के झोंके के साथ पानी ने आकर अन्दर प्लावन-सा कर रखा है।

सुरेश ने चिल्ला कर कहा—जल्द उतरो, गाडी प्लेटफार्म पर खडी है। तुम्हारा बैग कहाँ है ?

अचला की आँखें तब भी निंदाई थी, लेकिन उसे याद आया, जबलपुर के लिए इलाहाबाद में गाडी बदलनी है। अपना बैग उसे दिखाती हुई वह हडबडा कर उतर पडी। बोली—इस पानी में उन्हें कैसे उतारिएगा ? यहाँ पालकी-वालकी कुछ नहीं मिलती ? ऐसे तो बीमारी बढ जायगी सुरेश बाबू !

सुरेश ने क्या जवाब दिया, बारिश में समझ में नहीं आया। एक हाथ में बैग और दूसरे में अचला का हाथ कसकर पकडे हुए वह उधर वाले प्लेटफार्म की ओर लपका। वह गाडी खुलन-खुलन को थी। पहले दर्जे के एक सूने डिब्बे में अचला को ढकेलते हुए बोला—तुम स्थिर होकर बैठो, मैं उसे ले आऊँ।

तो मेरी यह मोटी चादर लेते जाइए, उन्हें अच्छी तरह से ओढा कर लाइए। अचला ने अपनी चादर सुरेश के बदन पर फेंक दी। वह तेजी से चला गया।

जहाँ तक नजर जा सकी, अचला सामने देखती रही। दूर दूर खंभे पर स्टेशन की रोशनी जल रही थी, पर इस घोर बारिश में रोशनी इतनी नाकाफी सी थी कि कुछ भी लगभग नजर नहीं आ रहा था। मुसाफिर पानी में दौड रहे हैं सिर पर बोझा लिए कुली आ जा रहे है, रेल कर्मचारी परेशान है—यह सब बस धुँधली छाया-सा दीख रहा था। धीरे-धीरे वह भी न दीखने लगा, स्टेशन की घण्टी जोरो से बज उठी और जिस गाडी से अचला अभी अभी उतर कर आई थी, खौफनाक अजगर की नाई फोस् फोस् की आवाज से आकाश पाताल कंपाती हुई वह प्लेटफार्म से बाहर निकल गई—अँधेरे के सिवा सामने और कोई ओट न रही।

फिर घण्टी बजी—अचला ने समझा कि यह घण्टी इस गाडी के छूटने की है—लेकिन वे लोग चढ गए कि नहीं कहाँ चढ गए, सामान सब लदा या रहा—कुछ भी न जान पाकर अचला चिंतित हो गई।

कम्बल ओढे हाथ में नीली लालटेन लिए एक प्यादा तेजी से जा रहा था। उसे सामने से गुजरते देख अचला ने पुकारकर पूछा—सारे मुसाफिर चढ गए

या नही ? पहले दर्जे का डब्बा देखकर वह ठिठक गया। बोला—जी मम साहब।

अचला कुछ निश्चिन्त-सी हुई। समय पूछा, उसने बताया—नौ बज के—

नौ बज के ? अचला चौंक उठी—लेकिन इलाहाबाद पहुँचने मे तो रात लगभग बीत जाती। अकुलाकर पूछा—इलाहाबाद—

लेकिन वह आदमी और खडा नही रह पा रहा था। ऊपर रोड नही था फिर गाडी की छत से छीटें उडकर उसके नाक मुह म सुई-से चुभ रहे थे। हाथ की रोशनी को तेजी से हिलाते हुए मुगल सराय मुगल सराय ! कहता हुआ वह चला गया।

सीटी बजाकर गाडी खुल गई। इतने मे उसके सामने से दौडते हुए सुरेश कहता गया, डरो मत, मैं बगल के ही कमरे मे हूँ।

## २८

सुरेश बगल के डिब्बे म चढ गया, ठीक है मगर वे ? तब से वह बाहर ही तो आँखें बिछाए है—जितना धुँधला चाह हो उनकी शक्ल क्या बिलकुल नजर ही नही आती ? फिर इलाहाबाद के बजाय जान किस नए स्टेशन म आखिर गाडी क्यो बदली गई ? पानी के छीटें से उसके बाल, उसका ब्लाउज भीगने लगा, फिर भी खिडकी से मुह बाहर किए कभी सामने, कभी पीछे, अँधेरे मे वह क्या देख रही थी, वही जाने। लेकिन उसका मन किसी भी प्रकार से यह मानने को राजी न हुआ कि इस गाडी मे उसके पति नही हैं, वह सुरेश के साथ निरी अकेली किसी दिशाहीन उद्देश्यहीन यात्रा मे जा रही है। ऐसा नही हो सकता ! कही न कही वे इसी गाडी म जरूर है।

सुरेश आदमी चाहे जैसा हो जो भी करे, मगर एक बक्सूर स्त्री का उसके समाज, धम नारी, के सारे गौरव स हटाकर अनिवाय मृत्यु मे ढकल

देगा, ऐसा पागल वह नहीं है। खासकर के इससे उसे लाभ क्या है ? अचला के जिस शरीर के प्रति उसे इतना मोह है, उसे एक वेश्या के शरीर म बदलने का वह जीवित नही रह सकती, यह सीधी-सी बात अगर उसने नहीं समझी, तो प्रेम शब्द को जबान पर लाया ही क्यो था ? नही-नही, ऐसा हर्गिज नही हो सकता ! वे वहीं इंजन के आस-पास ही सवार हो गए, वह देख न पाई शायद।

अचानक एक झोंका के आ लगते ही सिमटकर वह एक कोने म चली गई और अपने को देखा, सारे बदन का कपडा कही भी जरा-सा सूखा नही रह गया था। बारिश म वह इस कदर भीग गई थी कि आंचल से लेकर ब्लाउज की अस्तीन से टपाटप पानी चू रहा था। बिना जाने वह जो झेलती रही, जानकर उससे अब वह न झेला गया, कपडे बदलने की गरज से उसने अपने बैग को अपनी ओर खीचकर खोलना चाहा कि गाडी की चाल इतने म धीमी पड गई। जरा ही देर म गाडी स्टेशन पर जाकर रुकी। पानी जोरो से पड ही रहा था, यह जानने की कोई तरकीब न थी कि कौन-सा स्टेशन है, फिर भी बग खुला ही पडा रहा, अन्दर के अदम्य आवेग से नीचे उतरकर अँधेरे म अदाज से झपटकर सुरेश वाले डिब्बे की खिडकी के सामने जा खडी हुई।

जोर से आवाज दी—सुरेश बाबू !

उस डब्बे म दो एक बगाली और एक अँग्रेज सज्जन थे। सुरेश एक कोने मे सिमटकर आँखें बन्द किए बठा था। अचला को आशङ्का थी, उसके गले से शायद आवाज न निकले, इसीलिए कोशिश से निकाली गई चीख ने ठीक मानो घायल जानवर के ऊँचे चीत्कार की तरह न केवल सुरेश को, बल्कि वहाँ मौजूद सबको चौंका दिया। हक्के-बक्के सुरेश ने आँख खोलकर देखा—दरवाजे पर खडी अचला के चेहरे पर पानी की धारा और आलोक किरण ने एक साथ ही पकडकर रूप के एक ऐसे इन्द्रजाल की रचना की थी कि सबकी मुग्ध दृष्टि विस्मय से एक बारगी अवाक् थी ! सुरेश दौड कर उसके समीप पहुँचा कि उसने पूछा—उन्हे नही देख रही हूँ—कहाँ है वे ? कौन-से डब्बे मे चढाया उन्हे ?

चलो, ले चलूँ तुम्हे—कहकर सुरेश बारिश मे ही उतर पडा और अचला का हाथ पकडकर उसी तरफ खीचता ले चला, जिधर से वह आई थी।

दोनो बाङ्गली एक दूसरे को देखकर जरा मुस्कराए अँग्रेज बेचारा कुछ न समझ सका, लेकिन एक स्त्री की करुण पुकार उसके जी को छू गई थी—

जमीन पर गिरे कम्बल को अपने पाव पर खीचकर उसने एक लम्बी सास ली और चुपचाप अधेरे मे बाहर देखता रहा।

अचला के डब्बे के पास जाकर सुरेश ठिठक गया अन्दर देखकर घबराते हुए पूछा—तुम्हारा बैग खुला कैसे है ? उसने अचला के जवाब का इन्तजार नही किया—जोर से खीचकर अचला को अन्दर ले जाकर दरवाजा बन्द कर दिया।

उँगली मे दिखाते हुए पूछा—इसे खोला किसने ?

अचला ने कहा—मैंने। मगर छोडो उसे, वे कहा हैं, मुझे दिखा दो, या सिर्फ बता दो, किधर हैं, मैं खुद ढूढ लूँगी। कहते कहते उसने दरवाजे की तरफ कदम बढाया। सुरेश ने झट उसका हाथ थाम लिया। कहा—इतनी घबरा क्यो रही हो, देखती नही गाडी खुल गई ?

बाहर अँधेरे की ओर देखकर ही अचला समझ गई, बात ठीक ही है। गाडी चलने लगी थी। उसकी दोनो आखो मे निराशा मानो आकार लेकर दिखाई दी। उसने मुडकर पल भर के लिए सिर्फ सुरेश के पीले और श्रीहीन चेहरे को देखा और कटे पेड की नाइ गिरकर दोनो हाथो से सुरेश के पैर को जकडती हुई रो पडी—कहा है वे ? उन्हें क्या आपने रास्ते मे गाडी से ढकेल दिया ? बीमार आदमी का खून करके तुम्ह—

ऐसी खौफनाक तोहमत का तब भी लेकिन अन्त न हो सका। एकाएक उसका हृदय विदारक रोना चीचीर हो फलकर सुरेश को एक बारगी पत्थर बनाता हुआ, चारो तरफ फला और बसी ही खौफनाक रात के अन्दर जाकर खो गया और वही, उसी गद्दी वाली बेंच पर टिककर सुरेश असह्य आश्चर्य से काठ का मारा सा बैठा रहा। उसके परो के नीचे क्या हो रहा था, बडी देर तक मानो वह कुछ समझ ही न पाया। बडी देर के बाद अपना पाव खीचकर वह बोला—मैं ऐसा काम कर सकता हूँ, तुमको यकीन आता है ?

अचला उसी तरह रोते रोते बोली—तुम सब कुछ कर सकते हो। हमारे घर मे आग लगाकर तुमने उन्हे जलाकर मार डालना चाहा था। मै तुम्हारे परो पडती हूँ, बताओ, कहा पर क्या किया है तुमने ? कहकर वह फिर उसके पर पकड कर उसी पर सिर कूटने लगी। लेकिन जिसके पर थे, वह एक बारगी अचेतन-सा टुकुर टुकुर ताकता रहा।

बाहर पगली रात वसी ही तमकती रही, बिजली वार बार अँधेरे को वैस हो चीर देने लगी, वरसाती झोके उसी तरह मारी दुनिया को तोडते मरोडते रह , मगर अभिशप्त नर-नारियो के अन्धे हृदय मे जो प्रलय उमड घुमड रहा था, उसके मुकाबले यह सब तुच्छ था, कुछ भी नही।

एकाएक अचला तीर की गति से उठ खडी हुई, तब सुरेश का सपना टूट गया। उसने अनुभव किया, अगला स्टेशन करीब आ गया है, इसलिए गाडी की चाल धीमी हो गई है। उसे समझते देर न लगी कि अचला आखिर इस तरह खडी क्या हो गई ! बडी कोशिश से अपने को सम्हाल कर दाए हाथ से उसे रोकते हुए सुरेश ने कहा—बैठो ! महिम इस गाडी पर नही है।

नही हैं ! तो हैं कहा ! कहते-कहते वह धप्प से सामने की बेंच पर बैठ गई।

सुरेश ने गौर किया, उसके चेहरे पर से लहू की आखिरी निशानी तक गायब हो गई। शायद अब तक के इतने राने धोने, इतना सिर पीटने के बावजूद उसके हृदय म सारी विरोधी दलीलो के बाद भी एक अव्यक्त आशा छिपी थी—हो सकता है ये सारी आशकाएँ निर्मूल हो, हो सकता है, भयकर दुस्वप्न की असह वेदना नीद टूटते ही एक लम्बी सास के साथ ही खत्म हो जाय। ऐसी एक अकथनीय वस्तु ने उस समय तक भी उसके समूचे हृदय को उजाड नही दिया था। क्योकि अभी अभी तो ससार मे उसकी कामनाओ का सबस मौजूद था और एक रात भी न बीती, उसे कुछ नही रहा, कुछ भी नही ? पलक मारते-मारते जिन्दगी बदनसीबी की आखिरी हद को पार कर गई। परिमाणहीन इतनी बडी विपत्ति मे शायद अपने जीवित रहने पर ही उसे विश्वास नही हो रहा था। दोनो बुत-से बैठे रहे। गाडी एक अजाने स्टेशन पर आकर लगी और खुल गई।

सुरेश ने एक बार क्या तो कहना चाहा, फिर चुप ही रहा, फिर उठ खडा हुआ। खिडकी का काच उठाकर एक-दो वार उसने चहल-कदमी की और फिर अचला के सामने जाकर खडा हुआ। बोला—महिम सकुशल है। अब वह इलाहाबाद पहुँचा होगा। जरा रुककर फिर बोला—वहा से वह जबलपुर भी जा सकता है। कलकत्ता भी वापस हो सकता है।

अचला ने सिर उठाकर पूछा—और हम कहा जा रहे ह ?

उस आसू मलिन मुह पर दुख और निराशा की चरम प्रतिमूर्ति फिर एक बार सुरेश को दिखाई दे गई। उससे कितनी बडी भूल हो गई, यह उसे मालूम न था। और इसके लिए आज वह अपनी हत्या भी कर सकता था। लेकिन जिसकी छलना ने उसकी सत्य दृष्टि को इस तरह से ठगकर इस भूल मे ही बार-बार अँगुली का इशारा किया है, उस छलनामयी के लिए भी उसका हृदय विरक्त हो उठा। इसीलिए अचला के प्रश्न का उसने बडी रुखाई से जवाब दिया—हम शायद सदेह नरक म ही जा रहे हैं। जिस पतन के रास्ते मे राह दिखाते हुए इतनी दूर खीच लाई हो उसके बीच म ही चाहने से रुकने की जगह तो मिल नही सकती ! अब तो अन्त तक चलना ही पडेगा।

जवाब सुनकर अचला ऐडी से चोटी तक एक बार काप उठी उसके बाद सिर झुकाकर वह चुप ही रही। जो झूठा मक्कार पराई स्त्री का गलत रास्ते ले जाकर भी बेझिझक ऐसी बात जबान पर ला सकता है उससे कोई क्या कहे !

सुरेश फिर पायचारी करने लगा। उस पाषाण प्रतिमा के सामने बोलने की शक्ति शायद उसे नही थी। कहने लगा—तुम तो कुछ ऐसा जता रही हो, जैसे सवनाश अकेले तुम्हारा ही हुआ। लेकिन सवनाश का जो मतलब है, वह मेरे हक म किस हद से गुजरा पता है ? मैं तुम लोगो की तरह ब्रह्मज्ञानी नही हूँ। मैं नास्तिक हूँ। मै पाप पुण्य का स्वाग नही करा करता वास्तविक सव-नाश की ही सोचता हूँ। तुम्हारे पास रूप है आसू हैं, एक औरत के जो हथि-यार हैं तुम्हारे तरकस म सभी हैं—तुम्हे किसी भी रास्ते म रुकावट नही आयेगी। लेकिन मेरा अजाम सोच सकती हो ? मैं मर्द हू, लिहाजा जेल से बचने के लिए मुझे अपने हाथो यहा हर गोली खानी पडेगी। कहकर सुरेश ने खडे होकर छाती के बीच म हाथ रखकर दिखाया।

जाने क्या कहने को तो मुह उठाकर भी अचला ने मुह फेर लिया। लेकिन उसकी आखो से घृणा छलकी पडती थी यह देख सुरेश आग बबूला हो बोल उठा—मोर का पखना लगाकर कौआ कभी मोर नही होता अचला ! उस निगाह को मैं पहचानता हूँ। मगर वह तुम्हे नही साहती। जिसे सोह सकती वह मृणाल है तुम नही ! तुम असूयपश्या हिन्दू नारी नही, इतने से तुम्हारी जात नही जायगी। उतर कर तुम जो चाहे जहा चली जाओ। मैं चिट्ठी लिखे देता हूँ महिम को दिखाना, वह तुम्हे अपना लेगा। खाने के लोभ म जगली

जानवर जसे फन्दे म घिरकर गुस्से मे जो भी आता है, उसी को करता रहता है, ठीक वसे ही सुरेश अचला की चित्थी चित्थी उडा देना चाहने लगा। बीच ही मे सहसा थमकर बोला—आखिर यह ऐसा कौन-सा अपराध है ? तुमने तो पति के घर मे ही उनके मुँह पर कहा था—तुम किसी और को प्यार करती हो—याद है ? जिस आदमी ने घर फूक कर तुम्हारे पति को जला डालना चाहा था। ऐसा तुम्हारा विश्वास है, उसी के साथ चल देना चाहा था—चली भी आई थी—याद आता है ? उसी के घर, उसी के आश्रय मे रहकर छिप कर रोते हुए उसे साथ आने का आग्रह किया था, ख्याल आता है। यह क्या उससे भी बडा गुनाह है ? रोज रोज की और भी जानें कितनी हरकतें !, जभी मुझे यह हिम्मत पडी। असल मे तुम एक गणिका हो, इसलिए तुम्हे भगा लाया। इससे ज्यादा की तुमसे उम्मीद नही की। मैं तुम से बार-बार कहता हूँ तुम सती-सावित्री नही हो। वह तेज, वह गरूर तुम्हें शोभा नही देता, न ही फबता—यह निहायत अनधिकार चर्चा है तुम्हारे लिए ! कहकर सुरेश रुँधी सास की वजह से ज्योही थमा अचला सिर उठाकर टूटे स्वर म चीख उठी—रुके नही, आप रुकें नही सुरेश बाबू और कहिए। दोना परो से मुझे रौंदकर ससार मे जितनी भी कडवी बात है, घिनौनी व्यग है, जितना भी अपमान है—सब कीजिए—वह जमीन पर औधी पड गई और रुँधी रुलाई की फटी आवाज म बोली—यही चाहती हूँ मैं, इसी की मुझे जरूरत है। हमारा यही वास्तविक सम्बध है। ससार स , ईश्वर, आपसे केवल यही मेरी भावना है।

सुरेश गाडी की दीवाल से टिककर काठ-सा खडा ही रहा। अचला के खुले-बिखरे बाल जमीन पर लोटने लगे, उसके भीगे कपडे धूल मे सनकर लथपथ हो गए। लेकिन सुरेश उधर कदम नही बढा सका। नया शिकारी पहले निशाने म गिरी हुई चिडिया की मृत्यु यत्रणा को जसे अवाक होकर देखता है, वैसे ही दो मुग्ध अपलक आँखो की निगाह से वह मानो किसी मरणासन्न स्त्री की अतिम घडी की गवाही के लिए खडा हो।

गाडी की गति फिर धीमी हुई और धीमी होते होते वह स्टेशन पर आकर रुकी। सुरेश ने सीधा खडे होकर सहज शात स्वर मे कहा—तुम्हे इस हालत मे देखकर लोग चकित रह जायेंगे। तुम उठकर बैठो, मैं अपने डिब्बे म जाता हूँ। सुबह होने पर तुम जहा उतरना चाहोगी, जहा जाना चाहोगी, मैं तुम्ह

भिजवा दूगा । इस बीच मे कुछ खौफनाक, कुछ कर बठने की कोशिश मत करना । उसका कोई नतीजा न होगा । सुरेश दरवाजा खोलकर नीचे उतर गया । सावधानी से दरवाजे को बन्द करके क्या सोचकर तो जरा देर चुपचाप खडा रहा । उसके बाद मुह बढाकर बोला—मेरी बात तुम समझोगी नही । लेकिन इतना सुन लो, इस मसले का हल मेरे जिम्मे रहा । तुम्हारी कोई बुराई मैं न होने दूगा । यह कर्ज मैं पाई पाई चुकाकर जाऊँगा—कहकर वह धीरे-धीरे अपने डिब्बे की ओर चला गया ।

गाडी की खिची और लगातार आवाज के बन्द होने के साथ साथ हर बार ही सुरेश की तन्द्रा टूट जाती थी, लेकिन पलको का भार ठेलकर देखने की शक्ति मानो उसमे न रह गई थी । भीगे कपडो म उसे बेहद सर्दी लग रही थी । वास्तव म वह बीमार पड सकती है और मौजूदा हालत मे यह बात कितनी खतरनाक है, अन्दर ही अन्दर इसे महसूस भी कर रहा था, लेकिन बग को खोलकर कपडे बदलने की कोशिश एक असम्भव इच्छा सी ही उसके मन मे बेबस पडी थी । ठीक ऐसे ही समय एक सुपरिचित कण्ठ का स्वर उसके कानो पडा—कुली ! कुली अब जरा सा आँख खोलकर उसने देखा, गाडी किसी स्टेशन पर खडी है और जाने कब अँधेरा मिटकर बारिश थमे धुमले मघो से छनकर एक तरह की मटमैली रोशनी म सब झलक उठा है । उसने देखा, बहुत-से लोग उतर रहे हैं, बहुतेरे चढ रहे हैं और उन्ही मे खडी शोक-मग्न एक नारी-मूर्ति किस इन्तजार मे तो खडी है ? यह अचला थी । चमडे का एक बहुत बडा बैग माथे पर लिए एक कुली से उतरते ही उसने क्या तो पूछा और धीरे-धीरे गेट की तरफ बढी ।

अब तक सुरेश बेबस-सा सिर्फ देख ही रहा था । शायद उसका यह आखो का देखना अन्दर दाखिल होने की राह नही पा रहा था, पर जैसे ही गाडी खुलने की सीटी प्लेटफाम के किस छोर से गूँज उठी कि जस बिजली छू गई हो, उसके भीतर-बाहर की जडता जाती रही । तुरत उसने अपना बग खीच लिया और उतर पडा ।

टिकट की बात अचला को याद ही नही था । गेट पर टिकट बाबू के सामने जाते ही अचला ठिठक गई कि इतने म पीछे से सुरेश ने स्निग्ध स्वर म कहा—रुको मत, बढो, मैं टिकट दे रहा हूँ ।

अचला को उसके आने की खबर न थी। पल न लिए, भय और झिझक से उसके पाँव नही उठे, मगर यह हिचक औरो के देख सकने के पहले ही वह धीरे-धीरे बाहर हो गई।

बाहर जाकर दोनो की यो बातें हुई—

सुरेश ने कहा—मैंने सोचा था, तुम सीधे कलकत्ते ही लौट जाना चाहोगी, लेकिन यक-ब-यक डिहरी मे क्यो उतर पडी? यहा जाना पहचाना कोई है क्या?

अचला दूसरी तरफ नजर किए थी। उसी तरफ नजर किए बोली—कलकत्ते में किसके पास जाऊँगी?

लेकिन यहाँ?

अचला चुप रही। सुरेश खुद भी कुछ देर तक चुप रहकर बोला—शायद मेरी किसी बात का अब तुम एतराज न कर सकोगी, उसके लिए मुझे कोई शिकायत भी नही, अंतिम समय मे मैं केवल भीख चाहता हूँ।

अचला वैसी ही चुप खडी रही।

सुरेश ने कहा—मेरी बात किसी को समझाने की भी नही और मैं समझाना भी नही चाहता। मेरी चीज मेरे ही साथ जाए! जहा जाने से यहाँ की आग जला नही सकेगी, मैं आज उसी देश की राह ले रहा हूँ, पर मेरा आखिरी सहारा मुझे दो, मैं हाथ जोडकर विनती करता हूँ।

तो भी अचला के मुँह से एक भी शब्द न निकला, सुरेश कहने लगा—मैंने तुम्हे बहुत कडवी बाते कही है बहुत दुःख दिया है, लेकिन बाद म अच्छे रहने के घमण्ड मे ऊपर बैठकर तुम्हारे माथे कलक की कालिमा पोतू, यह मैं मरकर भी बर्दाश्त नही कर सकूगा। मेरे लिए तुम्हें तकलीफ न उठानी पडे, विदा होने के पहले मुझे इस सुयोग की भीख देती जाओ अचला।

उसकी आवाज म क्या था, अंतर्यामी ही जानें, गरम आँसू मे अचानक अचला की दोनो आखें डूब गई। फिर भी जी जान से अपने कठ को सम्हालकर उसने धीरे धीरे पूछा—मुझे क्या करना होगा, कहिए?

सुरेश ने जेब से टाइम-टेबिल निकालकर गाडी का समय देखकर कहा—तुम्हे कुछ नही करना होगा। साँझ से पहले अब किसी भी तरफ जाने की कोई गुंजाइश, नही, इसलिए इतनी देर के लिए मुझ पर अविश्वास न करो,

बस इतना ही चाहता हूँ। मुझसे अब तुम्हारा कोई अमगल न होगा, तुम्हारा ही नाम लेकर मैं कसम खाता हूँ।

लोगो की कौतूहल भरी दृष्टि से बचने के लिए स्टेशन के छोटे-से वेटिंग रूम मे जाकर रुकने की इच्छा उन दोनो म से किसी की न हुई। पूछताछ करन पर पता चला, बडी सडक पर सम्राट शेरशाह के नाम पर कायम सराय की बुनियाद आज भी बिल्कुल मिट नही गई है। शहर के छोर पर की उसी सराय म जाने के लिए उन्होने किराए की एक बैलगाडी तय की।

रास्ते म किसी ने किसी से बात नही की, किसी न किसी का मुँह नही देखा। सिर्फ उस समय जब बैलगाडी सराय मे जाकर रुकी, तो एक झलक सुरेश की शक्ल देखकर अचला न केवल हैरान हुई, बल्कि बेचैन भी हुई। उसकी दोना आखे बहिमाव लाल थी, जो कि चेहरे पर मानो किसी ने स्याही पात दी हो। ससार के बडे से-बडे अ धड-तूफान म उसने उसे देखा था, किन्तु उसकी यह शक्ल कभी देखी हो एसा याद नही आया।

गाडीवान को किराया चुकाकर सुरेश ने मनीबग को वही रख दिया। कहा—जब तक यह तुम्हारे ही पास रहा जरूरत हो तो लेने मे सकोच मत करना।

अचला के जी म आया, पूछे कि इसका मतलब क्या ? मगर न पूछ सकी। सुरेश ने कहा—यह सामने वाला ही कमरा कुछ अच्छा है शायद, तुम जरा सुस्ताओ मैं बगल के कमरे मे इन कपडो को जरा बदल डालू। पता नही, इन्ही सबके चलते ऐसा भद्दा लग रहा है—कहकर अचला की सुविधा-असुविधा का कोई ख्याल न करते हुए ही वह अपना बैग उठाकर नशेबाज जैसा डगमगाता हुआ बरामदे को पार करके कोने वाले कमरे मे चला गया।

उसके चले जाने के बाद अचला अकेली रास्ते पर खडी न रह सकी। सो अपने वजनी बक्से को किसी तरह ठेल-ढूलकर कमरे म ले आई और उसी पर ठक-से बैठी राह से आन जान वालो को देखने लगी।

## २९

उसी कमरे के सामने वक्स पर बठे-बैठे आशा और भरोसा का स्वप्न देखते हुए कसे अचला के नौ घण्टे निकल गए, वह सोच न सकी। थोडी ही देर हुई, सूर्योदय हुआ। सदिया के धूल भरे पड-पौधे कल की वारिश म धुल-निखर कर सुवह के सूरज की किरणा से झलमला रहे थे। भीगे कोमल पथ पर थकावट मिटे राही हँसते हुए चलने लगे थ, दक्के दुक्के इक्के भी छोटी घटियो की आवाज गुजाते दौड रह थ, बीच बीच म चरवाह बालक गाय-भैंस के झुण्ड लिए अजीवो-गरीब रिश्ना कायम करते हुए जान किस गाव की ओर चल पडे थे, पास ही के किसी एक झोपडे स किसी गृहस्थवधू के जाने के साथ अतमार की अथक अजानी लय तिरती आ रही थी। कुल मिलाकर नए दिन का यह कम-स्नात उनकी चेतना म गतिशील हो रहा था, उमी के अनोखे प्रवाह म उसका दुख, उसका दुर्भाग्य उसकी चिता कुछ देर क लिए यहा तो वह गई थी माना। उसे याद ही न थी कि वह ठीक किस लिए क्या यहा बठी है। अचानक दो गँवई बालक की हैरान सी निगाह याद आई। वे अगना के एक ओर स आखें फाड फाडकर ताक रहे थे। इस टूटी फूटी पुरानी सराय के बीते दिनो का गौरव इतिहास उन बच्चा का मालूम न था। लेकिन उनके होश सम्हालन के वक्त स ऐसे यात्री इसमें कभी नही आए, उनकी मौन आखो की निगाह न अचला को यह साफ बता दिया। जगने के बाद रोज की तरह खेलन आए कि यह ताज्जुब उन्ह दिखाई पड गया।

अचला ने चौंककर खडी हो उनसे कुछ पूछना चाहा था, लेकिन वे लडके तुरत चपत हो गए। उसी क्षण उस याद आया, कोई दो घण्टे पहले कपडे बदलने की कहकर सुरेश जो गया है, सो गया ही है। आखिर इतनी देर से अकेला वह कर क्या रहा है, यह जानने के लिए वह धीरे धीरे उस कमरे के सामने पहुची और बन्द किवाड के अन्दर से कोई आहट न पाकर दो एक मिनट चुप खडी रही, फिर धीरे धीरे किवाड के पल्ले हटाकर सामने ही जो कुछ देखा, उसके एक साथ ही मुक्ति की तीखी घबराहट और भय से जरा देर के लिए उसका सारा शरीर मानो पत्थर हो गया। कमरे मे अधेरा था, सिर्फ उधर

के एक टूटे झरोखे से छनकर थोडी-सी रोशनी फर्श पर पड रही थी। वहा अँधेरे-उजाले मे निहायत गदी जमीन पर सुरेश चित् पडा हुआ था। उसके बदन पर कपडे वही थे, बैग केवल खुला पडा था और उसमे की कुछ चीजें इधर उधर बिखरी पडी थी।

पलक मारने की देर म अचला को उसकी आखिरी बातो की याद आ गई, सुरेश डाक्टर है वह मनुष्य की जिन्दगी को बचाना ही नही जानता, उसकी जान को चुपचाप निकाल बाहर करने का भी हुनर उसे आता है। इस भयङ्कर भूल के लिए सुरेश की उत्कट आत्मग्लानि की याद आई, याद आई उसकी विदा-याचना, उसका भरोसा देना—सबसे ज्यादा बारम्बार प्रायश्चित करने का कठोर इशारा—एक साथ एक ही सास म सबन मानो उस लोटती हुई देह के एक ही परिणाम की बात उसके कानो कही। वह द्वार थामकर वही बैठ गई, यह हिम्मत न पडी कि अन्दर जाए।

लेकिन अब उस लोटते हुए शरीर को देखकर उसकी आखें मानो फटकर आँसू बहाने लगी। जो उसी के लिए कलङ्क का इतना बडा बोझा माथे पर रखकर हताश के मारे सदा के लिए इस दुनिया को छोड चला, उसका गुनाह कितना ही बडा क्यो न हो, उसे क्षमा नही कर सके ऐसा वज्र हृदय ससार मे शायद ही हो और आज पहली बार अपने सामने उसका अपना अपराध भी स्पष्ट हो उठा।

सुरेश से पहचान होने के उस पहले दिन से आज तक जितनी इच्छा-आकाक्षा, जितनी भूल चूक, जितना मोह जितना छल जितना आग्रह-आवेग दोनो के बीच से गुजरा, एक एक कर सब फिर से दिखाई देने लगा। उसका अपना आचरण पिता का आचरण—अचानक उसका सारा बदन सिहर उठा। लगा, अपना ही नही, बहुतो के बहुत-बहुत पातक का भारी बोझा उठाकर सुरेश जिस विचारक के चरणो म जा पहुँचा है, वहाँ वह मुह बद किए चुपचाप सभी सजा कबूल कर लेगा, या एक-एक करके सारा दुःख, सारा अभियोग बताकर उनसे क्षमा की भीख मांगेगा।

जीवन के उपभोग के बहुत से सामान, बहुत से उपकरण उसके पास थ, तो भी जो वह चुपचाप बिना किसी आडबर के सब कुछ छोडकर चला गया—इसकी गहरी पीडा अचला को आज रह रहकर बधने लगी। उसने सचमुच ही

प्रेम किया था, इस बात को उस मौत के सामने खडे होकर पूछने, अविश्वास करने की गुंजाइश न रही।

फिर उसके गालो पर से आसू की धारा बहने लगी। पिछली रात गाडी पर दोनो मे धर्म-अधर्म, न्याय पर काफी तक हो गया था। लेकिन वह सब कितनी थोथी बकवास है, अचला पहले यह क्या जानती थी? प्यार की जात नहीं होती, धर्म नही होता, जो इस तरह से मर सकता है, वह समाज के गढे हुए कायदे-कानूनो से बहुत ऊपर है, ऐसे विधि-निषेध उसे छू नही सकते— इस मृत्यु के सामने खडी होकर इस बात को आज वह इनकार कैसे कर सकती है?

अचला आचल स आँसू पोछ रही थी। अचानक उसका कलेजा छद मे हो रहा—लगा, लाश मानो हिल उठी और दूसरे ही दम एक अस्फुट कातर स्वर के साथ सुरेश ने करवट बदली। वह मरा नही है—जिंदा है। आवेग के एक प्रचड वेग से अचला उसके पास गई और टूटे स्वर मे कहा—सुरेश बाबू!

पुकार सुनकर सुरेश ने अपनी लाल-लाल आखें खोलकर देखा, मगर कुछ बोला नही।

अचला भी कुछ बोल नही सकी, केवल एक अदम्य वाष्पोच्छवास उसके गले को बन्द करता हुआ आसू के रूप मे दोनो गालो पर से झरने लगा। लेकिन पल भर पहले के आसू से कितना फक था इसका?

फिर भी सबसे ज्यादा जो चिंता भीतर-भीतर उसे दुखा रही थी, वह था इसका वास्तविक पहलू। इस अनजान अपरिचित जगह मे सुरेश के शव को लेकर वह क्या उपाय करेगी, किसे बुलाएगी, किसे कहेगी—हो सकता है बहुत अप्रिय आलोचना हो, बहुत-बहुत घिनौनी बात उठें—उनका वह किसे क्या जवाब देगी, शायद हो कि पुलिस वाले खाद खोदकर सब भेद निकाले, ऐसी बेहयाई की शर्मिन्दगी से उसका सारा देह मन भीतर-भीतर कसा पीडित, कसा दुखी हो रहा था, उसकी वह खुद भी पूणतया उपलब्धि नही कर सकी थी। इस बेअन्दाज मुसीबत के चगुल स अचानक छुटकारा पाकर अब उसके आँसू रोके नही रुकने लगे। और वह मरा नही है, सिफ इसी बात पर अचला का हृदय उसके प्रति कृतज्ञता से भरपूर हो उठा।

कुछ क्षण इसी तरह बीत जाने पर सुरेश ने धीरे धीरे पूछा—क्या रो रही हो अचला ?

अचला ने भर्राई आवाज म कहा—तुम इस तरह से सोए क्यो रह ? गए क्या नही ? मुझे इतना डराया क्यो ?

उसकी आवाज मे जो स्नेह उमडा वह ऐसा करुण, इतना मधुर था कि न केवल सुरेश के बल्कि अचला के भी मन म एक प्रकार के मोह का सचार हुआ। वह बोली—तुम्हें इतनी ही नीद लगी थी, तो मुझसे कहा क्या नहीं ? मैं उधर वाले कमरे का झाड पोछकर तुम्हारे लिए कुछ बिछा देती ? गाडी आने मे तो काफी देर थी।

सुरेश ने कोई जवाब नही दिया, सिर्फ विगलित स्नेह से उसकी तरफ ताकते हुए उसका दाया हाथ उठाकर अपने तप्त कपाल पर रक्खा और एक लम्बा निश्वास फेंका।

अचला ने चौंककर कहा—यह तो तप रहा है। बुखार हो गया क्या ?

सुरेश ने कहा—हूँ और यह बुखार सहज ही जाने वाला भी नही। शायद—

अचला ने धीरे धीरे हाथ खीच लिया। जवाब मे उसके मुँह से भी इस बार सिर्फ दीर्घ निश्वास ही निकला। उसकी सारी स्नेह ममता एक क्षण म जमकर पत्थर हो गई। सहन की, धीरज धरने की उस जितनी भी शक्ति थी, सबको इकट्ठा करके गाडी के वक्त तक स्थिर रहने की मन म ठान रक्खी थी लेकिन इस अकल्पनीय विपत्ति के आ पडने से जब उसकी आशा की पतली किरण भी पल म छिप गई तो मौत की कामना के सिवाय दुनिया मे मागने की उसे दूसरी चीज न रही।

वह इस हालत म उसे यहा अकेला छोड जाने की कल्पना भी न कर सकी, मगर जिसकी सेवा का सारा उत्तरदायित्व, सारा भार उसके माथे पर पडा उसे लेकर इस परदेश मे वह करेगी क्या, किससे वहा जाकर मदद मागेगी, क्या परिचय देकर लोगो की सहानुभूति की अधिकारिणी होगी—बिजली की तरह एक साथ इन चिंताओ के दिमाग मे दौडते ही, वह सोचकर कोई किनारा न पा सकी कि वह भाग जाए कि फुक्का फाडकर रो पडे या जोर से सिर पीट-पीटकर अपने ही हाथो अपने जीवन का लगे हाथ ही अन्त कर दे।

## ३०

उस दिन स्टेशन से भीगते हुए जो लौटे, सो गाठ के दर्द और सर्दी-बुखार से केदार बाबू सात आठ दिन तक बीमार रहे। 'बेटी दामाद का कोई कुशल पत्र नही मिला, इसलिए बेहद फिक्रमन्द होने के बावजूद अपने मित्र को जबलपुर एक चिट्ठी डालने के सिवाय और कोई जतन नही कर सके। आज उसका जवाब आया। खत मे यही लिखा था कि वहा कोई नही पहुँचे नही उन्ह किसी की कोई खबर है। ये चद पक्तियाँ पढकर उडे हुए चेहरे से सूनी आखें केदार बाबू उनकी ओर देखते और बार बार चश्मे के काँच को पोछते रहे। आखिर उन लोगो का हुआ क्या वहा गए वे—किसे लिखें, किससे पूछें, कुछ भी न सोच सके, उनकी आफ्त मुसीबत मे जो आदमी तन मन से उसके काम आता था, वह सुरेश भी नही वह भी उन्ही के साथ है।

ठीक इसी समय बरा न और एक चिट्ठी लाकर उनके सामने रखदी। केदार बाबू ने किसी कदर नाक पर चश्मा रखकर जल्दी मे चिट्ठी को उठाकर देखा, वह अचला के नाम थी। यह चिट्ठी कहा से आई, किसने लिखी—यह जानने की अकुलाहट म दूसरे का पत्र खोलना चाहिये कि नही, यह सवाल भी उनके मन म न उठा। उन्होन झटपट लिफाफे को फाड डाला। देखा लिखने वाली मृणाल थी। उसके बाद शुरू से आखिर तक पत्र को पढ गए और सूनी निगाहो से बाहर की ओर देखत हुए चश्मा पोछने के काम मे जुट गए। उनके जी म क्या होन लगा ईश्वर ही जानें। बडी देर के बाद चश्मा पाछना बन्द करके उसे जगह पर रखकर फिर से एक बार चिट्ठी को पढन लगे। मृणाल ने स्त्री की सहिष्णुता, धीरज, क्षमा आदि के तीखे उपदेश देकर अन्त म लिखा था—

यह जरूर है कि सझले दादा तुम्हारे बारे मे कुछ नही कहते, पूछने पर भी बडे गभीर हो उठते है, मगर मैं तो औरत हूँ, समझ सकती हूँ! अच्छा तो यह कहो सझली दीदी, झगडा झझट किसके नही होती बहन? लेकिन इसीके लिए ऐसा रूठना! शरीर और मन की ऐसी हालत मे न समझकर तुम्हारे पति नाराज भी हो सकते हैं, घबराकर ऊबकर चले भी जा सकते हैं, मगर तुम तो अभी पागल नही हो गई हो कि उन्होंने कहा और तुमने हा कर दी—जाओ वनवास! अभी मैं सोचा करती हूँ सझली दी कि कैसे साहस करके तुमने अपने

मरणासन्न पति को इस जगल म भेज दिया और निश्चित होकर सात आठ दिन, सात-आठ दिन क्यो कहें सात आठ साल से बाप के घर मजे मे पडी हो! यकीन मानो, उस दिन जब वे सरो सामान के साथ घर आए, मैं उन्हे पहचान नही सकी! किस बात मे तुम लोगो की लडाई हो गई, कब हो गई, क्या इन्होने जब्बलपुर जाना मुल्तवी करके यहा आने का तै किया, मैं कुछ भी नही जानती और जानना भी नही चाहती। जानती ही तो हो, सास को छोडकर मुझे कहीं जाने का उपाय नही। मेरे सर की कसम, पत्र पाते ही तुम चली आना। जा पाती तो मैं जाकर तुम्हारे पैर खीचकर फिर भी ले आती, अगर सझले दादा इतना ज्यादा बीमार न हो गए होते। तुम एक बार आओ, आकर आखो से देखो तब समझोगी कि नाहक मान करके तुमने कितना बडा अन्याय किया है! यह घर भी तुम्हारा है, मैं भी तुम्हारी हूँ, इसलिए यहा आने मे हिचक न करना। तुम्हारी राह देखती रही चरणो मे कोटि-कोटि प्रणाम। एक बात और मेरे पत्र की बात सझले दादा न जानें, मैंने छिपाकर लिखा है। इति—मृणाल।

पत्र समाप्त करके पुनश्च मृणाल ने छोटी सी कैफियत दी थी—मैं जानती हूँ कि पति की गैरहाजिरी म तुम घडी भर को भी सुरेश बाबू के यहा नही रह सकती इसलिए मैके के पते पर ही पत्र दे रही हूँ। आशा है, मिलने मे देर न होगी।

केदार बाबू के हाथ स चिट्ठी छूटकर गिर गई। वे फिर से आसमान की तरफ नजर किए अपन चश्मा पोछने के काम मे लग गए। इतना समझ मे आ गया कि महिम जब्बलपुर के बजाय अपने घर पर है और अचला वहा नही है। वह कहा है, उसका क्या हुआ, यह सब या तो महिम जानता नही या जानकर भी बताना नही चाहता।

अचानक ख्याल आया, सुरेश आखिर कहाँ है। वह तो उन्ही का मेहमान रहने के ख्याल से साथ हो गया था। बेशक वह अपने घर नही लौटा नही तो एक बार जरूर मिल जाता। उसके बाद जो आशका उनके मन मे शूल-सी चुभी, उसकी चोट से वे, सीधे नही रह सके, आराम कुर्सी पर लेट गए आखें मूद ली।

दोपहर को नौकरानी सुरेश के घर जाकर पूछ आई, फूफी को कुछ भी मालूम नही। कोई पत्र नही आया है, इससे वे भी चिंतित हैं।

रात को सोने वाले कमरे मे केदार बाबू फिर मृणाल के पत्र को लेकर रोशनी मे बैठे। उसके हर्फ हर्फ को गौर से देखकर खोजने लगे, कही अगर टिकन की जगह मिले। न भी हो तो वे कहा जाकर किस तरह मुह छिपाएँगे, नही जानते। पुश्तो से कलकत्ते रह, कलकत्ते के बाहर भी कोई भला आदमी जिन्दा रह सकता है, यह वह सोच भी नही सकते। इस जन्म के चीन्हे-जाने स्थान, समाज, सदा के बधु बाधव से बिछुड कर कही अज्ञात वास मे जीवन के बाकी दिन बिताने ही पडे, तो वे दुस्सह दिन कसे कटेंगे, यह उनकी कल्पना से परे था और बेटी होकर जिस हतभागन ने बीमार जईफ बाप के कमजोर कधो पर यह बोझा लाद दिया, उसे वे क्या कहकर अभिशाप दें, यह भी उनकी कल्पना के बाहर था।

रातभर म वे एक बार भी झपकी न ले सके। सुबह होते-होते उनकी बदहजमी वाली बीमारी फिर दिखाई दी। लेकिन आज चूकी उनकी ओर देखने वाला तक कोई न दिखाई दिया, तो बेबस से बिस्तर पर पडे रहने मे भी उन्ह घृणा महसूस हुई। इतनी बडी पीडा को भी शात भाव से छिपाए और दिन की तरह वे बाहर निकले और स्टेशन के लिए गाडी लाने के लिए बरा को कहकर आप जल्दी जल्दी कपडा-लत्ता सहजने लगे।

## ३१

जाडे का सूरज तीसरे पहर ढलने को था और उसकी कुछ-कुछ गम किरणा से सोन नदी के पास का दूर तक फैला हुआ चौर धू-धू कर रहा था। एसे समय एक बगाली के मकान मे बरामदे की रेलिंग पकड कर उधर को देखती हुई अचला चुप खडी थी। उनकी अपनी जिदगी से उस महखड का कोई सम्बध था या नही, यह और बात है, लेकिन उन दो अपलक आँखो की

निगाह को एक नजर देखते ही यह समझ में आ सकता कि उस तरह से देखने पर देखा कुछ नहीं जा सकता, सिर्फ सारा संसार एक अजीब और बहुत बड़े जादू के करिश्मे-सा लगता।

दीदी ?

चौंक कर अचला ने पीछे देखा। जो लड़की एक दिन अपने को राक्षसी बता कर आरा स्टेशन में उतर गई थी, यह वही थी। समीप आकर अचला के उद्भ्रांत और बहुत ही श्रीहीन मुखड़े की ओर एक नजर रखकर मान करती हुई-सी बोली—अच्छा दीदी हर कोई तो यह देख रहे हैं कि सुरेश बाबू चंगे हो गए हैं, डाक्टर कह रहे हैं कि अब जरा भी डर नहीं, फिर भी रात दिन तुम्हारी यह मायूसी नहीं जाती यह क्या तुम्हारी ज्यादती नहीं? पति हमारे भी हैं, उन्हें कुछ होता-हवाता है तो हम भी फिक्र के मारे मर-सी जाती हैं मगर कसम ले लो, तुमसे उसकी तुलना ही नहीं हो सकती।

मुँह फेरकर अचला ने साँस ली, कोई जवाब नहीं दिया।

वह रूठकर बोली—हुँ! एक उसाँस ले ली, बस! कहकर देर तक जब अचला का कोई जवाब नहीं मिला तो उसका एक हाथ अपनी मुट्ठी में लेकर बड़े ही करुण ढंग से पूछा—अच्छा सुरमा दीदी, सच बताना हमारे घर तुम्हारा घड़ी भर भी मन नहीं टिक रहा है, है न? खूब तकलीफ हो रही है असुविधा न?

अचला जैसे नदी की ओर देख रही थी, देखती रही लेकिन अब की जवाब दिया, कहा—तुम्हारे ससुर ने मेरी जो भलाई की है वह क्या मैं जन्म भर भूलूँगी बहन!

वह हँसी। बोली—मैं जैसे भूलने के लिए ही तुम्हारे पीछे पड़ी हूँ! और दूसरे ही क्षण मीठे उलाहने के तौर पर बोली—शायद इसीलिए उस समय बाबूजी के उतना पुकारने पर भी जवाब नहीं दिया? तुमने सोचा, बुड्ढा जब-तब—

अचला ने बड़े अचरज से पलट कर कहा—नहीं, हर्गिज नहीं—।

राक्षसी ने जवाब दिया है हर्गिज नहीं! वह भी मैं अगर खुद गवाह न होती! मैं ठाकुर घर में थी। मैंने सुना सुरमा, सुरमा अरी ओ बिटिया सुरमा? चार-पाँच बार उन्होंने पुकारा तुम्हें। पूजा की तैयारी कर रही थी,

छोडकर लपकी। मैंने देखा वे सीढी से नीचे उतर रहे है। कसम सच कह रही हूँ।

इसे केवल अचला ने ही समझा कि बूढे की पुकार को उसके अनमने मन का दरवाजा ढूढे क्यो न मिला ? फिर भी लाज भरे पछतावा से वह चचल हो उठी। बोली—शायद कमरे म—

राक्षसी ने कहा—कहा का कमरा। जिनके लिए कमरा है, वे तो उस समय बाहर टहलने गए थे। मैंने आगन से साफ देखा, ठीक इसी तरह रेलिंग पकडे खडी। कहकर वह जरा थमी और हँसकर बोली—लेकिन तुम तो अपने मे थी नही बहन कि बूढे-ठेट की पुकार सुन पाती। जो सोच रही थी वह कहू तो—

अचला चुपचाप फिर नदी के उस पार देखने लगी—इन तानो का जवाब देने की कोशिश तक नही की। लेकिन यहा यह बात रखना जरूरी है कि राक्षसी नाम से उसकी जरा भी समानता न थी और नाम भी उसका राक्षसी नही, वीणापाणि था। पैदा होते ही मा मर गई थी, इसीलिए दादी ने यह अपवाद दिया था, जिसे वह सास ससुर, पडोसी से छिपा नही सकी थी।

अचला को एकाएक मुह फेरकर चुप हो जाते देखकर वह मन ही मन शर्मिदा हुई। अनुतप्त होकर बोली—अच्छा बहन, तुमसे जरा दिल्लगी करना भी मुहाल! मैं क्या जानती नही हूँ कि बाबूजी को तुम कितनी श्रद्धा भक्ति करती हो। उनसे ही तो मैंने सब कुछ सुना। टहल कर वे सबेरे लौट रहे थे और तुम रोती हुई डाक्टर की तलाश मे निकली थी। उसके बाद वे तुम्हारे साथ गए और सराय से तुम्हारे पति को लिवा लाए। यह सब भगवान् कृपा है दीदी, वरना तुम लोगो के चरणो की धूल भी कभी इस कुटिया पर पडेगी, उस दिन गाडी मे यह किसने सोचा था ? लेकिन मेरे सवाल का तो जवाब नही मिला। मैं पूछ रही थी कि यहा तुम्हें एक घडी भी अच्छा नही लग रहा है, यह मैं समझ गई हूँ। लेकिन क्यो ? यहा तुम्हे कौन सा कष्ट कौन-सी असुविधा हो रही है ? मैं सिर्फ यही जानना चाहती हूँ, कहकर पहले की ही तरह अब की भी जरा देर इतजार करके उसे लगा, जवाब का वह बेकार ही इतजार कर रही है। सो जिसे उसके ससुर ने जगह दी थी सुरमा दीदी कहकर उसने भी स्नेह किया था—उसका चेहरा अपनी ओर खीचते ही उसने देखा,

उसकी आखा के कोनो से चुपचाप आँसू वह रहा है, वीणापाणि स्तब्ध खडी रही और आचल स आसू पोछकर उसन अपनी सूनी निगाह दूसरी ओर फेर दी।

दूसरे दिन तीसरे पहर एक नए मामिक पत्र की कोई कहानी पढकर वीणापाणि अचला को सुना रही थी। बेत की कुर्सी पर अधलेटी अचला कुछ तो सुन रही थी और कुछ उसके कानो म कतई पहुँच ही नही रहा था—उस समय वीणापाणि के ससुर रामचरण लाहिडी 'बिटिया राक्षसी' कहते ऊपर आए। दोनो जनी झट उठकर खडी हो गइ, वीणापाणि ने बूढे के सामन एक कुर्सी खींचकर पूछा—क्या है बाबूजी ?

ये बूढे-बडे ही निष्ठावान् हिन्दू थे। उन्होने धीरे धीरे कुर्सी पर बठत हुए स्नेह से अचला की ओर देखते हुए कहा—एक बात कहनी है बिटिया। अभी अभी पुजारी जी आए थे। वे तुम पति पत्नी के नाम से सकल्प करके भगवान् को तुलसी चढा रहे थे, वह कल समाप्त होगा। सो कल तुमको कष्ट करके जरा देर तक बिना खाए रहना पडेगा। वे हमारे घर ही ठाकुर लेते आएँगे, तुम्हे कही जाना न पडेगा। सुनकर अचला का सारा चेहरा स्याह हो उठा—धुंधले प्रकाश मे यह बूढे को न दिखा, मगर वीणापाणि की नजर पडी। वह हिन्दू नारी थी, जन्म से उसी सस्कार मे पली और बीमार पति के कल्याण के लिए यह कितने उत्साह और आनन्द की बात है, इसे वह सस्कार जैसा ही समझती थी लेकिन अचला की शक्ल का ऐसा अजीब परिवतन देख उसके अचरज की सीमा न रही। फिर भी सखी के नाते पूछा—अच्छा बाबूजी, तुलसी तो आपने सुरेश बाबू के लिए चढवाई, तो फिर उन्हे उपवास न करा कर आप दीदी को क्यो कह रहे हैं ?

बूढे ने हँसकर कहा—वे और तुम्हारी दीदी क्या दो हैं बिटिया ? सुरेश बाबू तो इस दशा मे उपवास कर नही सकेंगे, सो तुम्हारी सुरमा दीदी को ही करना पडेगा। शास्त्र मे ऐसा नियम है, सोचने की बात नहीं।

इसके जवाब मे भी जब अचला हा-ना कुछ न बोली—तो उसकी वह निश्चेष्ट नीरवता शुभाकाक्षी बूढे के भी नजर म आई। उन्होन सीधे अचला की ओर देखत हुए पूछा—इसमे क्या तुम्हे कोई आपत्ति है बेटी ? कहकर उनके प्रतिवाद की आशा म देखते रहे।

अचला से अचानक इसका भी कोई जवाब देते न बना। जरा देर चुप

रहकर बोली—उन्ह कहने से खुद वही करें शायद। उसके बाद सभी चुप हो गए। यह बात कैसी अजीब सी, कितनी रूखी और सख्त सुनाई पडी, इसे कहने वाले के सिवाय शायद और किसी ने नही अनुभव किया। लेकिन अतर्यामी के सिवा और कोई उसे नही जान सका।

सूट न खडे होकर कहा—तो वही होगा और धीरे धीरे नीचे उतर गए। नौकर बत्ती दे गया, पर दोनो वसे ही सिमटी और झिझकी रही। मासिक पत्रिका की वैसी जानदार जोशीली कहानी का बचा हिस्सा पढने का उत्साह भी किसी म न रहा।

बाहर अधेरा गाढा होने लगा और उसी को चीरकर उस पर की बालका भूमि एक दूसरे छोर तक इन दो क्षुब्ध, मौन और लज्जित नारियो की आखो पर सपन-सी तरन लगी।

इस तरह भी काफी समय कट जाता, लेकिन जानें क्या सोचकर वीणा-पाणि एकाएक कुर्सी अचला के पास खीचकर लाई और अपना दाया हाथ सखी की गोदी म रखकर धीरे धीरे बोली—उस पार के चार को देखकर मेरे जी म क्या आ रहा था, जानती हो दीदी ? लग रहा था ठीक जसे तुम हो। जसे ठीक उसी तरह थोडे से अधेरे म लिपटी—अरे, ऐसे सिहर क्या उठी ?

अचला कुछ क्षण चुप रहकर बोली—एकाएक सर्दी-सी लग आई। वीणा-पाणि अदर गई। एक ऊनी चादर ले आई। भली तरह अचला के बदन को उससे ढककर अपनी जगह मे बैठकर बोली—तुमसे एक बात पूछने को बडा जी चाहता है दीदी, लेकिन कैसी तो शर्म आती है। नाराज न हो तो—

अजानी आशङ्का से अचला का कलेजा काप उठा—ज्यादा बोलने म गला न काँप उठे, इस भय से मुख्तसर में सिर्फ ना कहा—और स्थिर बैठी रही।

दुलार से उसकी हथेली को थोडा दबाकर वीणापाणि कहने लगी—अभी तो तुम मेरी दीदी हो, मैं तुम्हारी छोटी बहन हूँ मगर उस दिन गाडी मे तो मैं कोई नही होती थी, फिर तुमने अपना सही परिचय मुझसे छिपाना क्या चाहा था ? जो तुम्हारे पति थे, उनके लिए कहा कोई नही है, कहा—बीमार पति दूसरे डिब्बे में हैं, उन्ह लेकर जब्बलपुर जा रही हैं—लेकिन मुझे तुम ठग नही सकी। मैं ठीक पहचानती थी कि वे तुम्हारे कौन है। फिर तुमने बताया

कि तुम ब्राह्म हो—इसके बाद वह जरा हँसकर बोला—पर अब देखता हूँ, तुम्हारे देवता को जनेऊ देखकर विष्णुपुर के पाठक-ठाकुर लोग भी शर्मा सकते हैं। इतना झूठ क्यों बताया था भला ?

जबरदस्ती जरा सूखी हँसी हँसकर अचला बोली—यदि न बताऊँ ? वीणापाणि बोली—तो मैं ही बताऊँगी। मगर पहले यह कहो कि ठीक बता दूं तो क्या दोगी ।

अचला के कलेजे में लहू की रफ्तार बन्द होने की नौबत। उसके चेहरे पर मौत का जो पीलापन छा गया बत्ती की मद्धिम रोशनी में वह अचला को नजर आया या नहीं कहना कठिन है लेकिन होंठ दबाकर फिर जरा हँसती हुई वह बोली—अच्छा, कुछ दो या न दो मैं अगर सच बता दूं तो मुझे क्या खिलाओगी अचला दीदी ?

अचला का अपना नाम उसके कानों में आग की लपट सा समाया और उसके बाद से ही वह आधा होश में आधी बेहोश-सी सहन होकर बैठी रही।

वीणापाणि कहने लगी—हम दोनों बहनों का लेकिन उतना कसूर नहीं है, कसूर जो कुछ है, हमारे पति देवताओं का। एक ने बुखार की बदहोशी में तुम्हारा असली नाम कह दिया और दूसरे ने सोचकर तुम्हारा सही परिचय ढूंढ निकाला।

अचला ने जी-जान से अपने धड़कते कलेजे को संयत करके कहा—क्या है सही परिचय, सुनूं जरा ?

वीणापाणि बोली—सच हो या नहीं, उन्हें अक्ल है यह तुम्हें मानना ही पड़ेगा। एक रात आकर अचानक वे बोल उठे—अपनी अचला दीदी का रवैया मालूम है तुम्हें ? वे घर से भाग आई हैं। मैंने रंज होकर कहा—रखो भी चालाकी अपनी। दीदी कहीं सुन ले तो जिन्दगी भर तुम्हारी शक्ल नहीं देखेंगी।

अचला कुर्सी की मुट्ठियों से कसकर पकड़े बैठी रही।

वीणापाणि कहने लगी वे बोले—मेरी शक्ल चाहे वे देखें, चाहे न देखें, मगर मैं कसम खाकर कह सकती हूँ कि बात यह सच है। ननद-देवरानी से झगड़कर हो या सास ससुर से न पटने के कारण ही हो पति के साथ वे निकल पड़ी हैं। सुरेश बाबू का हाल देखकर तो लगता है तुम्हारी दीदी उन्हें समुद्र में

डूब मरने को कह दे, तो व नहीं कर सकते । घर, जहाँ भी हो, छिपकर दोनो जन रहेंगे, जब तक कि खोज ढूँढकर रो-पीटकर, मना मनूकर सास-ससुर-बेटे पानोह का न ले जाएँ । यही असली घटना न हो तो तुम मुर्ये—

मैंने कहा—अच्छा, वही सही, मगर गाडी म मुझ-जसी एक मूख अपरिचित स्त्री से झूठ बोलने की दीदी को क्या गरज पडी थी ? इस पर उन्होंने हँसकर जवाब दिया, तुम्हारी दीदी अगर तुम्हारी-जैसी अक्लमद होती, तो कोई गज न होती । लेकिन अक्लमन्द व बिल्कुल नही हैं । उन्होंने जस ही सुना कि तुम्हारा घर डिहरी मे है दो दिन के बाद तुम वही जाओगी, वैसी ही वे डिहरी के बदले जब्बलपुर यात्री अचला के बदले सुरमा और हिन्दू के बदले ब्राह्म बन गई । तुम्हारे दिमाग को यह नही सूझा राक्षसी कि जो टिकट कटाकर जब्बलपुर जा रहे थे, एकाएक गाडी बदल कर वे डिहरी क्यो जाने लगे और अपने बीमार पति को लेकर किसी बगाली के यहाँ न उतरकर इतनी दूर एक सराय मे क्या ठहरते ? कहते-कहते बगल म झुककर वीणापाणि ने उसका गला लपट लिया और स्नेह-प्रेम से गद्‌गद् हो उसके कान के पास मुह ले जाकर अस्फुट-स्वर मे कहा—बताओ न दीदी, हुआ क्या था ? मैं कभी किसी को कोई बात न बताऊँगी—तुम्हारा बदन छूकर कसम खाती हूँ ।

वीणापाणि की जबानी उनके बारे म सत्य आविष्कार का गलत इतिहास सुनकर अचला की देह मानो निर्जीव पत्थर के एक टुकडे-सी सखी के आलिंगन म लुढक पडी । जीवन की आखिरी शर्मिन्दगी एक-एक कदम बढाकर कहा आ पहुँची वह यही देख रही थी, लेकिन वह जब एकाएक अजीब ढङ्ग से मुँह फेरकर दूसरी ओर चली गई, उसे छुआ तक नही, तो इस इतने बडे सौभाग्य का ढो सकने की भी शक्ति उसे नही रही । आसू के अटूट प्रवाह के सिवा बडी दर तक उसमे जीवन का और कोई लक्षण नही दीखा ।

ऐसे कुछ समय कटा । वीणापाणि अपने दामन से रह-रहकर उसके आसू पोछकर स्नेह-सने स्वर से बोली—सुरमा दीदी, उम्र मे बडी होते हुए भी तुम छोटी बहन का कहना मानो दीदी, अब घर लौट जाओ । कहा मानो, यह यात्रा तुम्हारी अच्छी यात्रा नही । इतने-इतने कष्ट से सुहाग का सिंदूर जब बच गया, तो मान करके गुरुजनो का अब दु ख मत दो, उन्ह न रुलाओ । झुककर ससुराल लौट जान म कोई शम, कोई हेठी नही बहन ।

कुछ देर मौन रहकर वह फिर बोली—चुप हो ? नहीं जाओगी ? मा बाप से नाराज होकर घर से बाहर सुरेश बाबू ठीक नही रहते । तुम्हारे मुह से जाने की बात सुनकर वे खुश ही होंगे, यह मैं निश्चित कहती हूँ ।

आख पोछकर अचला अब सीधी बठी । देखा, वीणापाणि उसी उत्सुकता से उसकी ओर देख रही है । पहले तो जवाब देने म उसे बडी शर्म आने लगी, लेकिन चुप रह जाने से ही उससे पिंड नही छूट सकता, जब इस बात मे कोई सदेह नही रहा, तो जबदस्ती सब सकोच हटाकर वह बोली—हमारे घर लौटने का कोई उपाय नही है वीणा ।

वीणापाणि विश्वास न कर सकी । बोली, कोई उपाय नही ? तुम्ह मैं ज्यादा दिनो से जरूर नही जानती, परन्तु जितना जानती हूँ उससे समूची दुनिया के सामने खडी होकर कसम खाकर कह सकती हूँ कि तुम ऐसा काइ काम हर्गिज नही कर सकती दीदी, जिससे कोई तुम्हारा किसी तरफ का रास्ता बन्द कर सके । अच्छा, तुम अपनी ससुराल का पता बता दो परसो तो हम लोग घर जा ही रहे है बाबूजी को साथ लेकर तुम्हारे यहा जाऊँगी, देखती हूँ , वे मुझे क्या जवाब देते हैं । तुम्हारे सास ससुर मेरे भी वही हुए, उनके सामने खडी होने मे मुझे कोई शर्म नही ।

अचला ने चौंककर पूछा—परसो तुम लोग घर जा रहे हो, सुना तो नही ? यहा कौन कौन रहगे ?

कोई नही । सिर्फ नौकर दरवान घर की रखवाली करेंगे । मेरी जेठ सास बहुत दिनो से बीमार हैं, अब उनके जीने की आशा नही—उन्होने सबसे मिलने की इच्छा जाहिर की है ।

अचला ने पूछा—तुम्हारी ससुराल है कहाँ ?

वीणापाणि ने कहा—कलकत्ते म । पटल डागा ।

पटल डागा का नाम सुनकर अचला का मुह सूख गया । जरा देर चुप रह कर धीरे धीरे बोली—तब तो हमे भी कल ही यह घर छोडकर जाना पडेगा । यहा रहना तो न होगा अब ।

वीणापाणि हँस उठी । इसीलिए तुम्ह घर जाने को कह रही थी, क्या ? इतनी देर म मेरी बात का यह मतलब निकाला । तुमने ! नहीं नहीं मुझसे

कसूर हो गया, तुम्हें अब कभी वही जाने को न कहूँगी। जब तक जी चाहे, इस झोपडे में रहो, हममें से किसी को कोई एतराज नहीं।

मगर इस समय निमंत्रण का अचला कोई जवाब नहीं दे सकी। कुछ देर चुप रहकर बोली—सच ही क्या तुम लोगो का जाना तै हो गया है?

वीणापाणि बोली—हाँ। गाडी मे जगह तक रिजर्व हो गई। बाबूजी के कमरे में जाकर देखो जरा, देखोगी, प्रायः पन्द्रह आना सामान भी बँध चुका है।

नौकरानी दरवाजे के पास आकर बोली—बहूजी, माजी रसोई मे बुला रही हैं जरा।

आई—कहकर जरा हँसते हुए उसने फिर एक बार दोनो बाहो से अचला का गला लपटकर कानो में कहा—इतने दिन भीड भाड मे बडे कष्ट मे ही तुम लोगों के दिन बीते हैं। अब पूरा घर खाली—कोई कहीं नहीं, मैं बला भी टल रही हूँ—समझ गई न दीदी? और सखी के गाल पर दो उँगली का दबाव देकर दाई के पीछे तेजी से निकल गई।

खुशी का एक टुकडा, दक्खिनी बयार-सी वह सौभाग्यवती स्त्री धीरे-धीरे नजर से ओझल हो गई, लेकिन कानो मे कही उसकी दो बातो को दोनो कानो में डाले अचला वही बुत सी बैठी रही। आज की रात और कल का दिन भर बाकी। उसके बाद कोई रोक, रुकावट नहीं, इस सूनी नगरी मे—पास और दूर, जहाँ तक उसकी दृष्टि जाती—भविष्य के बीच आँख खोलकर देखा—अकेली वह और केवल सुरेश के सिवाय उसे कुछ भी दिखाई नहीं पडा।

## ३२

इस सूने घर में अकेले सुरेश को लेकर दिन बिताना पडेगा और वह बुरी साइत हर पल करीब ही होती आ रही थी। बाधा नहीं, रोक नहीं, लाज नहीं, जाग नहीं, कल का कोई बहाना करने तक का मौका नहीं मिलेगा।

वीणापाणि ने कहा था—सुरमा दीदी ससुराल अपना घर है, औरतो को वहाँ झुककर जाने में कोई शर्म नहीं।

कुछ देर मौन रहकर वह फिर बोली—चुप हो ? नहीं जाओगी ? माँ बाप से नाराज होकर घर से बाहर सुरेश बाबू ठीक नहीं रहते। तुम्हारे मुह से जाने की बात सुनकर वे खुश ही होंगे, यह मैं निश्चित कहती हूँ।

आख पोछकर अचला अब सीधी बठी। देखा वीणापाणि उसी उत्सुकता से उसकी ओर देख रही है। पहले तो जवाब देने म उसे बडी शम आन लगी, लेकिन चुप रह जाने से ही उससे पिंड नही छूट सकता, जब इस बात म कोई सदेह नही रहा, तो जबदस्ती सब सकोच हटाकर वह बोली—हमारे घर लौटने का कोई उपाय नही है वीणा।

वीणापाणि विश्वास न कर सकी। बोली, कोई उपाय नही ? तुम्ह मैं ज्यादा दिनो से जरूर नही जानती, परन्तु जितना जानती हूँ, उससे समूची दुनिया के सामने खडी होकर कसम खाकर कह सकती हूँ कि तुम ऐसा काइ काम हर्गिज नही कर सकती दीदी, जिससे कोई तुम्हारा किसी तरफ का रास्ता बन्द कर सके। अच्छा, तुम अपनी ससुराल का पता बता दो परसो तो हम लोग घर जा ही रहे हैं, बाबूजी को साथ लेकर तुम्हारे यहा जाऊँगी, देखती हूँ, वे मुझे क्या जवाब देते है। तुम्हारे सास ससुर मेरे भी वही हुए, उनके सामने खडी होने मे मुझे कोइ शम नही।

अचला ने चौंककर पूछा—परसो तुम लोग घर जा रहे हो, सुना तो नही ? यहाँ कौन-कौन रहेंगे ?

कोई नही। सिफ नौकर दरवान घर की रखवाली करेंगे। मेरी जेठ सास बहुत दिनो से बीमार हैं अब उनके जीने की आशा नही—उन्होंने सबसे मिलन की इच्छा जाहिर की है।

अचला ने पूछा—तुम्हारी ससुराल है कहा ?

वीणापाणि ने कहा—कलकत्ते मे। पटल डागा।

पटल डागा का नाम सुनकर अचला का मुह सू [illegible] । देर चुप रह कर धीरे धीरे बोली—तब तो हम भी कल ही यह [illegible] पडेगा। यहा रहना तो न होगा अब।

वीणापाणि हँस उठी। इसीलिए तुम्ह घर [illegible] थी, क्यो ? इतनी देर मे मेरी बात का यह मतलब निकाला [illegible] नहीं, मुझसे

कसूर हो गया, तुम्हें अब कभी कहीं जाने को न कहूँगी। जब तक जी चाहे, इस भोपडे मे रहो, हममे से किसी को कोई एतराज नही।

मगर इस समय निमत्रण का अचला कोई जवाब नहीं दे सकी। कुछ देर चुप रहकर बोली—सच ही क्या तुम लोगो का जाना तै हो गया है ?

वीणापाणि बोली—हा। गाडी मे जगह तक रिजव हो गई। बाबूजी के कमरे म भाक कर देखो जरा, देखोगी, प्राय पद्रह आना सामान भी बँध चुका है।

नौकरानी दरवाजे के पास आकर बोली—बहूजी, माजी रसोई म बुला रही हैं जरा।

आई—कहकर जरा हँसते हुए उसन फिर एक बार दोनो बाहो से अचला का गला लपटकर कानो म कहा—इतने दिन भीड भाड म बडे कष्ट मे हो तुम लोगो के दिन बीते हैं। अब पूरा घर खाली—कोई कही नहीं, मैं बला भी टल रही हूँ—समझ गई न दीदी ? और सखी के गाल पर दो उँगली का दबाव देकर दाई के पीछे तेजी से निकल गई।

खुशी का एक टुकडा, दक्खिनी बयार सी वह सौभाग्यवती स्त्री धीरे-धीरे नजर से ओझल हो गई, लेकिन कानो म कही उसकी दो बातो को दोनो कानो म डाले अचला वही बुत-सी बैठी रही। आज की रात और कल का दिन भर बाकी। उसके बाद कोई रोक रुकावट नही, इस सूनी नगरी म—पास और दूर, जहा तक उसकी दृष्टि जाती—भविष्य के बीच आख खोलकर देखा—अकेली वह और केवल सुरेश के सिवाय उसे कुछ भी दिखाई नहीं पडा।

## ३२

इस सूने घर मे अकेले सुरेश को लेकर दिन बिताना पडेगा और वह बुरी साइत हर पल करीब ही होती आ रही थी। बाधा नही, रोक नही, लाज नहा, जाग नही, बल का कोई बहाना करने तक का मौका नही मिलेगा।

वीणापाणि न कहा था—सुरमा दीदी, ससुराल अपना घर है, औरतो को वहाँ झुककर जाने मे कोइ शम नही।

हाय रे हाय ! उसके कौन है और क्या नही है, इसका लेखा अतयामी के सिवा और किसने रक्खा है ! फिर भी उसके पति आज भी हैं और अपना कहने को वह जला हुआ घर अभी धरती की गोद मे मटियामेट नही हुआ है। आज भी वह पल भर के लिए उसमे जाकर खडी हो सकती है !

अंध जानवर की आखो पर से जब तक बाहर का यह फाक एकबारगी ढक नही जाता, तब तक जसे वह एक ही जगह म सिर पीट पीटकर मरता रहता है वैस ही उसके वरोब मन की उदग्र कामना उसके कलेजे मे हा हा करती हुई निकल बाहर होने की राह ढूढती हुई घुटन लगी। पास के कमरे मे सुरेश निश्चित सो रहा था। बीच का दरवाजा थोडा सा खुला और उर्मा क इस तरफ फश पर चटाइ डाल कर एडी से चोटी तक कम्बल ओढे नौकरानी सो रही थी। घर भर म किसी के भी जगन का कोइ आभास नही—केवल वही माना आग की सेज पर दहकती रही। दिनो तक इसी पलग पर उसके बगल म वीणापाणि सोती रही पर आज उसके पति यही थे, वह अपने कमरे मे सोने गई थी और कही ऐसी चिन्ता का छोर पकड कर अपना दुखी और उद्भ्रात मन सहसा उ ही के कमर क पयक के प्रति हिसा, अपमान लज्जा के अणु परमाणु मे चूर चूर हो दम तोडे, इस डर स उसन अपने आपको जोर-जबदस्ती खीचकर लौटाया लेकिन तुरत उसका सारा शरीर बिजली छू जाने जैसा थरथर कापने लगा।

बगल के किसी कमरे की घडी मे दो बजे। बदन पर की ऊनी चादर को हटाते ही उसन अनुभव किया, इस जाडे की रात मे भी उसके कपाल पर, मुँह पर बूद-बूद पसीना जमा है। सो उसने सिरहाने की खिडकी खोल दी। देखा—अँधियारे पाख की आठवी का चाद ठीक सामने ही उगा है और उसी की कोमल किरणा से सान नदी का नीला पानी बडी दूर तक चमक उठा है। गहरी रात की ठण्डी हवा ने उसके गम ललाट को सहला दिया और वह वही उस खिडकी के सामन अपने भाग्य की अंतिम समस्या को लेकर बठ गई।

अचला की निश्चित धारणा हो गई थी कि उसके शापित अभाग जीवन का जो-कुछ सत्य है, लोगो का सारा-का सारा एक अद्भुत उपन्यास सा लगेगा। जिस रोज से इस कहानी की शुरुआत हुई तब से जीवन म जितने झूठ ने सत्य का नकाब डालकर झमक दिखाई है, उनम स एक एक को याद करके

क्रोध, क्षोभ और मान से भाग्य विधाता ने उसकी जवानी के पहने आनन्द को मिथ्या से ऐसा विगाड कर, ऐसे मजाक की चीज बनाकर ससार के सामने उघार देने में कोई हिचक नहीं दिखाई, उस बेरहम वदद को वचपन से अगर भगवान् कहने की उसने शिक्षा पाई है, तो वह शिक्षा उसकी बेकार गई, बिल्कुल बेईमानी हुई। वह आखें पोछते हुए बारम्बार कहने लगी—हे ईश्वर, तुम्हारे इतने बडे विश्व ब्रह्माड में इस अभागिनी के जीवन को छोड कर कौतुक करने को और क्या खाक कुछ नही मिला!

मन ही मन बोली—कहा थी मैं और कहा था सुरेश। ब्राह्म की छाया छून में भी जिसकी घृणा और द्वेष का अ त नहीं था किस्मत के खेल मे आज उसी की आशक्ति का आदि-अन्त बन रहा। जिसे उसने कभी प्यार नहीं किया वही उसका प्राणोपम है, सिर्फ इसी झूठ को लागो न जाना? और जो सत्य है, उसे कही किसी के पास जगह न मिली? और इस झूठ को उसी के मुँह से प्रचार कराने की जरूरत थी? अदृष्ट की इतनी बडी विडबना कब किसके नसीब मे घटी? पति को उसने बडे दुःख में पाया था, मगर वह बर्दाश्त न हुआ—उसके चरम दुर्भाग्य की गठरी लिए सुरेश अभिशाप की नाई उसके गाव में जाकर हाजिर हुआ। उसके सुख का बसेरा जलकर खाक हो गया और उसी के साथ उसकी तकदीर भी जलकर भस्म हो गई, इस बात में जब कोई शुबहा ही न रहा, तो फिर उसके बीमार पति को उसी की गोद में डाल दिया गया जिसे वह एकबारगी खोने को थी, सेवा में पूर्णतया उसे लौटा देने का ही सकल्प अगर विधाता का था, तो फिर उसकी दुःख दुर्दशा, ग्लानि अपमान का अन्त क्या नहीं?

दोनों हाथ जोडकर अचला रुँधे स्वर मे कहने लगी—जगदीश्वर, रोग-मुक्त पति के आशीर्वाद से सभी अपराधों का प्रायश्चित हो चुका, अगर मुझे यही विश्वास करने दिया था तो फिर इस इतनी बडी दुर्गत में क्यों ढकेल दिया? उसने सकोच नहीं माना, इतनी इतनी हरकता के बाद भी उसने सुरेश को साथ जाने का आमत्रित किया, दुनिया में इस कसूर के मिटने का उपाय नहीं कलङ्क की यह कालिमा नहीं मिटने की—मगर मेरे अन्तर्यामी, मेरे भाग्य के तुमने भी क्या भूल समझा? कलेजे के अन्दर क्या है, वह क्या दिखाई ही नहीं दिया तुम्हें?

पिता की चिंता पति की चिंता को वह जी जान से मानो ठेलकर हटा दिया करती थी, आज भी चिंता का उसने पास नहीं फटकने दिया, किंतु उसे मृणाल की बात याद आई, फूफी की याद आई याद आया आन के वक्त सती-साध्वी कहकर उनका आशीर्वाद देना। उसके सम्बन्ध मे उनके मनाभाव की कल्पना करते हुए अकस्मात् मार्मिक आघात पाकर देर के लिए उसका ज्ञान मानो खो गया और देहमन की उस अवश-बेबस दशा म खिडकी पर माथा रखे अजानते ही उसकी आखा स आँसू बह रहा था ऐसे वक्त पीछे पैरो की हल्की आहट हुई। अचला न मुडकर देखा, खाली बदन, नग पाव सुरेश आकर खडा है। आकस्मिक उत्तेजना स वह कुछ कहन जा रही थी, लेकिन गला रुँध गया। उसे दमन करने की उसकी इच्छा न हुई और मुँह फेरकर तुरत उसन फिर उसी तरह खिडकी पर सर रख लिया, लेकिन जो आसू अब तक बूद बूद टपक रहा था उसका बाध मानो टूट गया और एक पतली धारा सी फूट निकली।

कही कोई शब्द नही। घर के भीतर बाहर रात की गहरी नीरवता छा रही थी। पीछे पत्थर की मूरत सा चुप खडा सुरेश, सहसा उसका शरीर पत्ते की तरह कापने लगा और लमहे मे उसन दोनो हाथ बढाकर अचला का माथा अपनी छाती म खीच लिया।

अपने को उससे छुडाकर अचला न आखे पोछी लेकिन सबस बडे अचरज की बात यह कि जो आदमी उसकी इतनी बडी दुर्गत की जड था, उसके इस व्यवहार से अचला को तीखी नफरत हुइ बल्कि धीमे से कहा—तुम इस कमरे मे क्यो आए?

सुरेश चुप रहा। शायद उसकी आवाज ही न निकली। अचला न धीरे-धीरे खिडकी बन्द कर दी। बोली—सर्दी से तुम्हारा हाथ काप रहा है नगे खडे मत रहो—अदर जाकर सो रहो।

सुरेश की आखे जल उठी, लेकिन उसकी आवाज कापने लगी—अचला का हाथ अपने हाथ म खीचकर अस्फुट स्वर म बोला—तो तुम भी मेरे कमरे मे चलो।

अचला जरा देर अवाक् विस्मय स उसके मुह की ओर ताकती रहकर सिर्फ बोली—नहीं, आज नही। और, धीरे धीरे उसन अपना हाथ छुडा लिया।

इस शान्त और सयत ठुकराहट म क्या था ठीक-ठीक समझ न पाने के कारण सुरेश चुपचाप खडा रहा। अचला उसकी ओर देखे बिना ही बोली—क्या तुम यह जानकर इस कमरे म आए कि मैं जाग रही हूँ ?

सुरेश ने चोट खाए हुए की तरह कहा—और क्या तुम्हें कोई समझकर आया हूँ, यह ख्याल है तुम्हारा ?

ख्याल ? अचला मुह फेरकर जरा हँसी। यह तीखी और सख्त हँसी धुँधली जोत मे भी सुरेश की नजर स न बच सकी। उस हँसी ने मानो साफ शब्दो म उससे कहा—अरे कायर। कोई स्त्री के कमरे म चोर सरीखा घुसना नहीं चाहिए, पुरुष के इस महत्व का तुम आज भी दावा करते हो ? लेकिन वह बोली कुछ नही। थोडी देर म झरोखे से हटाकर खडी होती हुई धीरे धीरे बोली तुम्हारी तबियत ठीक नहीं, ज्यादा जगो मत, सो जाओ जाकर। कहकर वह अपने बिस्तर पर जाकर सिर से पाँव तक कम्बल ओढकर सो गयी।

सुरेश कुछ देर तक पगु सा वही खडा रहा और फिर धीरे धीरे अपने कमरे म चला गया।

---

पाच छ दिन हुए दो दिन नौकर-नौकरानियों के अलावा सब कलकत्ता चले गए। एक मकान-मालिक नही गए। जरूरी काम के चलते वक्त जाते-जाते वे न जा सके। इन कै दिनो तक रामचरण बाबू अपने काम मे व्यस्त रहे, खास नजर नही आते वैसा। आज पहले सुबह ही एकाएक वे ऊपर के कमरे म आ पहुँचे और सुरमा का नाम लेकर पुकारने लगे। सर्दियो का सवेरा, अब तक कोई जगा न था, पुकार सुनकर अचला हडबडाकर बाहर निकली और सुरेश भी दूसरे दरवाजे से आँखें मलता हुआ आया। दोनो जनो को दो अलग-अलग कमरे से निकलते देख बूढे की प्रसन्न दृष्टि अचानक सदिग्ध हो उठी, इसे सुरेश ने नही देखा, लेकिन अचला ताड गई।

वक्त ही कहूँगा। वही सबसे बढ़कर वास्तविक कहना होगा। कहकर बूढ़े जाने लगे कि अचला व्यस्त हो उठी। क्या बोले—आगा-पीछा करते-करते जो बात पहने जबान पर आई वही बोल उठी। कहा—मैं तो पकाना वैसा जानती नहीं, मेरे हाथ की रसोई आपको पसद नहीं आएगी।

पलटकर रामबाबू जरा हँसे। बोले—तुम मुझे इसी पर यकीन करने को कहती हो ?

अचला ने कहा—हर कोई क्या बढ़िया पकाना जानती है।

वे बोले—सभी जानते हैं मैं क्या यही कह रहा हूँ ?

अचला हठात् इसका कोई जवाब न पाकर चुप रही। लेकिन सुरेश के लिए वहा खडा रहना असम्भव हो उठा। अचला के फीके पड़े चेहरे की तरफ ताक कर उसने उसकी पीडा समझी। इस बूढ़ सज्जन का आचरण भला हो या बुरा, सच हो या झूठ उन्ह पका कर खिलाने म जो घिनौनी ठगी है, यह बात अचला से अगोचर नही और इस भली औरत का विवेक किसी भी हालत मे गुप्त रहस्य के कुकम से अपने को छुटकारा नही देना चाहता, उसके चेहरे पर यह भाव साफ देखकर वह और किसी ओर देखे बिना मुँह हाथ धोने के बहाने जल्दी जल्दी सीढी से नीचे उतर गया—

तो मैं चलूँ—कहकर रामचरण बाबू भी सुरेश के पीछे हो लिए। अचला कुछ देर हक्की बक्की सी खडी रही, उसके बाद अपने को सचेतन करके जोर से आवाज दी, जरा सुनिए—

बूढ़े ने मुडकर देखा—अचला कुछ कहना चाहती है, मगर नजर झुकाए चुपचाप खडी है। सो वे कुछ कदम आगे बढ आए। बोले—एक बात और कहनी है बिटिया। जब तुम्हारी हिचक जाना ही नही चाहती तो—जानती हो सुरमा बचपन म मैं मुहल्ले भर का मझले भया था। शायद हो कि तुम्हारे पिता स उम्र मे मैं छोटा भी न होऊँ। फिर तुम मुझे बडे चाचा क्यो नहीं कहती ?

अचला जानती थी कि बूढ़े उसे बहुत स्नेह करते हैं, प्यार के इस प्रकट रूप से उसकी आखो के कोने मे आसू छलक पडा। इसलिए सिर हिलाकर उसने केवल हामी भरी।

उन्होने पूछा—और कुछ कहोगे ?

सुरेश की ओर देखते हुए रामबाबू ने दुःखी के स्वर में कहा—असमय में आपकी नींद तोड़ दी, बड़ी भूल हो गई मुझ से।

सुरेश ने हँसकर कहा—गलती क्या! असल में मैं जाग ही रहा था वरना ढोल पीटकर भी मेरी नींद तोड़ सके, क्या मजाल! पर इतना सवेरे?

बूढ़े ने अचला को सम्बोधन करके कहा—आज सुरमा बिटिया पर कुछ उपद्रव करने की जरूरत आ पड़ी है—यह कहकर जरा हँसते हुए उसकी ओर मुखातिब होकर बोले—मेरी खटोली हाजिर है, मुझे तुरत बाहर जाना है, दो तीन बजे से पहले लौट न सकूँ शायद, सो थोड़ा दाल चावल उबालकर रख लेना बिटिया—उतनी देर को जिसमें आकर मुझे चूल्हा चक्की न करना पड़े।

कट्टर धार्मिक ये ब्राह्मण अपनी स्त्री और पतोहू के सिवा और किसी के हाथ का बना भोजन नहीं खाते। उनकी रसोई भी बिल्कुल अलग थी। यहाँ तक कि हर कोई उसमें जा तक नहीं सकता था, खुद बीच-बीच में बना लेने की उन्हें आदत थी जभी घर की औरतें कलकत्ता जा पाई थीं। इन कई दिनों तक वे वही करते रहे थे, पर आज एकाएक इस अपरिचित स्त्री पर यह भार देने से वह अचरज और सबसे ज्यादा डर से अभिभूत हो गई।

अचला के उदास चेहरे को देखकर रामबाबू ने कहा—तुम सोच रही हो आखिर यह बुड्ढा आज कह क्या रहा है। रसोई के मामले में इतना परहेज इतना विचार रखता है, उसे आज यह हो क्या गया? तुम्हारे हाथ के भोजन से अरुचि क्या होगी? और हाँ, न हो, उतनी देर से लौटकर चूल्हा फूँकने को जी नहीं चाहता। इतना कहकर अचला के मौन मुखड़े को जरा देर देखकर फिर हँसते हुए बोले मन ही मन तुम जरूर सोच रही हो कि इस बुड्ढे में अचानक इतनी उदारता जब आ ही गई है, तो मुझे तकलीफ न देकर उस रसोइये के हाथ का खाने से ही तो चल जाता। नहीं बिटिया वह नहीं चलता। इस बुड्ढे में आज भी यही कट्टरता है, यही कुसंस्कार है—मर भी जाऊँ तो सन्ध्या-गायत्री न करने वाले उस रसोइये के हाथ का अन्न मेरे गले से नहीं पार हो सकता। फिर, बिटिया राक्षसी और तुमको इस बीच मैंने एक ही मान लिया है, यह भी नहीं, पर जितना सोचता हूँ मुझे लगता है, यह बिटिया भी एक दिन रांध दे तो वह मेरी अन्नपूर्णा का अन्न न होगा यह मैं हर्गिज नहीं मानता। मगर अब तो रह नहीं सकता, कहने को जो बाकी रह गया, रात

वक्त ही कहूँगा। वही सबसे बढ़कर वास्तविक कहना होगा। कहकर बूढ़े जाने लगे कि अचला व्यस्त हो उठी। क्या बोले—आगा-पीछा करते-करते जो बात पहले जबान पर आई, वही बोल उठी। कहा—मैं तो पकाना वैसा जानती नहीं, मेरे हाथ की रसोई आपको पसंद नहीं आएगी।

पलटकर रामबाबू जरा हँसे। बोले—तुम मुझे इसी पर यकीन करने को कहती हो?

अचला ने कहा—हर कोई क्या बढ़िया पकाना जानती है।

वे बोले—सभी जानते हैं, मैं क्या यही कह रहा हूँ?

अचला हठात् इसका कोई जवाब न पाकर चुप रही। लेकिन सुरेश के लिए वहां खड़ा रहना असम्भव हो उठा। अचला के फीके पड़े चेहरे की तरफ ताक कर उसने उसकी पीड़ा समझी। इस वृद्ध सज्जन का आचरण भला हो या बुरा, सच हो या झूठ, उन्हें पका कर खिलाने में जो घिनौनी ठगी है, यह बात अचला से अगोचर नहीं और इस भली औरत का विवेक किसी भी हालत में गुप्त रहस्य के कुकर्म से अपने को छुटकारा नहीं देना चाहता, उसके चेहरे पर यह भाव साफ देखकर वह और किसी ओर देखे बिना मुँह हाथ धोने के बहाने जल्दी जल्दी सीढ़ी से नीचे उतर गया—

तो मैं चलूँ—कहकर रामचरण बाबू भी सुरेश के पीछे हो लिए। अचला कुछ देर हक्की बक्की-सी खड़ी रही, उसके बाद अपने को सचेतन करके जोर से आवाज दी, जरा सुनिए—

बूढ़े ने मुड़कर देखा—अचला कुछ कहना चाहती है, मगर नजर झुकाए चुपचाप खड़ी है। सो वे कुछ कदम आगे बढ़ आए। बोले—एक बात और कहनी है बिटिया। जब तुम्हारी हिचक जाना ही नहीं चाहती, तो—जानती हो सुरमा बचपन में मैं मुहल्ले भर का मझले भैया था। शायद हो कि तुम्हारे पिता से उम्र में मैं छोटा भी न होऊँ। फिर तुम मुझे बड़े चाचा क्यों नहीं कहती?

अचला जानती थी कि बूढ़े उसे बहुत स्नेह करते हैं, प्यार के इस प्रकट रूप से उसकी आँखों के कोने में आंसू झलक पड़ा। इसलिए सिर हिलाकर उसने केवल हामी भरी।

उन्होंने पूछा—और कुछ कहोगे?

अचला जरा देर जमीन देखती रही, उसके बाद शायद सारी शक्ति बटोरकर अस्फुट स्वर में कहा—मेरे पिताजी लेकिन ब्राह्म थे।

रामचरण बाबू सहसा चौंककर उठे। वास्तव में कलकत्ता में लोग जैसे शौकिया दो दिन के लिए बन जाते हैं? उस लोग ब्राह्मो के साथ बैठ छूकर हिन्दुओं को गालियाँ देते हैं—ऐसी गाली सच्चे ब्राह्म कभी जबान पर भी नहीं ला सकते—और उसके बाद अपने घर वापस जाकर अपने समाज में ब्राह्मों को वैसी ही खरी खोटी सुनाते हैं—ऐसी कि वैसे वचन हिन्दुओं ने सात पुश्त भी नहीं सुना सकते! ऐसे ही ब्राह्म न? ऐसे हों तो मुझे जरा भी आपत्ति नहीं।

अचला का चेहरा शर्म से रंग गया। वह बोली—नहीं सच्चे ब्राह्म।

जवाब से बूढ़े जरा परेशानी में पड़ गए। जरा देर में बोले—ब्राह्म ही हुए तो क्या? उनकी लड़की तो आखिर श्वापद नहीं कि डरें। बल्कि जिसके धर्म में तुमने हाथ बँटाया है वे जब हिन्दू हैं, जब उनके गले में यज्ञोपवीत है और इन कुछ धागों का आज तक उन्होंने अपमान नहीं किया है तो बाप दादा क्या तुम्हें नहीं छू सकता। आज तुम जितने ही मनसूबे गाँठो बूढ़े चचा से निकल नहीं सकती। रसोई आज तुम्हें करनी ही पड़ेगी। ओ! कभी पिता के पढ़ाए पाठ के नाते उस दिन तुमने उपवास से कैसी कटाई? आज इस सूद समेत वसूल कर तब तुम्हारी जान छोडूंगा। रामबाबू फिर जाने को हुए। अचला अपनी उस जड़ता को जीत गई। पूछा—अच्छा बड़े चाचाजी मैं ब्राह्म होऊँ तो आप मेरे हाथ का नहीं खाएँगे?

बूढ़े ने कहा—नहीं। मगर तुम तो वह हो नहीं, हो नहीं सकती।

अचला ने पूछा—लेकिन वही होती तो मैं सिर्फ इसीलिए आपके लिए अछूत हो जाती कि मेरा धर्ममत अलग है?

उन्होंने कहा—अछूत क्यों होने लगी बिटिया, अछूत नहीं होती। तुम्हारे हाथ का खाता नहीं बस।

इसके बारे में आज उसे बहुत कुछ जानना था। इसी से वह चुप नहीं रह सकी। बोली—क्यों नहीं खाते? घृणा से?

बूढ़े से कोई जवाब देते न बना एकटक उसे देखते रह गए।

अचला सारा संकोच छोड़ चुकी थी। बोली—बड़े चाचाजी आपकी दयामाया कितनी बड़ी है। इसके बहुत से सबूत दुनिया में हैं जानती हूँ मैं

मगर उसका हमसे बडा सबूत कोई नही। लेकिन आप जैसे का हृदय इतना अनुदार कैसे हो सकता है, मैं सोच नही पाती। आप मनुष्य को इस तरह घृणा कम कर सकते हैं ?

रामबाबू अचानक अकुलाकर बोले—मैं घृणा करता हूँ। किसे ? कब ? अचला ने कहा—जिसके हाथ का छुआ आपके लिए अस्पृश्य है, वही आपकी घृणा का पात्र है। मन मे आप उसी का घृणा करते हैं। लेकिन जमाने की आदत है, इसलिए यह भी नही पता है कि घृणा करते हैं। नौकरी को छोडिए, पाठकजी का पकाया भी आपके गले से नीचे नही उतर सकता, आप खुद कह चुके हैं। इससे मुल्क का कितना बडा नुकसान, कितनी अवनति हुई है, यह सो—

रामबाबू चुपचाप सुन रहे थे, अचला के जोश को भी गौर कर रहे थे। उसका कहना जब खत्म हुआ, तो बोले—घृणा हम किसी को नही करते बिटिया। जो नालिश तुमने की, यह नालिश साहब लाग करते है—उनसे तुम्हारे पिता न सीखा और अपने पिता से तुमने सीखा। नही तो मनुष्य भग-वान् है, यह ज्ञान केवल उन्ही को नही, हम भी या आज भी है।

इतने मे नीचे कुछ शोर-गुल सा सुनाई पडा, एक पल उधर ध्यान देकर उन्होने कहा—सुरमा, जिनके लिए खाना बहुत बडी चीज है, बडे तूल कलाम की बात है, उनसे अपना मेल नही बठ सकता। हमारे यहा यह खाना बडी मामूली चीज है—आज जरा इसका इतजाम कर रखना, फिर खाते खाते बात होगी कि घृणा हम किसम कितनी करते है और उससे देश की कितनी अवनति हुई—लेकिन शोरगुल बढ रहा है—मैं अब चला। कहकर वे जरा तजी से उतर गए।

## ३४

तीसरे पहर के करीब जब खाकर तृप्ति की डकार लेते हुए रामबाबू उठने लगे तो बडे कष्ट मे हलका हँसकर अचला ने कहा—लेकिन चाचाजी जिस

दिन आप जानेंगे कि आज आपकी जात गई, उस दिन आप मुझ पर नाराज न होने पाएँगे लेकिन।

रामबाबू ने मीठा हँसकर गर्दन हिलाते हुए कहा—अच्छा अच्छा, वही होगा बिटिया—और वे हाथ धोने चले गए। उनके खड़ाऊँ की खटखट जब तक सुनाई देती रही अचला सम्पूर्ण दृष्टि से तब तक मानो उसी का अनुसरण करती रही, कब यह आवाज खो गई, कब बाहरी दुनिया ने उसकी चेतना से लुप्त होकर उसे पत्थर बना दिया, उसे इसकी खाक भी खबर न हुई।

बहुत दिनों से यहां काम करने वाली इधर की नौकरानी बंगालियों के तौर तरीके के साथ साथ कुछ कुछ बंगला भी सीख गई थी। वह किसी काम से इधर आई तो बहूजी के बैठने के ढंग से दंग रह गई। बड़ी होने के नाते अधसीखी बङ्गला की डांट के शब्द का इस्तेमाल करके बेला की ओर अचला का ध्यान दिलाते हुए पूछा—आज खाने-पीने का भी काम होगा कि यों ही चुपचाप बैठे रहने से काम चल जायगा?

चौंककर अचला ने देखा—बेला जाती रही थी। सांझ हो चली थी। एक चमकहीन मैलापन थकावट जैसा तमाम आसमान में फैल गया था, वह शरमाकर उठ खड़ी हुई और बोली—मैंने तो शाम के बाद ही खाने की सोची है लालू की मां। आज भूख प्यास बिल्कुल नहीं है।

लालू की मां हैरान होकर बोली—अभी अभी तो कहा था बहूजी कि बड़े बाबू खा लें तब तुम खाओगी।

न—एकबारगी रात को ही खाऊँगी—कहकर तर्क का मौका न देकर अचला जल्दी से ऊपर चली गई।

थोड़ा-सा समय मिलता कि वह रेलिंग के पास कुर्सी खींचकर चुपचाप नदी की ओर देखा करती। आज रात भी वैसे ही बैठी थी, अचानक रामबाबू के चप्पलों की आहट से उसने मुड़कर देखा—वे बिल्कुल बीच में आ खड़े हुए थे और कुछ कहने से पहले ही नारियल को एक ओर टिकाकर एक कुर्सी खींचकर बैठ गए। जरा हँसकर बोले—आज उसी बात का फैसला करने आया हूँ सुरमा—तुम्हारे ब्रह्मज्ञानी पिताजी ठीक हैं कि इस बूढ़े चाचा की बात ठीक है—इसका आज कोई हल निकाले बिना नीचे नहीं जाता।

अचला समझ गई, यह सवाल जाति भेद वाला है। थकी हुई आवाज में बोली—तर्क भला मैं क्या जानती हूँ चाचाजी !

रामबाबू ने सिर हिलाकर कहा—अरे बाप रे ! तुम किसी मामूली आदमी की बेटी हो ! लेकिन बात झूठी है, यही गनीमत है, नहीं तो उस समय तो मैं हार ही जाता।

किसी बात पर तर्क करने लायक मन की अवस्था अचला की न थी। इस तर्क-युद्ध से छुटकारा पाने का जरा-सा मौका पाकर बोली—तो फिर तर्क की क्या पड़ी है चाचाजी ! आप ही की तो जीत हुई। जरा रुककर बोला—जो हार चुकी उसे दुबारा हराने से क्या लाभ ?

रामबाबू ने तुरत कोई जवाब नहीं दिया। उम्रवाले आदमी ठहरे, दुनिया में उन्होंने बहुत-कुछ देखा है। लिहाजा इस सिमटी आवाज का मर्म भी जैसे उनसे छिपा न रहा, वैसे ही उसके थके पीले चेहरे पर इसकी छाप भी वे साफ देख पाए कि यह लड़की सुखी नहीं है, कोई एक पीड़ा चिमनी की आग-सी रात दिन उसके अन्दर जल रही है। वे जरा देर चुप रहे और हँसने की कोशिश करते हुए स्नेह से बोले—न, बहाना न चला। बूढ़ा आदमी, बकबक करना अच्छा लगता है, सांझ को अकेले दम घुटने लगता है, इसीलिए सोचा कि झूठ सच कहकर बिटिया को जरा चिढ़ा दूं, मगर कलई खुल गई। झुककर उन्होंने हुक्के के लिए हाथ बढ़ाया।

अचला समझ गई कि वे जाने की तैयारी कर रहे हैं और नीचे जाकर मुश्किल से ही इनका समय कटेगा, यह समझकर उसका मन दुःखी हो गया। सो वह खुद उठी और अपने से हुक्का उनकी तरफ बढ़ाते हुए बोली, जी चाहे आप जितना तम्बाखू यहां बैठकर पिएँ। मगर अभी मैं आपको जाने नहीं दूंगी।

हुक्का हाथ में लेकर वे बोले—लगाम इतनी ढीली मत करो बिटिया, अंत तक सम्हाल नहीं सकोगी। मुंह बन्द किए मेरा तम्बाखू पीना तो तुमने देखा ही नहीं है। उससे बल्कि कुछ कहने सुनने दो—

ताकि दम न घुट जाय, हूँ न बड़े चचाजी। खैर, ठीक है। मगर बकबक होगी काहे पर ?

रामबाबू ने मुंह का धुआं ऊपर की ओर छोड़ते हुए कहा—यही तो

मुसीबत कर दी तुमने। महावक्ता से यह पूछने पर उसकी जवान जो वन्द हो आती है।

उच्छा, चाचाजी कभी अगर आपको यह मालूम हो कि आज जबदस्ती जिस का पकाया भात खाया है, उसके जसी नीच, घृणित, इस दुनिया म कोई नहीं, तो क्या करेंग आप ? प्रायश्चित ? और कही शास्त्र में उसकी विधि ही न हो, तो ?

रामबाबू बोले—फिर तो बला ही चुक गई! प्रायश्चित करना ही नही पडेगा।

मगर तब मुझ पर कितनी घृणा होगी आपको ?

कब ?

जब पता चलेगा कि मेरी कोई जात ही नही।

हाठ से हुक्का हटाकर उस मद्धिम रोशनी मे ही कुछ देर तक उसे देखकर रामबाबू धीरे धीर बोले—तुम सबकी यही बात मैं किसी भी तरह समम नही पाता। तुम सबकी क्यो कहता हूँ—जानती हो सुरमा ? अपने लडके के मुह से भी यह नालिश सुनी है मैंन। वह तो खोलकर ही कहता है कि इस छूत छात के भूत से ही तो देश धीरे धीरे रसातल को जा रहा है। क्योकि इसकी जड मे घृणा है और घृणा का कभी अच्छा परिणाम नही होता।

अचला मन ही मन बहुत चकित हुई। उसकी यह धारणा ही नही थी कि किसी भी बहान इस घर म इस आलोचना का प्रवश हो सकता है। बोली—बात क्या झूठी है ?

रामबाबू जरा हँसकर बोले—झूठ है या नही, मान लो यह न कहूँ परन्तु सच नही है। शास्त्र के कानून-कायदो पर चलता हूँ, बस, इतना ही। जा इससे भी आगे जाते हैं, मसलन मर गुरुदेव, व खुद स पकाकर खाते हैं। लडकी तक को नही छून देते।

अचला जवाब न द सकी। चुप रही।

रामबाबू न हुक्के म और दो चार दम लगाये। लगाकर वाले—जवानी मे मैं बहुत घूमा। कितन वन-जगल, पवत-पहाड और कैसे-कैसे लोग, कितन तरह के आचार विचार, उन सबका नाम शायद तुम लोगों को मालूम न हो—कहीं खान-पान का विचार है, कहीं उसकी बू बास भी नहीं, फिर भी सदा

वस ही अमभ्य हैं, उतन ही छोटे। यह कहकर जले तवाखू म वेकार ही और दो चार कश लगाया और अन्त मे खमे से उमे टिका दिया। अचला जसी चुप वठी थी, वठी रही।

रामवाबू स्वय भी जरा देर चुप रह फिर सीधे वैठकर बोले—असली बात क्या है जानती हो सुरमा, तुम लोगो न साहवो स पाठ पढा है। वे उनत हैं, व राजा हैं, धनी हैं। उन लोगो मे अगर पर उठाकर हाथ के बल चलने का रवाज होता, तो तुम लोग कहते—ठीक इस तरह चलना सीखे बगैर तरक्की की कोई उम्मीद नहीं।

ऐसी दलीलें अचला ने अखबार मे बहुतेरी पढी थी, लिहाजा कुछ बोली नही, जरा हँसी। वह हँसी रामवाबू न दखी लेकिन नही देखी है, कुछ इस ढग से दुहराते हुए कहन लग—श्री धाम, श्रीक्षेत्र मे जब जाता हूँ जान कितने अजाने लोगो की भीड म होता हूँ। वहा छूआछूत की वला नही है, सोचने को जी भी नही होता। मगर इसका जन्म अगर घृणा से होता तो क्या इस आसानी से ऐसा कर पाता? यही समझो कि मैं किसी का छुआ नही खाता, लेकिन राह के गरीब-स गरीब को भी मन म कभी घृणा से देखा है—

अचला व्याकुल स्वर म बोल उठी—मैं क्या आपको जानती नहीं वडे चाचा जी? दुनिया म इतनी दया किसे है?

दया नही विटिया, दया नही—प्रेम। मैं जसे उन्ही लोगो को ज्यादा प्रेम करता हूँ। लेकिन असली बात बताऊँ तुम्हे, क्या कोइ जात और क्या कोई आदमी, जब धीरे धीरे वह हीन हो जाता है ता सबसे नाचीज के मत्थे ही मारा दोष मढकर सांत्वना पाता है। सोचता है इस आसान रुकावट को सम्हालते ही रातो रात वह वडा हो जायगा। हम लागो का भी ठीक यही रवया है। लेकिन जो कठिन है जो जड है—

बात पूरी करने का समय न मिला। मोटी पर जूते की आवाज हुई। मुडकर दखते ही सुरेश पर नजर पडी और पूछ बैठे—अच्छा सुरशबाबू, आप तो हिंदू हैं आप तो हमारे जाति भेद को मानते हैं?

सुरेश सकपका गया। यह कसा सवाल? जिस दलदल पर वे चल रहे हैं। उस हर कदम पर टटोले बिना कदम बढाने से किस गहराई म धँस पडेंगे, उसका क्या पता? इसलिए सत्य मत्य है या नही, इसकी भी कसौटी जरूरी

है। इसलिए डरते हुए वह करीब गया और अचला की ओर ताक कर मतलब भापने की कोशिश की। लेकिन उसकी शक्ल दिखाई न पड़ी। सो जरा सूखा सा हँसकर लटपटाता-सा बोला—हम क्या हैं, यह तो आप सब जानते हैं रामबाबू।

रामबाबू बोले—खूब जानता हूं। यही तो ख्याल था। लेकिन आपकी देवीजी जो पासा ही पलट देना चाह रही हैं। कहती हैं—कि जाति भेद सरीखे इतने बड़े अन्याय, इतने बड़े अनय को वे हर्गिज कबूल नहीं कर सकती, म्लेच्छ के हाथ का खाने में उन्हें उज्र नहीं। यह शिक्षा जन्म से ही उन्हें अपने पिता से मिली है। उनके हाथ का भोजन खाकर मेरी जात गई या रही? प्रायश्चित्त की जरूरत है कि नहीं, अब तक इसी पर बात हो रही थी। आपका क्या ख्याल है?

सुरेश अवाक्! अचला का मिजाज उससे छिपा नहीं तथा बगावत की आग वहाँ हर वक्त सुलग ही रही है, यह खबर भी उसके लिए नई न थी। लेकिन अकस्मात् वह आग आज कैसे भड़की और कहाँ तक फली, इसका अन्दाजा न लगा पाकर शंका और उद्वेग में वह सूख गया। लेकिन तुरन्त अपने को सम्हाल कर पहले ही जैसा हँसने की कोशिश की, पर अबकी उस कोशिश ने हँसी को दबाकर महज चेहरे को ही बिगाड़ दिया।

रामबाबू ने सिर हिलाकर कहा—गरचे यह वाजिब नहीं फिर भी ऐसा सोचने में मुझे आपत्ति न थी, लेकिन पति के कल्याण की खातिर भी जब हिन्दू घर की स्त्री ने कर्तव्य का पालन न करना चाहा, तुलसी चढ़ाने के दिन भी हर्गिज उपवास न किया—खैर, मजाक भी हो यह सख्त है जरा! अच्छा सुरेश बाबू, विवाह तो हिन्दू मत से हुआ था?

सुरेश ने कहा—हां

वे धीमे धीमे हँसने लगे। कहा—मैं तो जानता हूं। अचला की ओर देखकर बोले—तुमसे कहने को या बातें तो बहुत हैं। पर अब तुम्हारे पिता के ब्राह्म होने का मुझे कोई गम नहीं। ऐसे अनेक ब्राह्मों को मैं जानता हूँ, जो समाज में जाकर आँखें भी बन्द करते हैं। थोड़ा-बहुत अनाचार भी करते हैं। किन्तु लड़की के ब्याह में हिसाब का गोलमाल नहीं करते। खैर, एक फिक्र मेरी जाती रही।

लेकिन उनसे भी ज्यादा फिक्र टली सुरेश की। वह बूढ़े की हा-म हा मिलाते हुए बोल उठा—आप बजा फरमा रहे हैं। आज कल ऐसे ही लोग ज्यादा हैं। वे—

हठात् दोनों चौंक उठे। बीच ही में अचला का तीखा स्वर मानो गरज उठा। सुरेश की आँखों पर तेज नजर गड़ाती हुई बोली—इतने गुनाहों के बाद भी गुनाह बढ़ाने में तुम्हें शर्म नहीं आती ? तुम तो जानते हो पिताजी फरेबी नहीं, मन-वचन से वे वास्तव में ब्राह्म हैं। तुम्हें मालूम है वे—कहते-कहते वह कुर्सी पर से उठ गई।

सुरेश पहले तो जरा सकपकाया, पर मुड़कर आश्चर्य से बड़ी बड़ी हुई बूढ़े की आँखों को देखकर वह भी मानो यकायक जल उठा। बोला—झूठ क्या है ? तुम्हारे पिता क्या हिन्दू घर में तुम्हारी शादी करने को तैयार नहीं थे ? सच बताओ !

अचला ने जवाब नहीं दिया। शायद थोड़ी देर चुप रहकर उसने अपने को सम्हाल लिया और धीरे धीरे बोली—यह बात आज मुझसे क्या पूछ रहे हो ? इसके कारण को दुनिया में सबसे ज्यादा क्या तुम नहीं जानते ? तुम्हें खूब मालूम है कि मैं क्या हूँ, मेरे पिताजी क्या हैं, मगर इसके लिए तुमसे झगड़ने की मुझे इच्छा नहीं—इतना ही नहीं—शर्म आती है। तुम्हारी जैसी इच्छा हो, बनाकर उन्हें बताओ। मैं नहीं सुनना चाहती। कहो—मैं जाती हूँ—और वह तेजी से ही बगल के कमरे में चली गई।

वह चली गई। पर ये दोनों कुछ देर के लिए पत्थर से निश्चल हो रहे।

बूढ़े ने शायद मन की भूल से ही एक बार हुक्के के लिए हाथ बढ़ाया, लेकिन तुरन्त अपना हाथ खींचकर जरा हिले-डुले, खरखरकर गले को साफ किया और बोले—आजकल सेहत कैसी है सुरेशबाबू ?

सुरेश अनमना हो पड़ा था। चौंककर बोला—जी ठीक है कहते ही उसे सच्चाई की याद आई—फिर बोला—छाती में जरा यहाँ पर दर्द है—क्या जानें कल से बढ़ा था—

रामबाबू बोले—कहिए तो भला ऐसे में जाड़े की रात में इतनी देर तक बाहर घूमना क्या ठीक है ?

ठीक घूमना नही रहा, उस घर के लिए आज दो हजार रुपया बयाना दे आया।

रामबाबू ने अचरज किया। फिर कहा—नदी पर है अच्छा मकान है, मगर मुझसे पूछते तो मैं मना करता। उस दिन बातो-बातो मे समझ गया था। सुरमा को यहा रहना पसन्द नही। हँसकर बोले—उससे पूछ लिया है या अपनी ही राय से खरीद लिया?

सुरेश ने इसका जवाब न देकर कहा—नापसद का तो खास कोई कारण नही देख रहा हूँ। रहने लायक कुछ सामान भी कलकत्ते से मँगवाया है, आशा है कल परसो तक आ जाएगा।

रामबाबू थोडी देर चुप रह, फिर क्या सोचकर तो पुकारा—सुरमा! अचला ने जवाब नही दिया, लेकिन कमरे से बाहर आकर अपनी कुर्सी पर बैठ गई। बूढे ने स्नेह से कहा—तुम्हारे पति ने तो यहा बहुत बडा मकान खरीद लिया। अब तो बूढे चाचा को छोडकर तुम जा नही सकोगी।

अचला चुप रही।

बूढे ने फिर कहा, घर और असबाव ही नही, मैं जानता हूँ, गाडी घोडा भी आ रहा है और उससे भी ज्यादा यह जानता हूँ कि यह सारा कुछ तुम्हारे ही लिए। कहकर हँसते हुए एक बार उन्होने अचला को और एक बार सुरेश को देखा। लेकिन उस गम्भीर और उदास मुखडे पर खुशी की कोई झलक ही न दिखी। इस धुँधले प्रकाश मे औरो को शायद यह नही दीखता, मगर बूढे की पैनी निगाह ने चूकी। तो भी उन्होने पूछा—लेकिन बिटिया तुम्हारी, राय—

अचला अब बोली। कहा—मेरी राय की तो जरूरत नही चाचाजी!

रामबाबू झट बोल उठे—यह कैसी बात! तुम्ही तो सब हो, तुम्हारी ही इच्छा से—

अचला उठ खडी हुई, बोली—नही चाचाजी, नही, मेरी इच्छा से कुछ नही आता-जाता। आप सब समझ नही पाएँगे, मैं आपको समझा भी नही सकूँगी—मगर अब इजाजत दे दें तो मैं जाऊँ—

बूढे के मुह से बात नही निकली उसकी जरूरत भी नही हुई।

एकाएक नौकरानी एक कडाही मे आग ले आई। सबका ध्यान उसी पर

जा टिका। रामबाबू अचरज से पूछा चाह रहे थे, सुरेश ने अप्रतिभ होकर कहा—मैंने बैरा से लाने का कहा था, देख रहा हूं, उसने दूसर को यह हुक्म दिया। जहां पर दद है, वहां जरा—

आग की जरूरत की व्याख्या नही करनी पडी, लेकिन उसके लिए तो एक जने की और जरूरत थी। रामबाबू न अचला की ओर देखा, लेकिन उसने तुरत मुह फेरकर शांत स्वर म कहा—मुझे बडी नीद लग रही है चाचाजी, मैं चलती हूं। कहकर उत्तर का इतजार किए बिना ही चली गई और तुरत दरवाजा बन्द करन की आवाज हुई। रामबाबू कुर्सी पर से उठ गए और नौकरानी के हाथ से आग की कडाही लेकर बोले—चलिए सुरेशबाबू—

आप ?

हा, मैं। कुछ नई बात नही, जीवन मे यह काम बहुत कर चुका हूं—और एक प्रकार से जबर्दस्ती ही उसे उसके कमरे मे खीच ले गए। आग की कडाही को फश पर रखा, कुछ देर एक टक उसे देखते रहे और तब उसका एक हाथ दबाकर कहा—नही नही सुरेश बाबू यह हर्गिज नही हो सकता, हर्गिज नही। मैं समझ रहा हूं कुछ हुआ है, मैं एक बार—लेकिन छोडिये—जरूरत होगी तो फिर—कहकर व चुप हो गए।

सुरेश एक शब्द भी न कह सका। लेकिन बच्चा सरीखा एक बार उसके होठ कांप उठे और फिर आंसू छिपान के लिए उसने मुह फेर लिया।

## ३५

सुरश एक सोफे पर आख मूदकर पडा था और सामने एक कुर्सी खीच कर रामबाबू उसकी दुखती छाती पर सेक दे रहे थे, ऐसे समय द्वार खोलने की आवाज हुई। देखा, अचला आ रही है। उसन बिना किसी आडम्बर के कहा—रात काफी हो गई चाचाजी। आप सोने जाइये।

इसी के तो इन्तजार मे थी बिटिया! कहकर रामबाबू झट खडे हो गए और सुरेश को देखकर कहा—इतनी देर तक विडम्बना के सिवा और क्या

भोगते रहे हम दोनों ! भला यह काम हम लोगों से होने का है ? अचला की तरफ कुर्सी को जरा बढ़ावा देते हुए बोले—जिसका काम, उसी को सुहाता है। लो, बैठो। मैं जरा हाथ-पाँव पसारूँ। थकावट के भार से एक लम्बी जम्हाई लेकर दो-तीन बार चुटकी बजाकर उन्होंने हुक्का उठाया और बाहर जाकर सावधानी से दरवाजे को बन्द करते हुए हँसकर बोले—गनीमत है, ऊँघते हुए हाथ पाँव न जला बैठा। क्यों सुरेशबाबू ?

सुरेश ने कुछ कहा नहीं, सिर्फ हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

अचला चुपचाप उनकी छोड़ी हुई कुर्सी पर बैठ गई। सेंक देने के कपड़े को तपाती हुई बोली—फिर कैसे दर्द हो गया ? कहाँ पर लगता है ?

सुरेश ने न तो आँखें खोलीं न वह बोला, सिर्फ हाथ से छाती की बाईं ओर दिखा दिया। फिर सन्नाटा। ऐसा सन्नाटा लगने लगा कि, इस मौन अभिनय के अंतिम अंक तक यह मौन ही चलेगा। लेकिन वैसा हुआ नहीं। सहसा अचला के फ्लानेल समेत हाथ को सुरेश ने अपनी छाती पर कस कर दबा लिया। अचला के चेहरे पर उद्वेग का कोई चिह्न नहीं दीखा, वह यही उम्मीद कर रही थी, केवल इतना कहा—छोड़ो, थोड़ा और सेंक दूँ।

सुरेश ने हाथ छोड़ दिया, लेकिन देखते ही देखते उठकर दो व्याकुल बाँहें बढ़ाकर अचला को खींच लिया और अपनी छाती से कसकर दबाते हुए असंख्य चुम्बनों से उसे अभिभूत कर दिया। एक क्षण पहले जैसे यह लगा था कि इस आवेग-उच्छ्वासहीन नाटक का अंत ऐसी ही निर्जीव नीरवता में होगा, पर एक पल बीतने न बीतते फिर यह लगने लगा कि इस बौखलाई उन्मत्तता की शायद सीमा नहीं शेष नहीं सभी ओर, सब समय ही यह उन्मत्तता मानो अक्षर अमर होकर रहेगी। कभी किसी युग में भी इसका विराम न होगा, विच्छेद न होगा।

अचला ने बाधा नहीं दी, जोर नहीं लगाया, लगा कि इसके लिए भी वह तैयार हो थी, केवल उसका शांत मुखड़ा एक बार पत्थर की तरह दर्द और सख्त हो गया। सुरेश को होश नहीं था शायद सृष्टि के घोरतम अँधेरे से उसकी दोनों आँखें बिल्कुल अंधी हो गई थीं—नहीं तो उस मुखड़े का चुम्बन की शर्म और बेइज्जती उसकी समझ में आ भी सकती थी। समझ नहीं आई

ठीक, लेकिन थकावट से ही जब यह पागलपन फिर हो गया तो अपने को धीरे-धीरे उससे छुड़ा कर अचला अपनी जगह पर आ बैठी।

कुछ क्षण जब दोनों के चुपचाप कट गए, तो एक लम्बा निश्वास फेंकते हुए सुरेश बोल उठा—इस तरह से हम लोगों का कब तक कटेगा अचला? कहकर उसने किसी उत्तर का इन्तजार नहीं किया और कहने लगा—तुम्हारा कष्ट मैं जानता हूँ मगर मेरे दुःख को भी सोच देखो। मैं तो गया।

अचला ने इसका जवाब नहीं दिया। पूछा—तुमने यहां मकान खरीदा है? बड़े आग्रह से सुरेश बोल उठा—तुम्हारे ही लिए अचला?

अचला ने इसका भी जवाब न दिया। फिर पूछा—चीज-वस्त, गाड़ी-घोड़ा भी मंगाया है?

सुरेश ने उसी तरह से जवाब दिया—सब तो तुम्हारे ही लिए।

अचला चुप रही। इससे उसे क्या जरूरत, यह उसे चाहिए या नहीं, उस आदमी से यह पूछने जैसा अपने ऊपर व्यंग दूसरा और क्या है? इसलिए इसके बारे में और कुछ न कहकर वह चुप हो रही। जरा देर चुप रहकर पूछा—रामबाबू के सामने तुमने मेरे पिताजी का नाम लिया? घर बताया है?

सुरेश ने कहा—नहीं।

और सेंक देने की जरूरत है?

नहीं।

तो मैं जाती हूँ। मुझे बड़ी नींद आ रही है। अचला कुर्सी पर से उठ गई। आग की कड़ाही को हटाकर बाहर से दरवाजा बन्द करने जा रही थी कि सुरेश हड़बड़ में उठकर बोला—एक बात बताती जाओ अचला! तुम क्या और कहीं जाना चाहती हो? सच कहो?

अचला ने पूछा—और कहां?

सुरेश बोला—जहाँ भी हो। जहाँ हमें कोई नहीं जानता, कोई नहीं पहचानता, ऐसी किसी जगह वह देश जितना—

आवेश में सुरेश की आवाज कांपने लगी, अचला ने इस पर गौर किया, लेकिन वह बहुत ही स्वाभाविक और सहज स्वर में बोली—यहां भी तो हमें कोई नहीं पहचानता था, आज भी नहीं पहचानता।

उत्साह पाकर सुरेश कहने लगा—लेकिन धीरे धीरे—

टालकर अचला बोली—धीरे-धीरे जान जाएँगे ? हाँ जान सकते हैं, लेकिन यह खतरा तो और कहीं भी है।

सुरेश उमङ्ग मे आकर कहने लगा—तो यही तै रहा। यही तुम्हारी राय है कहो ? साफ साफ कहो सरकार—कहते-कहते जाने किसने तो उसे ढकेल कर उठा दिया। लेकिन अकुलाए पर को बढ़ाते ही देखा, द्वार बन्द करके अचला चली गई है।

कई दिनों से बदली घिर रही थी। बारिश के आसार थे। सुरेश के नए मकान में कलकत्ते से आए हुए ढेरों सामान जमा थे, उन्हें सहेज लेने का आग्रह किसी में न था। दो घोड़े एक गाडी भी आई थी—वह साईस के जिम्मे किसी अस्तबल में पड़ी है कोई उसकी खोज नहीं लेता। जैसे-तैसे दिन बीतते जा रहे थे। ऐसे में एक दिन दोपहर को रामबाबू एक हाथ में हुक्का और दूसरे में एक नीला लिफाफा लिए आ पहुँचे। अचला रेलिंग के पास सोफे पर अधलेटी पड़ी किसी मासिक पत्र का विज्ञापन पढ़ रही थी। चाचाजी को देखकर उठ बैठी। चिट्ठी पढ़ाते हुए रामबाबू बोले—यह लो अपनी राक्षसी का पत्र। इतने दिन वह तुम्हें लिख नहीं सकी, इसके लिए मेरे पत्र में तुमसे हजार बार माफी माँगी है असंख्य प्रणाम भी लिखा है। उसे माफ कर दो। हँसते हुए उसके हाथ मे चिट्ठी देकर वे पास ही एक कुर्सी खींचकर बैठ गए और नदी की ओर देखते हुए हुक्का पी पीकर धुँए से अंधेरा कर दिया।

अचला ने दो बार शुरू से आखिर तक पत्र को पढ़ने के बाद सिर उठाया बोली—तो ये सब परसों सुबह की गाडी से आ रहे हैं ? ये फूफी कौन चाचाजी ? और उनकी राजपुत्र वधू ? राजपुर के गार्जन ट्युटर—

रामबाबू ने हँसकर कहा—दिल्लगी का मौका हाथ आ जाय तो यह बिटिया राक्षसी चूकने की नहीं ! फूफी हुई मेरी छोटी विधवा बहन और राजपुत्र वधू यानी उनकी लड़की—अड़ारपुर के भवनी चौधरी की स्त्री—खैर, कहने को कोई जो कहे, राजा रजवाडा सा ही घर है। राजपुत्र हुआ उसी का दसेक बरस का लड़का—और यह आखिर आदमी क्या है यह तो आखो देखे बिना बता नही सकता बेटी, होगे कोई ज्यादा तनखा के नौकर-चाकर। बड़े आदमी के बेटे के साथ घूमते फिरते है यह वह जानते अजानते जुगाकर बालिग नाबालिग सबका मन रखते है—ऐसे ही कुछ होगे। मगर मैं इसको तो नहा

सोचता सुरमा, आएं, खाएँ-पीऐं, पश्चिम के हवा-पानी से गले और छाती की जलन दो दिन स्थगित हो तो खुशी ही होगी, मगर फिक्र तो यह है कि घर अपना छोटा है—राजे-रजवाडो की सोचकर बनवाया भी नही घर-द्वार की व्यवस्था भी उसके अनुकूल नही। साथ म नौकर-नौकरानी भी शायद जरूरत स तिगने आएँ। इमी से मैं सोच रहा हूँ, अगर तुम्हारे घर को—

अचला व्यस्त होकर बोली—लेकिन उसका अब समय कहा चाचाजी। फिर अकेले इतनी दूर रहना उनके लिए सुविधाजनक होगा?

रामबाबू ने कहा—समय है, बशर्ते कि अभी से जुट जाया जाय। जगह तैयार रहे तो किसे कहाँ सुविधा होगी, इसका हल सहज ही हो जायगा। सुरश बाबू तो सुनते ही इक्के पर मवार होकर चले गये—तुम्हारी गाडी भी तयार होकर आई समझो, तुम खुद अगर जल्द तैयार हो जाओ बिटिया, तो इतन म मैं भी जूते बदल कर चादर ले आऊँ। सच पूछो तो तुम्हारी गिरस्ती का ठीक ठिकाना तो हम लोगा से होगा नही।

अचला कुछ देर चुप रही फिर उठ खडी हुई। बोली—अच्छा, मैं कपडे बदल लेती हूँ। कहकर धीरे धीरे चली गई।

रामबाबू का प्रस्ताव न तो असङ्गत था, न अस्पष्ट। राजकुमार और राजमाता को जगह देने के लिए उसे यह आश्रय छोडना पडेगा, अचला समझ गइ, लेकिन समझना सहज होने से ही भार हलका नही हो जाता। वह मन मे जितनी दूर तक गया, स्टील के रोलर की नाइ सब कुछ को पीसता हुआ चला गया।

इतन दिनो मे कोई भी उसे घर स बाहर निकलने को राजी नही कर सका था। मिनट पन्द्रह बाद आज पहली बार जब वह अपनी अभ्यस्त वेश-भूषा मे तैयार होकर इसी के लिए आई, तो चारो ओर का सब कुछ उसे नया और विस्मय-सा लगा—और तो और, आप अपने को भी और ही तरह का लगने लगा। फाटक के बाहर बडी सी जोडी खडी थी नई पोशाक वाले कोचवान ने मालिक समझकर सलाह किया, दरवाजा खोलकर साईस बाअदब हटकर खडा हो गया और उसी का अनुसरण करते हुए रामबाबू जब सामने वाली जगह म बैठ गए तो यह सब कुछ अजीब सपन-सा लगा। उसकी अभिभूत नजर गाडी के जिस हिस्से पर भी पडी, लगा, यह बहुमूल्य ही नही यह सिर्फ धनवान के

बीच खड़े होकर इसीलिए सभी चिंताओ से ज्यादा एक चिंता बार-बार चोट करने लगी कि जिसके रुपया है, उसने खर्च किया है, यह एक पुरानी बात है,—परन्तु यह तो सिर्फ वही नही है। यह तो मानो एक को आराम देने के लिए दूसरे की व्याकुलता की कोई हद नही। काम करते हुए, यह वह चीज छूते छापते मामूली बातें बहुत हुई, आँखें भी मिली कई बार, लेकिन सबके अन्दर से एक अनबोली बात, छिपा इशारा रह-रह कर केवल इसी ओर अँगुली दिखाने लगा।

धोने-पोछने का काम खत्म नही हुआ था। लिहाजा, उसे मामूली तौर पर रहने लायक बनाने मे ही सारा समय लग गया। थके-माँदे तीनो जने जब लौटने के लिए गाडी पर बैठे तो एक पहर रात जा चुकी थी। हवा बही थी, सो सामने का आसमान जरा साफ हो गया था, सिर्फ बीचो-बीच धुमैले मेघ का एक टुकडा एक छोर से आकर नदी पार हो करके दूसरी ओर फैलता जा रहा था, कभी मैली चादनी की धारा मानो सप्तमी के चाँद के चारो तरफ के बैहार और पेड-पौधो पर झर रही थी। आँखें भरकर इस सौन्दर्य को देखने के लिए रामबाबू आँखें फाडकर खिडकी से बाहर ताक रहे थे, मगर जो बूढे नही, प्रकृति के सारे रस, सारी मधुरिमा का उपभोग करने की ही जिनकी उम्र थी, सिर्फ वही दोनो गाडी की गद्दी के कोनो मे आँखें बन्द किए बैठे रहे।

एक बहुत पुरानी स्मृति अचला के मन मे धुँधली हो गई थी, बहुत दिनो के बाद आज वही याद आने लगी—सुरेश के कलकत्ते वाले घर से ऐसी ही एक साँझ को ठीक इसी तरह गाडी से वे लौट रहे थे। उस दिन उसके ऐश्वर्य और उपभोग के विपुल साधन उसके मन को महिम से खीचकर बहुत दूर ले गए थे। उस दिन इसी सुरेश के हाथो अपने को सौंपना निरा असगत या असम्भव नही लगा था—बहुत दिनो के बाद आज वही बात जो क्यो याद आई, यह सोचते हुए अपने अन्तर की गूढ छवि को देखकर उसके सर्वांग को छूती हुई शर्म की आँधी बहने लगी। शर्म! शर्म! शर्म! यह गाडी, वह घर और घर की इतनी इतनी तैयारी—सब उसकी है, सब उस के पति के दुलार का है—यही सबने जाना और ऐसा भी दिन आयगा, जब लोग जानेंगे कि [illegible] अधिकार फूटी कौडी भर का नही था। शुरू से [illegible]। उस दिन वह शर्म को रक्खेगी कहाँ? अचला आज

वैभव का घमड ही नही, उसका एक-एक कतरा मानो किसी के अपार प्रेम का बना है।

सुन सडक पर चार जोडे खुरा की टपटप आवाज गुंजाती हुई जोडी दौड पडी लेकिन अचला के कानो वह अस्पष्ट-सी दाखिल हुई। उसका सारा हृदय और बाहरी इन्द्रिया शायद आखीर तक ऐसी ही अभिभूत रह जाती, लेकिन रामबाबू की आवाज से सहसा चौंक उठी—सामने की ओर उसका ध्यान खीचते हुए वे बोले—वह रहा तुम्हारा घर बिटिया। नौकर-चाकरो की बहाली हो चुकी, मामूली तौर पर सजान गुजाने का काम भी अब तक काफी आगे बढ चुका होगा, केवल तुम लोगो के सोने के कमरे मे मैंने किसी को भी हाथ लगाने से मना कर दिया है। उनके जाते जाते मैंने कह दिया, सुरेश बाबू, घर के ओर जहा पर जो जी चाहे, कीजिए, कोई परवा नही मुझे, मगर बिटिया के कमरे मे कुछ कर धर के उसका काम बढा मत दीजिएगा। लजीली मुस्कान के साथ आशा भरी आखे उठाते ही वे चुप हो गए।

वे अचानक एम थम क्यो गए अचला उसी वक्त समझ गई, इसलिए जब तक गाडी नए बगले पर न जा पहुँची तब तक वह अपना फीका उदास चेहरा बाहर की ओर फेर कर बूढे की विस्मित आँखो से छिपाए रही।

गाडी की आवाज से सुरेश बाहर आया, काम छोडकर अपनी मालिकिन को देखने के लिए दाई-नौकर भी निकल आए पर उस शक्ल को देखकर किसी को कोई उत्साह न मिला।

रामबाबू के साथ-साथ अचला उतर आई, सुरेश की ओर नजर उठाकर उसने देखा तक नही, उसके बाद तीनों नए मकान के अन्दर गए। उसने भीतर-बाहर ऊपर-नीचे, कही भी आनन्द का लेश है, यह थोडी देर के लिए किसी का कहीं नही दिखाई दिया।

## ३६

लेकिन इसमे गलती कितनी बडी थी, उसे जाहिर होते भी देर न लगी। घर सजाने के काम मे लगे लोगो को ऐसे महँगे और इतने ज्यादा सामाना के

बीच खडे होकर इसीलिए सभी चिंताओ से ज्यादा एक चिंता बार-बार चोट करने लगी कि जिसके रुपया है उसने खच किया है, यह एक पुरानी वात है,—परन्तु यह तो सिफ वही नही है। यह तो मानो एक को आराम देने के लिए दूसरे की व्याकुलता की कोई हद नही। काम करते हुए, यह वह चीज छूते छापते मामूली वातें बहुत हुइ, आँखें भी मिली कई बार लेकिन सबके अन्दर से एक अनबोली बात, छिपा इशारा रह-रह कर केवल इसी ओर अँगुली दिखाने लगा।

धोन-पोछने का काम खत्म नही हुआ था। लिहाजा, उसे मामूली तौर पर रहने लायक बनाने म ही सारा समय लग गया। थके माँदे तीनो जन जब लौटन के लिए गाडी पर बैठे तो एक पहर रात जा चुकी थी। हवा वही थी, सो सामने का आसमान जरा साफ हो गया था, सिफ बीचो-बीच धुमले मेघ का एक टुकडा एक छोर से आकर नदी पार हो करके दूसरी ओर फैलता जा रहा था, कभी मैली चाँदनी की धारा मानो सप्तमी के चाँद के चारो तरफ के बैहार और पेड-पौधो पर झर रही थी। आँखें भरकर इस सौदय को देखने के लिए रामबाबू आँखें फाडकर खिडकी से बाहर ताक रहे थे, मगर जो बूढे नही, प्रकृति के सारे रस, सारी मधुरिमा का उपभोग करने की ही जिनकी उम्र थी, सिफ वही दोनो गाडी की गद्दी के कोनो म आँखें बन्द किए बठे रहे।

एक बहुत पुरानी स्मृति अचला के मन मे धुधँली हो गई थी, बहुत दिनो के बाद आज वही याद आन लगी—सुरेश के कलकत्ते वाले घर से ऐसी ही एक साँझ को ठीक इसी तरह गाडी स वे लौट रहे थे। उस दिन उसके ऐश्वय और उपभोग के विपुल साधन उसके मन को महिम से खीचकर बहुत दूर ले गए थे। उस दिन इसी सुरेश के हाथो अपने को सौंपना निरा असगत या असम्भव नही लगा था—बहुत दिनो के बाद आज वही बात जो क्यो याद आई, यह साचते हुए अपन अन्तर की गूढ छवि को देखकर उसके सर्वांग को छूती हुई शम की आधी बहन लगी। शम ! शम ! शम ! यह गाडी, वह घर और घर की इतनी-इतनी तैयारी—सब उसकी है, सब उस के पति के दुलार का उपहार है, यही सबने जाना और ऐसा भी दिन आयगा, जब लोग जानेंग कि इसमे उसका वास्तविक अधिकार फूटी कौडी भर का नही था। शुरू से आखिर तक सब झूठा। उस दिन वह शम को रक्खेगी कहाँ ? अचल आज

यह बात हर्गिज झूठ नही, इसका सारा कुछ महज उसी की पूजा के लिए सजोया गया है और इसका आदि-अन्त ही स्नेह से, प्रेम से, दुलार से मडित है।

देखते ही देखते उसके मन म लाभ और त्याग लज्जा, और गौरव ठीक गगा-जमना सा अगल-बगल ही वहने लगा और एक क्षण के लिए वह दो मे स एक को भी अस्वीकार न कर सकी। फिर भी घर पहुँच कर रामबाबू जब साध्य-कृत्य के लिए चले गए, थकावट और सिर दुखने की दुहाई देकर वह असमय मे ही जल्दी से अपना कमरा बद करके लेट गई, तो केवल लज्जा और अपमान ही मानो उसे निगल जाना चाहने लगे। पिता की लाज पति की लाज सगे-सम्बन्धियो की लाज, सबकी सम्मिलित लाज स ही आख पर आकाश-चुम्बी हाकर सभी दुखो का दबा दिया। केवल यही ख्याल होने लगा, यह फरेब जब किसी दिन उभर जायगा, तो मुँह छिपाने की जगह कहाँ रहेगी?

यो जिस समाज मे वह बचपन से पली वहा भूतल शय्या या पेडा के नीचे वास—कोई भी किसी का आदश नही रहा। वहा हर चाल-चलन, आहार-विहार मिलन जुलन मे विलासिता के प्रति विराग को नही अनुराग को ही क्रमश उग्रता से बढते देखा है—वहा हिन्दू धम के किसी आदश से उसका परिचय नही हुआ। स्वग के आसरे ससार के सारे सुखो से अपने को हटाने की कठोर निष्ठा कभी नही देखी, उसन औरो की नकल पर बने घर के समाज को देखा है, जिसकी एक एक नर नारी सासारिक प्यास से दिनानुदीन केवल सूखती ही गई है।

इसलिए इस सूनी सेज पर आँख मूदकर एश्वय नाम की चीज को तुच्छ कहकर उडा नही दे सकी। और उसका मन इस बात पर भी हामी न भर सका कि उसे यह नही चाहिए जरूरत नही है। उसकी इतन दिनो की शिक्षा और सस्कार इनमे से किसी का भी तुच्छ करन के अनुकूल नही पडता था—लेकिन ग्लानि से भी उसका सारा अन्तर काला हो उठा। सो जितनी दौलत, जितन उपकरण—शरीर को आराम स रखने के विविध साधन—आज अनमाँगे ही उसके परो तले आ जुटे थे, उसका बेराक मोह उसे अविराम एक हाथ स खीचने और दूसरे से फेकने लगा।

दु ख के सपने मे मुक्ति की जसी एक धुँधली चेतना का सचार हाता है, वैसे ही उसकी यह बाधा भी बिल्कुल जाती नही रही थी कि भाग्य की मार

से, आज जो दगा है, कभी इसके सत्य होने म कोई अडचन ही नही थी। यही सुरेश उसका पति हो सकता था और दूर भविष्य म यह एक बारगी असम्भव है, यह भी कोई निश्चित तौर पर नही कह सकता।

उनक समाज स मिलत जुलत सभी समाज म विधवा-विवाह चलता है, हिदू-नारी के समान किसी एक ही के पत्नीत्व-बधन को, इस उस दोनो लोक म ढान फिरते का अनुल्लघनीय अनुशासन उह नही मानना पडता--लिहाजा जीवन-मरण मे केवल एक को ही अनयगति सोचने की लाचारी उसस उम्मीद नही की जा सकती। पति क जीते जी दूसरे को स्वामी कहने म अपराध के भार स वह मन जितना ही क्यो न दु खी हो, लज्जा और अपमान की ज्वाला स जलता चाह जितना हो धम और परकाल की गदा उसे मारकर लुढका देने का डर नही दिखा सकी।

दरवाजे का कडा खटखटा कर रामबाबू ने कहा—एक बूद पानी तक पिए बिना सो गई बिटिया, तबीयत क्या इतनी खराब है?

अचला की चिंता का छोर टूट गया। उसे ऐसा लगा, जैसे उसके पिता की आवाज हो। कभी रज होकर सो रहने से वे इसी प्रकार घबराई आवाज म दरवाजे के बाहर से पुकारा करते थे।

इस चिंता को वह हर्गिज जगह नही देती, लेकिन स्नेह की इस पुकार को वह टाल न सकी, देखते ही देखते उसकी आखें सजल हो आइ। उ उसने आँखें पाछ ली और भर्राए गले को साफ करके जवाब देते हुए किवाड खोलकर सामन आ खडी हुई।

ये बूढे सज्जन इतने दिनो की इतनी घनिष्ठता के बावजूद सदा एक दूरी रखकर ही चलते थे—इस घर मे आज का दिन ही इन लोगो का अन्तिम है, शायद यही सोचकर पल मे वे उस दूरी को लाघ गए। एक हाथ अचला के कधे पर रखकर दूसर से उसका ललाट चूमते हुए बोले—अपने चाचा से शरा-रत बिटिया? तुम्हे कुछ नही हुआ, चलो—कहकर हाथ पकड कर बरामदे की एक कुर्सी पर उसे बठा दिया।

थोडी ही दूर पर दूसरी कुर्सी पर सुरेश बैठा था। उसने एक बार नजर उठाकर देखा और फिर सिर झुका लिया। बात थी कि रात मे बठकर दिन के काम काज पर बात की जायगी और सुरेश इसीलिए अकेले बैठकर रामबाबू के

आने का इन्तजार कर रहा था। उसी की ओर देखकर रामबाबू जरा हँसकर बोले—आपकी गृहलक्ष्मी जानें किस साहब की बेटी हैं, दिन तिथि, पोथी पत्रा को नही मानती। ऐसे मे आप मानें न मानें कुछ आता, जाता नही। मगर मेरे साठ साल का कुसंस्कार तो जाने का नही। कल डेढ पहर के आस-पास एक शुभ साइत है—

सुरेश ने इशारे को न समझा। कुछ अचरज से कहा—शुभ साइत है।

रामबाबू इसका ठीक सीधा जवाब न दे सके। कुछ जसे आगा पीछा करके बोले—इसके बाद हफ्ते भर के अन्दर पत्रे मे कोई ढूढे न मिला—इसी से—

सुरेश समझ तो गया, मगर हाँ ना कुछ कह न पाकर डर से छिपे छिपाए उसने अचला की ओर ताका और ताका कि अपनी नजर झुका न सका। देखा, अचला एकटक उसी की ओर देख रही है।

अचला ने शान्त भाव से कहा—कल सवेरे ही हम उस मकान मे जा सकते हैं न ?

दग था सुरेश, इस सीधे प्रश्न का सीधा उत्तर उसके मुँह म हर्गिज न निकल सका। उसने किसी प्रकार से इतना ही जताना चाहा कि वह घर अभी ठीक रहने लायक नही हो सका है—फर्श शायद ओदा है नई दीवार कच्ची हैं—उससे तुम्हारी तबीयत खराब हो सकती है या मरी—

लेकिन आपत्तियो की यह सूची समाप्त न हो सकी। अचला मानो जरा हँसकर ही बोली—है तो रहे। जिस दुर्दिन मे गीदड भी अपनी माद से बाहर नही निकलना चाहता, वैसे दिन मे जब मुझे खीचकर अनजान जगह मे पेड तले ला बिठा सकते हो तो फर्श गीला है, इस डर से मेरे लिए तुम्हें घबराने की आवश्यकता नही! उस दिन जो नही मरी, वह आज भी जिन्दा ही रहेगी!

रामबाबू की ओर मुडकर वह बोली—आप फिक्र न करें चाचाजी—हम कल सवेरे ही जाएँगे। आपका एहसान हम जन्म-जन्म तक न अदा कर सकेंगे—हम कल जाएँगे—कहते-कहते गेवर भाग गई और अपने कमरे का दरवाजा बन्द कर लिया।

बूढे रामबाबू पर मानो गाज गिरी हो, ऐसे बैठे रह गए। उनकी आकुल-व्याकुल दृष्टि कभी सुरेश के झुके चेहरे पर और कभी उस बन्द दरवाजे पर

जाकर यह विफल प्रश्न करने लगी—यह क्या हुआ ? कैसे हुआ ? सभव कसे हुआ यह ? लेकिन अन्तर्यामी के सिवा इस मार्मिक मान का उत्तर कौन दे ?

## ३७

दूसरे दिन सवेरे से ही आसमान बादलो स ढँका था। उस धुधले आसमान के नीचे सारा ससार ही कैसा उदास और मलिन लग रहा था। गाडी दरवाजे पर खडी थी, कुछ कुछ बक्स बिछावन उस पर रक्खा जा चुका था, पत्रे के अनुसार ठीक घडी मे अचला नीचे उतरी और गाडी पर सवार होन स पहले रामबाबू के चरणो की धूल ली। वे जबदस्ती हँसने की कोशिश करके बोले—इस बूढे चाचा से छुटकारा पाना बडा मुश्किल है बिटिया। पावा की जरा सी धूल लेकर दो मील के फासले पर जा रहे, इससे यह न समझो कि मुक्ति मिली ?

गीली आखें ऊपर उठाकर अचला ने धीरे धीरे कहा—मैं ता ऐसा चाहती नही चाचाजी।

इस करुणा भरी बात से बूढे की भी आखें भर आइ। उन्ह सहसा लगा, यह अपरिचित लडकी फिर जाने परिचय के बाहर कितनी दूर खिसकी पड रही है। स्नेह सजल स्वर मे बोले—भला मैं यह नही जानता हूँ बिटिया ? नही तो पति के साथ अपने घर जा रही हो, इसमे आखो म आसू क्यो आ जात ? मगर तो भी तो मैं रोक नही पाया। कहते हुए उन्होने बूद भर आँसू हाथ से पोछकर हँसते हुए कहा—पास मे थी, उत्पात मचाया करता था रात दिन, अब वही करते न बनेगा, मगर सूद समेत वसूलने मे न चूकूगा, देख लेना।

सुरेश पीछे था। आज पहली बार उसने भक्तिपूवक बूढे क पैरा की धूल ली। वे धीरे धीरे बोले—मैं जानता हूँ, आप मेरे यहाँ सुखी नही थे सुरेश बाबू ! मैं तन-मन से आशीर्वाद देता हूँ, अपने घर जाकर वही असुविधा दूर हो।

सुरेश ने कुछ नहीं कहा, केवल फिर से एक बार झुककर उन्हें प्रणाम करके गाडी पर जा बैठा।

रामबाबू ने दुबारा आशीर्वाद देते हुए ऊँचे स्वर में कहा— मैंने एक एक्का लाने को कह दिया है—सांझ न होते होते शायद जा धमकूं, मगर नाराज न होना। इस दिल्लगी के बाद एक लम्बी उसांस भरकर मौन हो रहे।

गाडी चली गई तो मन ही मन कहा—अच्छा ही हुआ कि समय रहते ही ये चले गये। यहाँ सिर्फ स्नेह का अभाव ही न था अपनी विधवा बहन के स्वभाव को भी वे जानते थे। दूसरों की नब्ज टटोलने के कौतूहल की उसमें सीमा न थी। आते ही वह सुरमा की कठिन कसौटी शुरू कर देगी और इसका नतीजा चाहे जो हो, वह सुखकर नहीं होगा। इस लडकी के बारे में कुछ न जानते हुए भी इतना जरूर जाना था कि वह भद्र है। किसी भी ऑफियत के लिहाज से वह कभी झूठ नहीं कह सकती—वह ब्राह्म की लडकी है छुआछूत नहीं मानती—यह सब वह छिपाएगी नहीं। बाद में इस घर में जो विद्रोह मचेगा, उसकी कल्पना से ही छाती काँप उठती है। खैर, यह तो उनकी अपनी सुख सुविधा की बात हुई। एक बात और थी, जिसको वे अपने तई भी स्पष्ट नहीं कर लेना चाहते थे। उनके लडकी नहीं थी, लेकिन पहली सन्तान उनके लडकी ही हुई थी। आज वह जिन्दा होती, तो अचला की माँ हो सकती थी, लिहाजा उम्र और शक्ल की कोई समानता ही न थी। लेकिन उनकी यह भूल कितनी बडी थी, इसका पता उन्हें उसी दिन चला था, जिस दिन इस अपरिचित स्त्री को डाक्टर की पाज में रोते रोते रास्ते में जाते देखा था। उस दिन उन्हें ऐसा लगा था कि बहुत दिनों की खोई हुई वह लडकी अचानक मिल गई, उस दिन से वह भूल निरन्तर बढती ही गई और मन में भी अनुभव करते थे सही, लेकिन जाने कैसा तो एक रहस्य उस लडकी को घेरे हुए था, घर जो आँखों की ओट में है, वह ओट में ही रहे, खोदकर उस निकालने की जरूरत नहीं।

एक दिन रामसौं ने हलका-सा इशारा दिया था कि शायद कोई पारिवारिक झमेला है—शायद घर में झगडकर सुरेश बाबू स्त्री को लेकर चले आए हैं, एक दिन अचानक अचला ने जब अपने को ब्राह्म महिला बताया और सुरेश से गले में पहले जनेऊ दिखाई पड़ा था—उस दिन रामबाबू चौंक पडे थे, उन्हें घाट पहुँची थी, लेकिन अन्दर में इस गुप्त रहस्य का मानो एक हेतु उन्हें मिला

था, उस दिन उन्होंने यही समझा था कि हो न हो, ब्राह्म-परिवार में शादी करके ही सुरेश ने यह आफत मोल ली है और यही विश्वास धीरे-धीरे उनके मन में जम गया था।

रामबाबू वास्तव में हिन्दू थे, इसलिए उन्होंने हिंदू धर्म की निष्ठा ही पाई थी, उसकी निठुरता नहीं। ब्राह्मण का लड़का सुरेश उसकी यह दुर्गत नहीं हो होती तो उन्हें खुशी होती, परन्तु यह प्रेम विवाह, सब सब्रवियों से विच्छेद यह लुका छिपी—इसका सौन्दर्य, इसका मधुर्य भीतर ही भीतर उन्हें बड़ा मुग्ध करता था। इसे बिना जाने आश्रय देने से उनका हृदय मानो रस से अप्लावित हो उठता। इसीलिए जब भी इन दो बागी प्रेमियों का प्रणय मान मनमुटाव के रूप में उनकी नजर में आता तो बड़े दुःख के साथ उन्हें यही बात याद पड़ती कि दूसरे के यहाँ पर सफर दायर में मिलन ठोकर खा रहा है वही शायद अपने घर के स्वाधीन और स्वच्छ अवकाश में दुनिया के हजारों वाज-अवाज में शांति और सामंजस्य में स्थिति लाभ करेगा।

उनके नहाने का समय हो गया था कंधे पर अँगोछा डालकर नदी की ओर जाते जाते हँसते हुए बार बार मन में कहने लगे—आज वक्त इस बूढ़े पर बड़ा मान करके ही गई। सोचा, अपने लोगों की खातिर बड़े चाचा ने अपने यहाँ हम जगह नहीं दी! लेकिन दो दिनों के बाद जब जाकर यह देखूँगा कि उनकी आँखों में हँसी समा नहीं पा रही है तो उसी दिन इसका बदला चुका लूँगा उस दिन पूछूँगा, इस बुड्ढे के सर की कसम बिटिया, सच सच बताओ तो, पिछले गुस्से की मात्रा कितनी रह गई? देखता हूँ क्या जवाब देगी? उनका तमाम चेहरा खुली हँसी से उद्भासित हो उठा। अपनी आँखों में मानो उन्होंने साफ देखा कि होठों में हँसती हुई अचला काम का बहाना बनाकर चली गई और तुरंत रकाबी में मिठाई लेकर लौटी, मुँह को बतरह गंभीर बनाकर कहने लगी—मेरे हाथ की बनाई मिठाई है। न खाएँगे तो झगड़ा हो जायगा चाचाजी!

नहाकर पानी में खड़े हो गंगा-स्तोत्र पाठ करते समय भी बीच बीच में अचला की हँसी छिपाने की कोशिश को साग में मछली ढँकने की चेष्टा से तुलना करते हुए उन्हें बड़ी हँसी आने लगी। और पिछली रात से जो क्षोभ मन में

निरंतर बढ रहा था वह पूजा पाठ करके घर लौटते हुए कल्पना की स्निग्ध वर्षा म जुड़ा कर पानी हो गया।

तार आया कल हो सब आ रहे हैं। साथ म राजकुमार और राज पुत्र वधू के हाल म आदमी शायद ज्यादा आएँ। घर म उन्ह आज काम कम था। तिस पर आसमान का रंग-ढंग ठीक न था। कहीं पानी पडन लग और जान म अड़चन आ जाय इस डर म गमनागमन बेला मुक्त न झुक्ते टमटम ठीक करके इनाम देने का लोभ देकर तेज ने चलने को कहा। लेकिन रास्ते म ही नम हवा बहन लगी और वहा पहुँचत पहुँचते बारिश थोडी थोडी होने लगी।

अचला ने बाहर निकलकर कहा—आज ऐसे दुर्योग म क्यों निकले चाचा जी! अभी तो भीग गए होते!

उसके चहरे या आवाज म भावी आनन्द का आभास तक न देखकर बूढे का मन छोटा हो गया। इसके लिए व कतई तैयार न थ—किसी न गोया खींच कर उनकी कल्पना की माला को तोड दिया। तो भी उत्साह रखकर बोले—बाहर न निकलता तो खैर थी! पानी म भीगने का तो सम्हाल लेता लेकिन आजीवन यहा का निकाला होकर कैसे रह पाता बेटी!

इस दुर्बोध नारी को व कभी भी ठीक से पहचान नहीं सके थे। खासकर उस रात के मनूर स तो वे मारे अचरज के विक्षिप्त-विमूढ हो गए थे—और आज के आचरण म तो जैसे दिशा ही भूल गई उनकी। बात तो महज इतनी-सी थी। लेकिन साथ-ही-साथ वह पागल सी हो उनकी छाती पर औंधी पडकर फफक फफक कर रोने लगी। बोली—आप मुझे इतना प्यार क्यों करते हैं? चाचाजी! शर्म से म तो माटी म मिली जाती हूँ।

बडी देर तक बूढे कुछ बोल न सके, एक हाथ उसकी पीठ पर रखे दूसरे से उसका सिर सहलाने लगे। उनका स्नेह विगलित हृदय समाज सम्मत ब्याह, अपने सगे या कि माँ बाप स विद्रोह विच्छेद, झगडकर घर छोडना—इन पुरानी परिचित और अभ्यस्त बातो की धारा म ही बहने लगा। कोई नई खान खादन की कल्पना तक न की, इस प्रकार य अवाक् और चुप और वह रोती हुई नारी बडी देर तक एक ही रूप म खडे रहे। उसके बाद धीमे धीमे कहा—इसम शर्म कैसा बेटी? तुम मेरी सती लक्ष्मी बेटी हो बहुत बहुत दिन पहले सरोज दो ही दिन को मेरी गोदी म आकर चली गई थी—लेकिन चूँकि माया

न ताड सकी सा फिर वाप के क्लेजे मे लौट आई हो—मैं ता तुम्ह देखते ही पहचान गया था। सुरमा—उसे पास की एक कुर्सी पर बिठाकर तरह तरह से यही समझाने लगे कि इसम कोई शम, कोई लाज नही। सब दिन, सब युग मे ऐसा होता आया है। जो सती है स्वय आदि शक्ति है वा वे भी एक बार मा-वाप, अपन सगे सबसे झगडकर पति के घर चली गई थी। फिर से तुम्हे सब मिलेगा, सब होगा आज जो विमुख है वे फिर अपने हाथे बेटे पतोहू को अपन घर ले जाएँगे। देखना, मेरा यह आशीर्वाद कभी विफल न होगा।

आवेश मे व कितना क्या ता कहते गए। उसम जो सार था, छोडिए उसे लेकिन उसके भार स सुनन वाली का सिर धीरे धीरे धूल से मिल जाने को हा गया। जमकर बारिश शुरू हो गई थी। इतन मे नजर आया सुरेश भीगकर कीचड म लतपत हा वहा से ता तेजी से घर मे दाखिल हो रहा है। देखते ही अचला न जल्दी से अपनी आखें पाछ ली। और बारिश का पानी हाथ म लेकर आसू के चिह्न को धोकर बैठ गई। रामबाबू समझ गए चाहे जिस वजह से भी हो सुरमा आसू के इतिहास को स्वामी से छिपाना चाहती है।

रामबाबू को आकर देखते ही सुरेश कुछ कहना चाह रहा था कि वे व्यस्त होकर बोल उठे—बात चीत फिर होगी सुरेशबाबू मैं भागा नही जा रहा हूँ। पहले आप कपडे बदल आएँ।

सुरेश न हँसकर कहा—कुछ नही हुआ। और एक कुर्सी खीचकर बठने जा रहा था। अचला ने नजर उठाकर देखा—चाचाजी जो कह रहे है सुनने म दोष क्या है? महीना भर भी नहीं हुआ, तुम इतनी बडी बीमारी से उठे हो—बार बार मुझे कितनी सजा देना चाहते हो?

उसके कहने और देखने म इतना बडा व्यवधान था कि दोनो ही विस्मित हुए। लेकिन विस्मय की यह धारा बहने लगी, उल्टी तरफ का। सुरेश बिना कुछ बोले ही हुक्म बजाने चला गया। और रामबाबू बाहर की ओर देखने लगे।

बाहर वर्षा का विराम नही—रात जितनी बढती गई, वर्षा का प्रकोप उतना ही बढता गया। बहुत दिनो के आकर्षण से धरती लगभग सूख गई थी। उसकी सारी दीनता, सारे अभावों को एक ही रात म भर देने के लिए विधाता मानो कसम खा चुके हो।

रामबाबू की घबराहट को गौर करके अचला ने होले होले कहा—लौटने मे बडी तक्लीफ होगी ? वे हँसे। मन की चचलता को दबा कर कहा—तक लीफ मे लिए न सही इस आफ्त मे नई जगह म तुम लोगो को छोडकर मैं नही जाता। लेकिन सवेरे ही तो वे लोग आ रहे है, रात ही गए बिना क्स चले सुरमा। लेकिन लगता है, ऐसा ही न रहेगा। घण्ट भर मे थम जायगा पानी। उतनी देर रुक जाऊँ।

जो लोग आ रहे हैं, उस प्रसग मे बात शुरू हुई। और ससार, समाज, धम, अधम, पाप पुण्य, इहलोक परलोक—धीरे-धीरे जाने कितनी तरफ चल गई। दोनो इतने मशगूल हो गए कितनी देर हुई, रात कितनी बडी, कोई पता न रहा। बाहर मेघो का गरजना और बरसना कितना भयानक अँधेरा कितना गाढा हो उठा—यह भी किसी ने नही देखा। रामबाबू म जो ज्ञान, जो दशन, जो भक्ति सचित थी, अपने परम स्नेह की उस पात्री के आगे उसे उडेलने का मौका पाकर सहज दो जनो की उस बठक का माधुय से भर दिया। अचला को सिफ इतनी ही चेतना रही कि वह एक ऐसे व्यक्ति के हृदय की सत्य अनुभूति से परिचित हो रही है जो निष्पाप है, जिनकी श्रद्धा और स्नेह को उसने पाया है।

अचानक पैरो की आहट से दोनो ने मुडकर देखा नौकर खडा है। वह बोला—माँ जी रात काफी हो चुकी, बारह बज रहे हैं—खाना भिजवा दे ?

अचला ने चौंककर पूछा—बारह बज रहे है ! और बाबू ?

अभी-अभी वे खाकर सोने चले गए।

सुरेश वही जो गया फिर नही लौटा—अब ख्याल आया। गदन बढाकर अचला ने देखा, पर्दे के अदर से रोशनी दिखाई पड रही है। क्षुब्ध और लज्जित होकर रामबाबू बार बार कहने लगे—मुझसे बडी भूल हो गई बिटिया, बडी भूल हो गई। तुम्हे मैंने छेक लिया कि यह भी नही देख पाई कि उनका खाना भी हुआ या नही। खैर, अब तुम खाने आओ—

अचला ने शायद इस पर कान नही दिया। नौकर से पूछा—कोचवान समय पर गाडी क्यो नही ले आया ?

नौकर ने कहा—घोडा नही है, इस थडी पानी म निकालने का साहस न हुआ।

तो फिर कोई दूसरी सवारी क्यो नही लाया ?

नौकर चुप रह गया । लेकिन इसका मतलब गलती कबूल करना नही, प्रतिवाद करना था कि इसके लिए तो कहा नही गया ।

रामबाबू उत्कण्ठा के बजाय लज्जा से ही बार-बार कहने लगे—गाडी की जरूरत नही, और न जाएँ तो भी चला जायगा, सिर्फ अगले सुबह स्टेशन पर हाजिर हो जाना चाहिये । मैं रात को कुछ खाता नही यह झमेला भी नही है, सिर्फ तुम कुछ खा कर सो रहो, बातो मे बडी रात हो गई, बडी गलती हो गई । और एक प्रकार से जबरदस्ती खाने के लिए उसे नीचे भेज दिया । पन्द्रह मिनट के बाद जब वह ऊपर आये तो परेशान होकर बोले—बस, अब एक मिनट की भी देर न करो , सोने जाओ तुम । मैं बेंत के सोफे पर मजे मे सो रहूँगा—कोई तकलीफ, कोई असुविधा न होगी । बस, तुम चल दो । मैं देखू ।

उनके बार-बार के आग्रह निवेदन ने अचला को कैसा तो आच्छन्न-सा कर दिया । जो झूठा सम्मान, स्नेह और श्रद्धा वह अपने इस हिन्दू बाप सरीखे बूढे आदमी से अब तक केवल धोखे से ही श्रद्धा करती आ रही है, वही लोग उसके इस निहायत बुरे समय मे गला दबाकर उसे सुरेश के सूने शयन-कक्ष की ओर ढकेलने लगा । उसे याद आया ऐसी ही एक झडी-बदली की रात ने उस स्वामी विहीन किया था, आज फिर वैसे ही दुर्दिन का अभिशाप उसे सदा के लिए अपार अन्धकार मे गर्क करने को तैयार है । कल असह्य अपमान से नाक की गहरी कीचड मे उसका गला तक डूब जाएगा । यह वह साफ देखने लगी, लेकिन तो भी आज की उस झूठ की ही जय-माला ने उसे किसी भी तरह सत्य को जाहिर न करने दिया । जीवन के इस चरम-क्षण मे मान और मोह ही चिरजयी बना । उसने बाधा न दी, कुछ कहा नही पीछे पलटकर देखा तक नही—चुपचाप धीरे धीरे सुरेश के सोने के कमरे मे जाकर दाखिल हो गई ।

बाहर की उन्मत प्रवृत्ति वैसी ही मत्त बनी रही, गाढ अन्धेरे म बिजली हँस हँस उठने लगी—रात भर म कभी भी इसका कोई व्यतिक्रम नही हुआ ।

नई जगह मे रामबाबू को अच्छी नींद नहीं आई, खास करके मन म फिक्र रहने के कारण तड़के ही उनकी नीद टूट गई । बाहर निकलकर देखा, बारिश थम जरूर गई है, लेकिन घटाटाप है । नौकर-चाकर कोई जगा या नही, यह

देखने के लिए बरामदे में एक छोर पर जाकर सहसा चौंक उठे। कौन तो मेज पर सिर टेके कुर्सी पर बैठी है। करीब जाकर अचरज से बोल उठे—तुम? इतना सवेर क्या जगी बिटिया?

सुरमा ने एक नजर देखकर ही फिर मेज पर सिर रख दिया। उसका चेहरा शव जैसा सफेद, दोनों आंखों के नीचे कालिमा और जैसे पत्थर में से जैसे झरना फूट निकलता है ठीक उसी तरह उसकी आंखों से आंसू बह रहा था।

एक अस्फुट शब्द करके रामबाबू उस अधमरी नारी को एकटक देखते रह, गले के अन्दर से कोई शब्द ही बाहर नहीं निकला।

## ३८

सुबह गरम गरम मुरमुरे के साथ चाय पीकर केदार बाबू ने तृप्ति की सांस ली। जूठे बर्तन लेने के लिए मृणाल कमरे में आई तो बोले—तुम्हारे इन गरम मुरमुरे और पत्थर के प्याले की चाय में कौन सा अमृत है पता नहीं लेकिन एक महीना हो गया यहां से हिल न सका।

अचला के नाते मृणाल उन्हें बाबूजी कहने लगी थी। बोली—आप यहां से चले जाने को क्या परेशान होते हैं बाबूजी आपकी यह—मैं क्या सेवा करना नहीं जानती?

आपकी यह लड़की क्या—मृणाल असावधानी में यही कहने जा रही थी, लेकिन दबाकर उसे इस तरह से जाहिर किया। इसीलिए शायद समझते हुए भी केदार बाबू ने इसे नहीं समझना चाहा। लेकिन आवाज उनकी एकाएक करुण हो गई। बोले—भागने को अब परेशान कहां हूं बेटी! तुम्हारे हाथ की चाय, तुम्हारे हाथ का भोजन तुम्हारे इस माटी के घर को छोड़कर मुझे स्वर्ग जाने की भी इच्छा नहीं होती। उस छोटी-सी खिड़की के सामने बैठकर मैं बहुत बार सोचा करता हूं मृणाल, भगवान् की दया से दो साल बच जाऊं तो तमाम जिन्दगी कलकत्ते में जो नुकसान उठाया है, उसका रत्ती रत्ती पूरा कर लूं। और जिसमें वही पूंजी लेकर उनके आगे जाकर खड़ा हो सकूं।

कितनी बड़ी वेदना से उन्होंने यह बात कही और कैसी मार्मिक लज्जा से कलकत्ते के जीवन-भर के घर मुहल्ले को छोड़कर, सदा के समाज का त्याग कर इस जङ्गल के कोपड़े में बाकी दिन बिताने की अभिलाषा जाहिर की इसे मृणाल ने समझा, इसीलिए कोई जवाब न देकर चाय का प्याला लेकर धीरे धीरे चली गई।

यहां पर जरा शुरू की बात बता देना जरूरी है। करीब एक महीना पहले केदार बाबू यहां आए और तब से लौटकर नहीं जा सके। महिम की बीमारी के समय कलकत्ते में सुरेश के यहां इससे उनका परिचय हुआ था, मगर यहां उसके अपने घर में आकर उसका जो परिचय मिला उससे उनका तन मन सोने की जंजीर से बँध गया। उसी बंधन से वे अपने को किसी भांति छुड़ा नहीं पा रहे थे जोकि बाहर कितना काम उनका बाकी पड़ा था।

महिम से उनकी भेंट नहीं हुई। इनके आने की खबर मिलते ही वह जल्दी-जल्दी चला गया। जाते समय मृणाल ने रोकने की जिद न की, क्योंकि छुटपन से ही वह उसके संयम और सहिष्णुता बुद्धि विवेचना के प्रति उसका ऐसा अगाध विश्वास था कि उसने यह निश्चित रूप से समझ लिया कि अचला से भेंट करना इस समय उचित नहीं, इसीलिए महिम चंपत हो रहा है। उसने सोचा था, उसीका पत्र पाकर बेटी दामाद का बीच बचाव करने के लिए केदार बाबू अचला को साथ लिए दौड़े आ रहे हैं। मगर आये थे अकेले।

सुनना आज तक भी कुछ नहीं केवल संशय के बोझ से दिन दिन भारी होने वाले दिन एक एक कर निकाल रहे थे। सिर्फ ऊपर की ओर देखकर इतना समझ में आया कि आसमान में दुर्भेद्य बादलों की पर्तें कभी कटें तो कट सकती हैं। पर उसके पीछे अंधेरा ही है चांदनी नहीं है।

सुरेश की फूफी ने लापता सुरेश के लिए अकुलाकर मृणाल को चिट्ठी लिखी थी, वह चिट्ठी केदारबाबू के हाथ आई। महिम ने किसी बड़े जमींदार के यहां गृह शिक्षक की नौकरी करने की खबर भेजी है, केदारबाबू उसे भी बार-बार पढ़ गए, पर उनकी बेटी का जिक्र तक किसी में नहीं मगर दोनों पत्रों की एक एक पंक्ति, एक एक हरूफ ने अभागे पिता के कानों एक ही बात सौ बार कहा है, जिसे समझने की शक्ति ही उन्हें नहीं।

अचला उनकी इकलौती बेटी थी, बात इतनी ही नहीं, जबसे उसकी मां

न करते हुए भी एकमात्र ईश्वर को माना जा सकता है, इसका ज्ञान उन्हें है और किसी से भी कम नहीं है। हिन्दू के राम और मुसलमानों के अल्लाह एक ही है, यह सत्य भी उनका अजाना नहीं।

लज्जित होकर उनका हृदय बार-बार कहता, हम से ये किस बात में छोटे हैं? मैं इनसे कौन कौन सी बात ज्यादा जानता हूँ? इनके समाज, इनके सम्पर्क को छोड़कर हम लोग क्यों दूर चले गए हैं? और वह दूरी इतनी ज्यादा अपनों के आगे भी म्लेच्छ बन गया हूँ।

मन की ऐसी ही स्थिति में जब घर लौटे, तो दस बज रहे थे। मृणाल बोली—कल आपकी तबीयत ठीक नहीं थी बाबूजी, आज फिर तालाब में नहाने न चले जाइए। आपके लिए मैंने पानी गर्म करके रक्खा है।

करके रक्खा है? कहकर वे मृणाल की ओर देखने लगे।

नहाकर मृणाल पूजा कर रही थी, उनकी आवाज पाकर उठ आई। पीले बाल पीठ पर बिखरे थे, तसर का कपड़ा, खिला मुखड़ा—उसके अंग अंग में जैसे गहरी पवित्रता विराज रही हो। उसको देखते हुए बूढ़े ने फिर पूछा—आखिर तुमने इतना कष्ट क्यों किया बिटिया जरूरत तो नहीं थी। जरा थम कर बोले—कलकत्ते का रहने वाला हूँ नल के पानी में ही नहाने का आदी हूँ। लेकिन तुमने मुझे ऐसी पनाह दी मृणाल कि तुम्हारा तालाब भी मेरी खातिर करता है। उसके पानी से कभी मेरी तबीयत खराब नहीं होती। मैं वहां नहाने जाऊँगा बिटिया।

मृणाल ने सिर हिलाकर कहा—यह नहीं होगा। कल आपकी तबीयत खराब थी, मैं जानती हूँ। मैं पानी लिए आती हूँ आप तेल मलिए। कहकर वह जाने लगी कि केदार बाबू बोल उठे—खैर, वही सही। मगर एक बात तो बताओ मुझे दूसरे का इतना जतन करना इतनी कम उम्र में तुमने किससे सीखा? मैंने तो ऐसा कहीं नहीं देखा।

लाज ने मृणाल का चेहरा तमतमा उठा, मगर जबरदस्ती हँसकर बोली—मगर आप क्या मेरे बिराने हैं बाबूजी?

केदार बाबू बोले—नहीं, बिराना नहीं हूँ। मगर यों टालने से काम नहीं चलने का। जवाब देकर जाना पड़ेगा।

मृणाल ने वैसी ही लाज भरी हँसी के साथ कहा—यह कौन-सा ऐसा

मरी, तब म उन्होंने ही मा की तरह उसे गोदी म पाल पोसकर इतनी बडी किया। उस लडकी के भारी अमङ्गल की आशका स उनका शरीर दिन दिन दुबला और नए सान मा रङ्ग वाला होता जा रहा था, अथच अमङ्गल जिस रास्ते का इशारा कर रहा था वह रास्ता सभी पिता के लिए ससार में सबसे ज्यादा बन्द है।

गाँव के दो चार बूढ पडोसी कभी कभी उनस गप-शप करने आते, लेकिन सकोच स वे कभी किसी के यहा नही जाते। मृणाल अनुरोध करती तो कहते —जरूरत क्या है बेटी मेरे जस म्लेच्छ का किसी के यहाँ न जाना ही अच्छा है।

मृणाल न कहा—ना वहीं क्या जाएँगे? इसका कोई जवाब न देकर छाता लिए व खेतों की ओर निकल पडते। खेतिहरा स मिल मिलकर बात करते—उनके सुख-दुःख घर गिरस्ती न्याय अन्याय पाप पुण्य की बात—ऐसी कितनी ही तरह की बात करते करते जब बेला बढ जाती तो घर जाते। सुबह चाय पीने क बाद यही उनका रोज का काम था।

जन्म स ही कलकत्तावासी थे। शहर स बाहर जो असख्य गाव है उनस उनका नाता ही टूट गया था। धर्म बदलने के बाद अपने सग भी न रहे अत-एव ज्यादातर नागरिकों के समान बिना जाने ही व भी इन लोगों के बारे मे अजीब ख्याल रखते थे यह कुछ अनोखी बात नहीं। जो अपढ अनगिनती किसान दूर गाव म ही सारी जिंदगी काट देते हैं शहर का मुह देखना भी जिन्ह शायद ही नसीब होता है ऐसो को व एक प्रकार स जानवर ही समझा करते थे लेकिन बदनसीबी ने आज जब अपने दो विष दात उनके माथे म घुसा कर उनके मन को ही समाज स फेर दिया, तो जितना ही इन अनपढ गरीब किसानो स उनका परिचय होने लगा, उतनी ही उनकी श्रद्धा और स्नेह उनकी तरफ उमड पडने लगा। दूसरी ओर अपने समाज, उसके आचार विचार, शिक्षा-संस्कार, धर्म उसकी सभ्यता और कायदे-कानूनो के खिलाफ उनका हृदय विद्वेष और वितृष्णा स भर उठने लगा।

उन्हे स्पष्ट मालूम होने लगा कि अपढ होते हुए भी वे अशिक्षित नहीं हैं। वरन पहले की प्राचीन सभ्यता उनकी अस्थि मज्जा म घुली मिली है। नीति की मोटी बातो को जानते है। किसी धर्म से उन्हे वैर नहीं क्योकि ससार के सारे ही धर्म मूलतया एक है और सतीस करोड देवी देवताओ का स्वीकार

न करते हुए भी एकमात्र ईश्वर को माना जा सकता है इसका ज्ञान उन्हे है और किसी से भी कम नही है। हिन्दू के राम और मुसलमानो के अल्लाह एक ही हैं, यह सत्य भी उनका अजाना नही।

लज्जित होकर उनका हृदय बार बार कहता, हम स य किस बात मे छोटे हैं ? मैं इनस कौन कौन सी बात ज्यादा जानता हूँ ? इनके समाज, इनके सम्पक का छोडकर हम लोग क्यो दूर चले गए है ? और वह दूरी इतनी ज्यादा अपना के आग भी म्लेच्छ बन गया हूँ।

मन की ऐसी ही स्थिति मे जब घर लौटे, तो दस बज रहे थे। मृणाल बाली—कल आपकी तबीयत ठीक नही थी बाबूजी, आज फिर तालाब मे नहान न चले जाइए। आपके लिए मैंने पानी गम करके रक्खा है।

करके रक्खा है ? कहकर वे मृणाल की ओर देखने लग।

नहाकर मृणाल पूजा कर रही थी, उनकी आवाज पाकर उठ आई। पीले बाल पीठ पर बिखरे थे, तशर का कपडा, खिला मुखडा—उसके अग-अग मे जसे गहरी पवित्रता विराज रही हो। उसका देखते हुए बूढे ने फिर पूछा—आखिर तुमने इतना कष्ट क्यो किया बिटिया, जरूरत तो नही थी। जराथम कर बाले—कलकत्ते का रहने वाला हूँ नल के पानी मे ही नहाने का आदी हूँ। लेकिन तुमने मुझे ऐसी पनाह दी मृणाल कि तुम्हारा तालाब भी मेरी खातिर करता है। उसके पानी से कभी मेरी तबीयत खराब नही होती। मैं वही नहाने जाऊँगा बिटिया।

मृणाल ने सिर हिलाकर कहा—यह नही होगा। कल आपकी तबीयत खराब थी, मैं जानती हूँ। मैं पानी लिए आती हूँ, आप तेल मलिए। कहकर वह जाने लगी कि केदार बाबू बोल उठे—खर, वही सही। मगर एक बात तो बताओ मुझे दूसरे का इतना जतन करना इतनी कम उम्र मे तुमने किससे सीखा ? मैंने तो ऐसा कही नही देखा।

लाज न मृणाल का चेहरा तमतमा उठा, मगर जबरदस्ती हँसकर बोली—मगर आप क्या मेरे बिराने है बाबूजी ?

केदार बाबू बोले—नही, बिराना नही हूँ। मगर या टालने से काम नही चलने का। जवाब देकर जाना पडेगा।

मृणाल ने वैसी ही लाज भरी हँसी के साथ कहा—यह कौन-सा एसा

कठिन काम है कि कोशिश करके सीखना पड़े। यह तो जन्म से ही हम सीखे होते हैं। लेकिन पानी आपका ठण्डा हो रहा है—

होने दो। कहकर केदार बाबू गम्भीर होकर बोले—मैं कुछ दिनों से ठीक यही सोच रहा हूँ मृणाल। मनुष्य सीखता है जब तैरता है, पर जो चिड़िया जल पर है, वह जनमते ही तैरती है। यह सीखना उसे कोई सिखा जरूर नहीं सकता पर काम को उड़ाकर तो फल नहीं पाया जा सकता? यह तो भगवान् का नियम नहीं। कहीं न कहीं किसी न किसी प्रकार सीखने का यमना उसे झेलना ही पड़ेगा। इसीलिए उस जलचर पक्षी की नाई तुमने जो बसेरे में ही जन्म से अनायास ही इतनी बड़ी विद्या हासिल कर ली, सो मैं तुम लोगों के उस विराट समाज बसेरे की ही बात रात दिन सोच रहा हूँ। सोचता हूँ—

मगर आपका पानी तो—

पानी को छोड़ो भी बिटिया। तालाब तो सूखा नहीं जा रहा है। मैं यही सोच रहा हूँ कि यह बूढ़ा आदमी नन्हे नादान की तरह चुपचाप तुमसे कितना कुछ सीख रहा है इसकी तो तुम्हें खबर नहीं! ठाकुर देवता तन्त्र मन्त्र पर अभी भी विश्वास नहीं हुआ लेकिन तो भी जभी बिटिया को देखता हूँ कि नहाकर फीका फीका मटके का कपड़ा पहने आहिक को जा रही है, तभी जी में आता है कि फिर से गले में जनेऊ डालकर मैं भी पूजा पर बैठ जाऊँ।

मृणाल ने कहा आप अपने समाज अपने आचार को छोड़कर दूसरा का आचार क्या पालेंगे? उसी को कौन दोष दे सकता है?

केदार बाबू बोले—कोई दे सकता है या नहीं और बात है मगर मैं उसकी हँसी नहीं कर सकता। अच्छा हो या बुरा, बुढ़ापे में उसे त्यागने की सामर्थ्य नहीं है बदलने की कोशिश भी नहीं। यही राह पकड़ कर जीवन की आप सीमा तक चलना है! लेकिन जब तुम्हें देखता हूँ इसी छोटी उम्र में इतना बड़ा आत्म-त्याग, जो स्वर्ग गए उनके प्रति ऐसी निष्ठा उन्हीं की मा को माँ मान कर—घर छोड़ो, और न कहूँगा—परन्तु मैं जिसमें रहकर बड़ा हुआ, मन ही मन उसकी तुलना किए बिना भी तो नहीं रह सकता। समाज से अलग जो धर्म है उससे लिए तो अब आस्था नहीं रख पाता मृणाल।

मृणाल मन ही मन क्षुण्ण हुई। उसके व्यक्तिगत जीवन की बदनसीबी को या अपनी सामाजिक शिक्षा दीक्षा पर आरोपित करना, उसे अविचार लगा।

बोली—बाबूजी जब आप ठीक इसी तरह से हमारे समाज को भी देखेंगे, तो उसमें से भी बहुत दोष नजर आएँगे। तब देखेंगे कि हम भी अपने दोष समाज के मत्थे ही मढ़ देने को आमादा हैं। हम भी—

लेकिन बात पूरी होने के पहले ही केदार बाबू ने बाधा दी। बोले—मगर मैं तो आमादा नहीं हूँ बिटिया। तुम्हारे समाज में खामी हो, खराबी हो, मगर तुम तो हो! सिर पीट कर मैं मर भी जाऊँ तो यह वस्तु यहाँ नहीं मिलने की—

मृणाल का मुँह फिर शर्म से लाल हो उठा। बोली—मैं कहे देती हूँ बाबूजी, बार बार मुझे इस तरह से लजाएँगे तो ऐसी भागूँगी कि मैं फिर आप मुझे खोज कर पाएँगे नहीं।

बूढ़े तुरत कुछ बोल न सके सिर्फ चुपचाप उदास हो उसे देखते रहे, उसके बाद धीरे धीरे बोले—मैं भी तुम्हें कहे देता हूँ, तुम्हें यह हरगिज नहीं करने दूँगा मैं। तुम मेरी आँखों की पुतली हो, मेरी एक अकेली पनाह। इस निकम्मे अनाथ बूढ़े के भार से जिस दिन तुम्हें मुक्ति मिलेगी, वह दिन ज्यादा दूर नहीं, पर मैं खूब जानता हूँ, वह मुझे इन आँखों देखना न पड़ेगा। कहते कहते उनकी आँखों के कोने गीले हो आए।

आस्तीन से आँख पोंछते हुए बोले—मेरा एक काम अभी बाकी रह गया है, वह है महिम से भेंट करना? मैं उससे साफ साफ पूछना चाहता हूँ कि वह इस तरह भागा भागा क्यों चलता है? ऐसा भी हो सकता है कि वह जिन्दा नहीं है।

आप नाहक ऐसा क्या डरते हैं बाबूजी?

डर? बूढ़े के मुँह से एक दीर्घ निश्वास निकल गया। बोले—सन्तान का मरना ही बाप के लिए सबसे बड़ा डर नहीं है बिटिया!

## ३९

इकलौती बेटी की मौत से भी बड़ी दुर्गति पिता की नजरों में बड़ी हो उठी है, उसके आभास मात्र से मृणाल लज्जित और कुण्ठित होकर खिसक पड़ी

—और उस साध्वी विधवा की वह लज्जा ठीक मुद्गर के समान केदार बाबू की छाती पर आ लगी। बड़ी देर तक व अकेले चुपचाप अपनी सफेद दाढ़ी पर हाथ फेरते रहे, उसके बाद एक लम्बा निश्वास छोड़कर तल के कटोरे का अपनी ओर खींच लिया।

आज सवेरे आसमान साफ था, लेकिन दोपहर के कुछ बाद से ही बदली घिरने लगी। केदार बाबू बिस्तर पर से अभी-अभी उठकर पश्चिम तरफ का खिड़की को खोलकर बाहर देख रहे थे, सामने एक अमरूद का पेड़ फूला स लद गया था और उस पर अनगिनती मधु माछियों के हृष्ट कलरव का अन्त नहीं था। थोड़ी ही दूर पर लगी रस्सी से बंधी मृणाल के अपने हाथों धोई पोंछी मोटी ताजी गाय चर रही थी, जिसकी पीठ पर से गांव की राह का थोड़ा हिस्सा दिखाई दे रहा था।

आपकी चाय अब ले आऊँ बाबूजी?

केदार बाबू ने उलटकर देखा—अभी ही ले आओगी?

वाह, बेला थोड़े ही रह गई है।

हंसकर तकिए के नीचे से घड़ी निकालकर बोले—लेकिन तीन भी तो नहीं बजे बिटिया!

मृणाल बोली—बेला स ना बजे, पर आपने तो दिन म ठीक से खाया नहीं है।

केदार बाबू मन ही मन समझ गए इनकार बेकार है। बोले—खैर, तो लाओ।

मृणाल जरा देर स्थिर रहकर बोली—अच्छा आप तो कहा करते है, मुझे चावलें बहुत अच्छे लगते है।

गलत तो नहीं कहता बेटी।

तो थोड़ा सा वह भी ले आऊँ?

वह भी? अच्छा—लाओ कहकर उसे देखते हुए जबर्दस्ती जरा हँसे। मृणाल के चले जाने पर फिर उस झरोखे से बाहर देखा, तमाम धुँधला हो गया है और तुरत आंसू की पांच-छ बूंदें उनकी आंखों से चू पड़ी। झटपट आंसू की रेखा को पोंछकर अपने चेहरे को शांत और सहज बनाने के ख्याल से इमसन की खुली पड़ी किताब को देखने लगे।

किताब के पन्नो म चाहे जो हो, मन म ऐसी बात की छाप पडने लगी कि यह सृष्टि कितनी अज्ञेय और अनोखी है ! दुनिया म दिन जब लेखे के अन्दर आ रहे, तभी क्या इस लब जीवन की पिछली अभिन्तता पिछले आयोजन को रद्द करक फिर से नई कमाई की जरूरत हो गई मैं खूब देख रहा हूँ कि मरे मानव जन्म का मारा अतीत ही बेकार गया और यह समझना भी वाकी न रहा कि इस लबी फाँकी को भर लेने मे यह एक महीना ही काफी हुआ।

द्वार पर पैरो की आहट हुई। उन्होने सिर उठाकर देखा। पत्थर क कटोरे म चाय और तश्तरी म भुने चावल लेकर मृणाल आई। दोनो हाथ बढा कर उन चीजो को लेते हुए बोले—अब पता चल रहा है कि आज दिन म ठीक से भोजन नही हुआ। लेकिन देखो—

नहीं नही, आप बात करेंगे, तो सब ठडा हो जाएगा।

केदार बाबू ने चुपचाप चाय के प्याले को होठो से लगाया और उतार-कर रखते हुए एक निश्वास क साथ बोले—मै यही कामना करता हूँ मृणाल, अगले जन्म मे तुम मेरी बेटी होकर पैदा हो। कलेजे स लगाकर पालना मुझे खूब आता है बिटिया, जिसम उस कला को जी भर काम म ला सकू।

आखिरी तरफ उनका गला काप गया। मृणाल एसी ही चचा का सबस ज्यादा डरती थी। इसीलिए उनके उस आवेग की ओर ख्याल किए बिना ही बोली—वाह, ठीक तो है, आपकी और और, सन्ताना म जिसम एक म भी होऊ।

केदार बाबू तुरत सिर हिलाकर बोल उठे—नही नही, और और नही, और-और नही। अकेली तुम—मेरी इकलौती बेटी। अकेली तुम्ही मरा कलेजा भरे रहोगी। अबकी जो कुछ तुमस सीखकर जा रहा हूं, वह सब एक-एक करके अपनी बेटी को सिखाकर फिर इसी तरह उससे बुढाप म सब वापस लेकर उस लोक की यात्रा करूँगा। कहकर उन्होंने छिप छिपे एक बार अपनी आख मे हाथ लगाया।

मृणाल ने दुखी होकर कहा—आप नाहक ही मुझे बार बार अप्रतिभ करते ह बाबूजी। मैं जानती क्या हूँ ?

मेरा भोजन ठीक नही हुआ, यह मैं नहीं जानता था, तुम जानती थी।

यह ऐसा क्या जानना हुआ ? जिसके आख है वही देख सकता है।

लेकिन वही आख ही तो सबके नहीं होती मृणाल ! थोडा रुककर बोले

—लेकिन मैं सबसे ज्यादा हैरान इस पर हूँ मृणाल कि ईश्वर कहाँ, कब और किस उपाय से मनुष्य के वास्तविक अपने जन से मिला देते हैं, यह कोई नहीं जानता। इसमें न तो कोई आडम्बर है, न रिश्ते की कोई बला और समय का कोई हिसाब। पल में कहाँ से क्या हो जाता है—केवल जब उसे कलेजे में पाता हूँ तो जी में आता है अब तक इतने बड़े फाके को झेल कैसे रहा था?

मृणाल ने धीरे-धीरे कहा—यह ठीक है बाबूजी, वरना आपकी एक एक बेटी इस जंगल में पड़ी है, अब तक तो कभी उसकी खोज पूछ नहीं की!

केदार बाबू बोले—लेने की अपनी क्या मजाल, जब तक वे हुक्म न दें। और जब उनका हुक्म हो गया, तनिक भी अड़चन न आई, कहाँ से कौन तो खींच लाया। आज लोग देख रहे हैं बस, महीने भर की तो जान-पहचान। मगर मुझे मालूम है यह तो कोई किराए के मकान का हिसाब नहीं कि पैमाने से माहवारी लेखा लगेगा। यह तो जैसे कितने युगों से तुम्हारी छाया में ही बैठा हूँ—इसका दिन, महीना और बरस क्या? कहकर वे फिर थोड़ा रुके। मृणाल खुद भी कुछ कहने जा रही थी पर एकाएक उनके मुँह की ओर देखकर अवाक् रह गई। उसे लगा, इस बूढ़े के कलेजे के अन्दर इतने दिनों से दुःख की जो चिता जल रही थी वह जाने कब तो बुझने को आई और उसकी अनिमेष आभा ने उनके चेहरे को जो जरा सा चमका दिया है उसीका मानो जोत में कौन सा गहरा स्नेह मानो असीम करुणा से घुल मिलकर निखर आया है।

कुछ देर तक कोई कुछ न बोले—मृणाल की झुकी नजर फर्श पर वैसी ही टिकी रही। यह नीरवता केदारबाबू ने ही भंग की। बोले—मृणाल, मैंने एक धर्म छोड़कर दूसरे की दीक्षा ली है, ऐसे में औरों के आगे न सही, कम से कम अपने आगे जवाबदेही का दायित्व है। अब तक उसे टालता गया हूँ पर अब नहीं। धर्म के बारे में अब जिससे यह बात समझ पाऊँ—

कहने के लिए मृणाल ने नजर उठाई कि केदार बाबू बोल उठे—डरो मत बिटिया, बार-बार तुम्हारा नाम लेकर अब मैं तुम्हें संकोच में नहीं डालूँगा, परन्तु इतने दिनों के बाद इस सत्य को मैं समझ पाया हूँ कि कि लड़ झगड़ कर और चाहे जो कुछ मिले, धर्म, नहीं मिल सकता।

उनके मर्म के वाक्य का समर्थन कर मृणाल धीरे धीरे बोली—यह सच हो

सकता है, पर जिस धर्म को मैंने अच्छा समझा उसे अपनाने के लिए लड़ना-झगड़ना ही पड़ेगा, ऐसा तो मैं कुछ नहीं देखती।

केदार बाबू बोले—मैंने भी वास्तव में कभी पाया था यह नहीं लेकिन जरूरत तो हो जाती है बिटिया! किसी भी चीज का परित्याग तो हम प्रेम से, प्रीति से नहीं करते। जिसे छोड़ जाते हैं उसके लिए मन सदा छोटा बना रहता है, वह फिर मिटता नहीं इसीलिए तो आज कैफियत का भागी बन गया हूँ। लेकिन तुम्हें जन्म से जो मिला है वह बुरा हो या भला, उसी को आधार किए चलती हो! दोनों का फर्क सोच देखो जरा।

मृणाल मौन ही रही, कोई जवाब न सूझा। केदार बाबू भी कुछ देर चुप रह कर बोले—आज जमाने की भूली बातें भी धीरे-धीरे जग रही हैं बिटिया, मगर इतने दिनों तक ये कहाँ छिपी थीं।

मृणाल ने नजर उठाकर पूछा—किसकी बात बाबूजी? केदार बाबू बोले—अपनी बात। बड़े होने लायक भगवान् ने अक्ल नहीं दी, बड़ा हो भी कभी नहीं पाया। मैं मामूली आदमी हूँ नाना से मिल जुलकर ही काल काटा, लेकिन हम में जो बड़े हैं, जो समाज के शिरोमणि हैं समाज के आचार्य हो गए हैं उन्हीं के उपदेशों को सदा भक्ति से श्रद्धा से मानता आया हूँ। उन्हीं के जाने कब के भूले हुए वाक्य मुझे याद आ रहे हैं। तुम कह रही थी मृणाल, धर्म बदलने में अच्छे को चुन लेने में झगड़े की नौबत क्या आएगी, झगड़े की जरूरत ही क्या पड़ेगी? मैं भी तो अब तक यही समझता रहा, यही कहता फिरा। लेकिन आज पता चला, जरूरत थी। आज देख पाया कि हिन्दुओं में जो लोग यह शिकायत करते हैं कि देश विदेश में उनका सर जितना हमने नीचा किया है उतना ईसाई पादरियों ने भी नहीं किया—उनकी शिकायत को आज झूठ कहकर तो नहीं उड़ा सकते! वास्तव में विदेशी विधर्मियों के हाथ हम जैसे विभीषण तो कोई नहीं।

मृणाल बहुत चंचल हो उठी, मगर उन्होंने उसका ख्याल ही नहीं किया, कहने लगे—सिर्फ झगड़े की बात अगर नहीं होती तो हम में से जो सब बातों में आदर्श हैं, यहाँ तक कि जो मनुष्य में ही आदर्श कहाने योग्य हैं, उनके मुँह से धर्म मन्दिर में, धर्म की वेदी पर खड़े होकर राम के लिए रमा, हरि के लिए हारी, नारायण के लिए नारेन क्या निकलता? तो फिर सबसे पुकार

मुँह म अब किसी की शिकायत नही सुनोगी । थोडा रुककर फिर बोले—मगर मुझसे खीझना मत बेटी मैंन ठीक इसी के लिए यह प्रसङ्ग नहीं उठाया ।

उनक गीले कण्ठस्वर स चकित होकर मृणाल बाली—आपन यह क्या कहा बाबूजी, मैं आपस कभी खीझी हूँ ?

जोर से सिर हिलाकर केदारबाबू कहन लगे—कभी नही बिटिया, कभी नही । तुम बिटिया हो न मेरी इसीलिए मेरा सब अत्याचार-उपद्रव हँसकर ही सहती आई हो । लेकिन कलेजे का खून देकर इतने दिना म जिस सत्य को पाया है महज वही दिखाना चाह रहा था तुम्हें पराई निन्दा शिकायत की नीयत नही थी । आज मैंन समझा कि कभी जिस प्रकार जमात बनाकर, मनसूबा गाठकर हमन धम को पकडना चाहा, धम वैसे हर्गिज नही पकडा जा सकता । वह अगर खुद पकडाई न दे तो शायद पकड ही म न आए । परम दु ख की मूर्ति धारण कर जिस दिन वे मनुष्य की चरम वदना पर पाँव रखे अकेल आकर खडे हात हैं, उस समय उन्ह पहचान पान की जरूरत है । जरा भी भूल भ्राति की गुजाइश नही, मुँह फेरकर चले जाते है वे ।

जिस प्रसङ्ग को मृणाल टालकर बार बार कतराती जा रही है, यह उसी का इशारा है, यह समझकर उसके सकोच और पीडा का अन्त न रहा लेकिन आज कोई बहाना बनाकर उसन भागन की कोशिश न की, चुपचाप बैठी रही ।

बार बार बाधा पाकर इधर केदारबाबू की निगाह भी पनी हो गई थी, आज लेकिन उन्होन भी कोई ख्याल नही किया, कहत गए—बिटिया, एक बात बार-बार कहकर भी मेरा जी नही भर रहा है कि इतनी बडी दुनिया मे एक तुम्हारे सिवा मेरा अपना जन और कोई कभी न था, इसीलिए नहीं जानता कैसे मेरे अन्तिम दिनो का सारा बाय सब बुरा-भला तुम्हारे ही ऊपर आकर टिका है । जो सभी विधि व्यवस्था के मालिक है यह व्यवस्था उन्ही की ह । चूँकि मैंने इस निस्सदेह समझ लिया है, इसीलिए मुझे काई शम, कोई झिझक नही । पहले मन मे कैसा तो लग रहा था कि मैं आ टपका, मगर आज वह सब बला मेरे मन से निकल गई है ।

मृणाल सिर उठाकर जरा हँसी । थोडा आगा पीछा करके केदारबाबू फिर बोले—फिर भी कसा तो लगता है फिर भी गले से बात बाहर नही होना चाहती ।

तो छोडिए, न ही कहो वैसी बात तो क्या ।

कर जोर गले से यह क्या कहते कि ये अभागे अगर बेमौत नहीं मरना चाहते हैं, तो हमारे इस नये घाट पर आएँ। धर्मोपदेशक के इस ताल ठोकाई से समाज के सारे लोगों का लहू जैसा भक्ति से गर्म, वैसे ही श्रद्धा से रूखा हो उठता, आलोचना के उत्साह की मात्रा भी वहीं तिल भर कम नहीं होती लेकिन आज, जीवन की शेष सीमा पर पहुँच कर समझ रहा हूँ कि उसमें उपदेश कुछ भी हो, तो हो, भ्रम के रहने की गुंजाइश न थी।

मृणाल ने दुःखी होकर कहा—यह सब आप मुझे क्यों सुना रहे हैं बाबूजी? वे सभी तो मेरे पूज्य हैं, नमस्य हैं। कहकर उसने हाथ जोड़कर कपाल से लगाया। उस भक्तिमती तरुणी के विनम्र मुखड़े की ओर देखकर मानो वे विभोर हो रहे और थोड़ी देर में नौकरानी के बुलाने पर मृणाल के चले जाने पर भी वे वैसे ही स्थिर बैठे रहे।

सास क्या कह रही थी—मृणाल यह सुनकर जब लौटी, तो अकस्मात् आवेग से दोनों हाथ फैलाकर केदार बाबू बोल उठे—तमाम जिन्दगी मेरी क्या इसी तरह औरों की खामी खराबी की शिकायत करते ही बीतेगी? इससे क्या कभी छुटकारा नहीं पाऊँगा?

मृणाल ने कहा—आपकी मच्छरदानी का कोना जरा फट गया है, थोड़ा खिसक जाइए न, सिलाई कर दूँ। मृणाल ने ताख पर से सिलाई का छोटा-सा डब्बा उतारा। केदारबाबू उतर कर एक मोढ़े पर बैठ गए और काम में लगी हुई मृणाल के झुके मुखड़े की ओर एकटक ताकते रहे। वह बिना किसी ओर देखे, सुने अपना काम करने लगी, लेकिन उसे देख-देखकर केदारबाबू की आँखें अकारण ही भर आने लगीं और बार-बार धोती के छोर से वे उन्हें पोंछने लगे।

सिलाई खत्म करके डब्बे को जगह पर रखकर मृणाल ने पूछा—रात आप क्या खाएँगे?

इस सवाल से केदारबाबू ने अचानक जोरों का एक निश्वास फेंककर अपने अश्रु करुण होठों पर हँसी लाते हुए कहा—रात के भोजन के लिए अभी अनुमान की जरूरत नहीं बिटिया, वह उसी समय सोचा जायगा। मगर तुम जरा थिर होकर उठो तो! जरा रुककर बोले—इस अपराध का यही अन्त है। मेरे

मुँह से अब किसी की शिकायत नहीं सुनोगी। थोड़ा रुककर फिर बोले—मगर मुझसे खीजना मत बेटी, मैंने ठीक इसी के लिए यह प्रसङ्ग नहीं उठाया।

उनके गीले कण्ठस्वर से चकित होकर मृणाल बोली—आपने यह क्या कहा बाबूजी, मैं आपसे कभी खीजी हूँ?

जोर से सिर हिलाकर केदारबाबू कहने लगे—कभी नहीं बिटिया, कभी नहीं। तुम बिटिया हो न मेरी इसीलिए मेरा सब अत्याचार-उपद्रव हँसकर ही सहती आई हो। लेकिन कलेजे का खून देकर इतने दिनों में जिस सत्य को पाया है, महज वही दिखाना चाह रहा था तुम्हें पराई निन्दा शिकायत की नीयत नहीं थी। आज मैंने समझा कि कभी जिस प्रकार जमात बनाकर, मनसूबा गाठकर हमने धर्म को पकड़ना चाहा, धर्म वैसे हर्गिज नहीं पकड़ा जा सकता। वह अगर खुद पकड़ाई न दे तो शायद पकड़ ही में न आए। परम दुःख की मूर्ति धारण कर जिस दिन वे मनुष्य की चरम वेदना पर पाँव रक्खे अकेले आकर खड़े होते हैं, उस समय उन्हें पहचान पाने की जरूरत है। जरा भी भूल भ्रांति की गुंजाइश नहीं, मुँह फेरकर चले जाते हैं वे।

जिस प्रसङ्ग को मृणाल टालकर बार-बार कतराती जा रही है, यह उसी का इशारा है, यह समझकर उसके सकोच और पीड़ा का अन्त न रहा, लेकिन आज कोई बहाना बनाकर उसने भागने की कोशिश न की, चुपचाप बैठी रही।

बार बार बाधा पाकर इधर केदारबाबू की निगाह भी पैनी हो गई थी, आज लेकिन उन्होंने भी कोई ध्यान नहीं किया, कहते गए—बिटिया, एक बात बार-बार कहकर भी मेरा जी नहीं भर रहा है कि इतनी बड़ी दुनिया में एक तुम्हारे सिवा मेरा अपना जन और कोई कभी न था, इसीलिए नहीं जानता कैसे, मेरे अन्तिम दिनों का सारा बोझ, सब बुरा-भला तुम्हारे ही ऊपर आकर टिका है। जो सभी विधि-व्यवस्था के मालिक हैं, यह व्यवस्था उन्हीं की है। चूँकि मैंने इसे निस्सन्देह समझ लिया है इसीलिए मुझे कोई शर्म, कोई झिझक नहीं। पहले मन में कसा तो लग रहा था कि मैं आ टपका, मगर आज वह सब बला मेरे मन से निकल गई है।

मृणाल सिर उठाकर जरा हँसी। थोड़ा आगा-पीछा करके केदारबाबू फिर बोले—फिर भी कैसा तो लगता है फिर भी मन में बात बाहर नहीं होना चाहती।

तो छोड़िए, न ही कहो वैसी बात तो क्या।

केदारबाबू गरदन हिलाकर बोले—उँहूँ, अब नहीं रहने की, नहीं—मेरा स्थान है, वह सुरेश ही के साथ—

मृणाल को भी यह धोखा होता रहा है, इसीलिए वह सिर हिलाकर चुपचाप बैठी रही बोली नहीं। कुछ देर सन्नाटा सा रहा। बड़ी कोशिश से खुद-खुद को पराजित करके मानो वे बोले—एक बार महिम के पास जाना चाहता मृणाल एक बार उसके मुँह से सुनना चाहता हूँ बस इसीलिए मेरी छाती धू धू जल रही है। मगर अकेले उसके सामने जाकर मैं खड़ा कैसे हूँगा ?

मृणाल ने तुरत अपनी करुणा भरी आँखें अभागे बूढ़े के शर्माए और भयभीत चेहरे पर टिकाकर कहा—आप अकेले क्यों जाएँगे, जाना ही पड़ेगा तो हम दोनों साथ चलेंगे।

सच चलोगी ?

बेशक चलूँगी। इसके सिवा आपको अकेले मैं छोड़ ही कैसे सकती हूँ ? आप चाहे जहाँ जाएँ मैं साथ गए बिना न मानूँगी कह देती हूँ। मुझे कोई साथ नहीं ले जाता बाबूजी मैं कहीं नगर घूम घाम नहीं पाती।

केदारबाबू ने कोई जवाब नहीं दिया दोनों हथेलियों से गाल का सहारा लिए जाँघ पर कुहनी टिकाकर झुक गए और देखते ही देखते नजर आया भीतर के घुमड़ते आवेग से उनके सूखे दुबल शरीर का एक-से दूसरा छोर तक थर थर कांपने लगा।

मृणाल चुप उनके सिरहाने के पास बैठी रही कोई बात सान्त्वना का एक शब्द तक न कहा। इकलौती बेटी की घिनौनी दुर्गत से जिस पिता का हृदय छिन्न रहा हो, उसे दिलासा देने योग्य उस था भी क्या !

काफी देर इसी तरह बीती, उसके बाद अपने को सम्हालकर केदारबाबू ने कहा—बिटिया !

उनकी शक्ल देखकर मृणाल का कलेजा मानो टूक-टूक हो गया, मगर आँसू जब्त करके बोली—क्या बाबूजी ?

दुनिया में वेदना की मात्रा इतनी भी हो सकती है, यह तो मैंने कभी सोचा तक नहीं मृणाल ! इससे छुटकारे की क्या कोई राह नहीं ? कोई नहीं बता सकता ?

लोग तो लेकिन मौत की यतणा भी सह सकते हैं।

केदारबाबू बोले—मेरे लिए वह मर चुकी, तुम यही तो कहा चाहती हो

बिटिया ! बहुत हद तक वही है। बहुत बार मेरे जी मे भी आया है—लेकिन मृत्यु का शोक जितना बडा होता है, उनकी शांति, उसका माधुर्य भी उतना ही बडा होता है। लेकिन इस सात्वना का गुंजाइश कहा है मृणाल ? यह असह ग्लानि यह बेहद शर्म मेरे कलेजे की राह रोके इस तरह अडी है कि उह खिसका सकू, ऐसी जरा भी जगह नही। इतना कहकर व चुप हो गए और छाती पर हाथ रखकर फिर धीरे-धीरे बोले—सन्तान को जो मौत देते है, उनको हम यही कहकर क्षमा करते हैं कि उनके कार्य कारण को हम नही जानते ! हम—

बीच ही म टोककर मृणाल बोल उठी—तो हम भी वही कर सकते है बाबू जी ! चाह कोई हो, जिसका कार्य कारण हमे मालूम नही उसे माफ न भी कर सकें, कम से-कम मन ही मन उसका विचार करके उसे अपराधी तो न बनायगे !

वह ठीक जैसे चौक उठे और दोनो आँखो की तेज नजर दूसरे पर टिकाकर बुत जस बठे रहे।

मृणाल न कहा और सझले दादा स मैंने यह सुना है कि दुनिया म ऐसे अपराध कम ही हैं, जिन्ह माफ नही किया जा सकता। जोश म केदार बाबू तनकर बठ गए। बोले—इस अपराध को भी कभी कोई माफ कर सकता है मृणाल ?

मृणाल चुप रही, व वसे ही ओज से कहने लगे—हर्गिज नही, हर्गिज नहीं। बाप होकर उसके इस बुरे गुनाह को मैं माफ नही कर सकता, किसी भी तरह नहीं। वह क्षमा योग्य नही, उसे क्षमा करना उचित नही—यह मैं तुमसे साफ कह देता हूँ।

मृणाल धीरे धीर बोली—योग्य-अयोग्य तो विचार की बात है बाबूजी उसे क्षमा नही कहते। फिर क्षमा का फल क्या केवल अपराधी ही पाता है, जो क्षमा करता है, वह कुछ नही पाता ?

बूढ़े को जसे काठ मार गया। उसकी शाँति स्निग्ध बाता ने उन्ह मानो अभिभूत कर दिया। जरा देर मौन से रहकर अचानक बोल उठे मैंने इस ढग से तो कभी सोचा नही मृणाल। तुमसे आज मानो मैंने एक नया तत्त्व सीखा। ठीक तो ! जो लेता है, उसी के हिसाब म सोलहो आना वसूल देकर दादा के खाते शून्य का आँकडा रखना होगा ? यह हर्गिज सत्य नही हो सकता ! ठीक

है किसका गुनाह कितना बडा है, इसका फसला जो चाहे सो कर, मैं सिर्फ अपनी ओर देखते हुए क्षमा करूँगा ! यही तुम्हारा कहना है न ?

आप यह कहकर मेरा अपराध क्यो बढाते हैं बाबूजी ?

तुम्हारा अपराध ? ससार मे इसकी भी जगह है बेटी ?

मृणाल एकाएक उठ खडी हुई। बोली—माँ जी मुझे आवाज द रही हैं शायद—मैं आई। और वह तेजी स कमरे स बाहर चली गई।

## ४०

मृणाल उठकर चली गई, परन्तु केदारबाबू ने इसका ख्याल ही नही किया। व अपनी बात के ही आनन्द म मगन हो कहते गए—मैं जी गया ! जी गया मैं ! तुमने मुझे बचा दिया बिटिया। दुर्गति के दुर्गम जगल म जब आँखे मेरी चौधिया गई, मौत के सिवाय जब सारे रास्ते बन्द पडे थे—एसे म बगल मे ही मुक्ति का इतना चौडा रास्ता खुला पडा है, यह तुम्हारे अलावा कौन बता सकता था ! क्षमा करने की तो मैंने सोची ही न थी। कभी जी म आई भी तो जबरन उस हटाकर मैने यही सोचा नही हर्गिज नही ! जब बेटी होकर उसने इतना बडा पाप किया तो बाप के नाते उसे इतना बडा दान मैं नही दे सकता ! मगर अरे मूढ ए अ धे, अर र कृपण ! जब तू बाप होकर यह नही दे सकता तो और कोई कैसे देगा भला ! फिर वह तुम्हारा ले कितना-सा जायगी ? तरी मुआफी का सब तो तेरे ही घर वापस आयगा। अपनी मृणाल बिटिया के इस तत्व को जरा आँख खोलकर दख। इसके बाद मानो कुछ देखन के लिए उन्होने आँखें फाडकर बादल घिरे आसमान की तरफ देखा और जी-जान से मन ही मन कहने लगे—मैंने माफ कर दिया, माफ कर दिया। सुरेश, तुमको मैंने क्षमा किया ! अचला, तुमको भी क्षमा किया ! पशु पछी, कीडे मकोडे, जो जहा हो मैंने आज सबको क्षमा किया ! आज स मुझे किसी से कोई शिकवा नही किसी से कोई शिकायत नही—मैं आज मुक्त हूँ, स्वाधीन हूँ परमानदमय हूँ ! कहते कहते एक अनिर्वचनीय आनन्द स उनकी दोनो आँखें मुद आइ। दोनो हाथ मिलाकर गोद पर रखते ही मुदी आखो

की बार से पिता का स्नेह मानो झर झर झरने लगा। उनके होंठ कांपने लगे, अस्फुट स्वर म कहने लगे—तू कहा है बेटी, एक बार लौट आ। मैं तुझे इस दुनिया म लाया हूँ, मैंने तुझे कलेजे मे लगाकर बडा किया है—तू अपने सारे कसूर, अपने सारे अपमान के साथ ही अपने पिता की गोद म लौट आ—मैं अपने हृदय मे तेरे सारे जख्म, सारी जलन धो-पोछकर तुझे कलेजे मे लगाकर रक्खूगा। हम घर मे बाहर नही निकलेंगे, लोगो से नही मिलेंगे—बस, तू और मैं—

बाबूजी ?

उन्होंने मुडकर मृणाल को देखा, शायद अपने को सयत करने की भी एक बार कोशिश की, पर दूसरे ही क्षण फर्श पर लुढककर बच्चे की नाई आर्तस्वर म रो उठे—बिटिया, मेरा कलेजा टूक टूक हो गया। सभी उसे जाने कितना कष्ट दे रहे हैं। मैं तो अब सह नही पाता।

मृणाल कुछ न बोली सिर्फ उनके जमीन पर लुढके माथे को चुपचाप अपनी गोद म रखकर सहलाने लगी। उसकी भी आँखो स आँसू बहने लगे।

फागुन का यह मेघ घिरा दिन शायद यो ही बीत जाता, पर केदारबाबू चट उठ बैठे। बोले—अच्छा मृणाल, महिम को पत्र दें तो जवाब नही मिलेगा ?

क्यो नही ? मेरा ख्याल है, कल परसो ही मिल जायगा।

तुमने क्या उन्हें कुछ लिखा है ?

मृणाल न सिर हिलाकर कहा—हाँ।

सकोच मे बूढे न यह नही पूछा कि क्या लिखा है। बाहर की ओर देखकर बोले—बेला अभी है थोडी सा, मैं जरा घूम आऊँ। उन्होंने कमरे पर चादर ली छडी उठाई, लेकिन दो एक कदम बढते ही ठिठक गए। कहा—देखो बिटिया—

जी बाबूजी।

मैं डर रहा हूँ, डर ठीक नही—लेकिन सोचता हूँ—

कहो जी बाबूजी—

बात यो है, मैं सोचता हूँ, अच्छा तुम्हारा क्या ख्याल है, हम जाना चाहे, तो महिम एतराज करेगा ?

मृणाल को यही डर था, चिंता थी और मन म उसने इसका जवाब भी एक प्रकार से ठीक कर रक्खा। इसीलिए तुरत बोली—अभी इसकी फिक्र मे क्या लाभ उनका पता चले—हम लोग चले चलेंगे। उस समय जब सँझले दादा

मुझे निकाल देंगे तो दुनिया की बहुत सी बातें अपने आप मालूम हो जाएँगी। फिर किसी से पूछना ही नहीं पड़ेगा,

केदारबाबू ने पूछा—तो सच ही तुम मेरे साथ चलोगी ?

मृणाल ने कहा—सच। लेकिन मैं तो आपके साथ नहीं चलूंगी, आप मेरे साथ चलेंगे।

वृद्ध फिर कुछ जवाब देना चाह रहे थे, लेकिन एक बार उसकी ओर देखकर ही चुप हो रहे।

फागुन के एक ऐसे ही दिन तीसरे पहर बंगाल के बाहर और भी दो नर-नारी के आंसू ऐसे ही बेताब हो उठे थे। सुरेश ने मुहर मारा हुआ बड़ा लिफाफा अचला को देते हुए कहा—दू दू करते करते भी यह कागज तुम्हें देने का आज तक साहस नहीं हुआ मगर आज तो दिए बिना उपाय नहीं।

अचला ने लिफाफा लेकर दुविधा से पूछा—मतलब ?

सुरेश जरा हँसकर बोला—मुझे साहस नहीं होता ऐसी कौन सी भयंकर चीज हो सकती है यही तो सोच रही हो तुम ? सोच सकती हो—मैंने भी बहुत सोचा है ! इसका कुछ मतलब है तो कभी न कभी प्रकट हो ही गा। लेकिन बहुत अपमान, बहुत दुःख का बोझा तुमने मतलब समझे बिना ही मुझसे लिया है अचला—इसे भी उसी तरह लो।

अचला ने सहज भाव से पूछा—इसमें क्या है ?

सुरेश ने हाथ जोड़कर कहा—तुमसे मैंने आज तक जो कुछ भी पाया है, डकैत के समान छीनकर ही पाया है। लेकिन आज तुमसे मैं एक भीख मांगता हूँ—इसे तुम जानना मत चाहो।

अचला चुप रही। सोच न सकी, इसके बाद क्या कहे।

पर्दे के बाहर से बैरे ने कहा—बाबूजी इक्का वाला कह रहा है, और देर करेंगे तो पहुँचने में रात हो जायगी। रास्ते में झड़ी पानी की भी संभावना है।

अचला ने चकित होकर पूछा—आज कहाँ जाओगे ? ऐसे दिन में ?

सुरेश ने हँसकर सुधार दिया यानी ऐसे दुर्दिन में मझौली जा रहा हूँ। प्लेग का कोई डाक्टर नहीं मिल रहा है—गांव का गांव मसान होता जा रहा है। अब की वहाँ पांच-सात दिन रहना पड़ेगा और कौन जाने, रहीं जाना पड़े। कहकर वह जरा हँसा।

अचला उसकी तरफ देखती रह गई। उसे भी थोड़ी-बहुत खबर थी कि सात आठ कोस पर की कुछ बस्तियां प्लेग से समान बनती जा रही हैं और शहर से इतनी दूर पर इस भयंकर महामारी में चिकित्सकों की कमी होगी इसमें ताज्जुब क्या? उसे यह भी पता चल गया था कि सुरेश छिपाकर काफी रुपया का दवा दारू जहां-तहां भेज रहा है, खुद भी तड़के उठकर कहीं न कहीं चला जाता है, लौटने में कभी सांझ हो जाती है, कभी रात। परसों तो घर लौटा ही नहीं। इतने पर भी वह यह नहीं सोच सकी थी सुरेश घर छोड़कर, कुछ दिनों के लिए एक बारगी मौत के मुँह में ही जाकर रहेगा। इसीलिए प्रस्ताव को सुनकर वह उसकी ओर ताकती रह गई। जो महापापी भगवान् को नहीं मानता, पाप पुण्य नहीं मानता, अपने दोस्त और उसकी बेकसूर स्त्री का जिसने इतना बड़ा सत्यानाश कर दिया, हिचका नहीं—उसकी ओर जब जब भी अचला ने देखा तभी उसका मन उसके प्रति जहरीला हो उठा है पर आज उसकी ओर ताककर उसका जी विष में नहीं, विस्मय से भर गया। सुरेश के होंठ के कोने पर अभी भी हंसी की लकीर खिंची थी बड़ी फीकी-सी, परन्तु उसी जरा सी हँसी में अचला ने सारे संसार के वैराग्य को भरा देखा। चेहरे पर उसके उद्वेग नहीं उत्तेजना नहीं, मौत के बीच जाकर खड़ा होगा मगर चेहरे पर जरा भी शंका नहीं। तो क्या इस नास्तिक और ऐसे महास्वार्थी के लिए भी उसकी अपनी जान इतनी सस्ती है। भोग के सिवाय जिसे और कुछ नहीं आता, भोग के सारे साधनों में डूबे रहकर भी उसका जीवित रहना इतना तुच्छ, ऐसी उपेक्षा की वस्तु है कि इस आसानी से सब कुछ को छोड़ जाने के लिए एक पल में तैयार हो गया? शायद न भी लौटूं! यह और चाहे जो हो, मजाक नहीं है। मगर यह कहना इतना आसान है।

भीतर के धक्के से वह चंचल हो उठी। हाथ का लिफाफा दिखाकर पूछा—तो यह क्या तुम्हारी वसीयत है?

सुरेश ने भी सवाल ही किया—अभी-अभी तुमने जो भीख दी, उसे लौटा लेना चाहती हो?

अचला कुछ क्षण चुप रही बोली—खैर, मैं वह नहीं जानना चाहती, लेकिन तुम्हें मैं जाने न दूंगी?

क्या?

जवाब में उस लिफाफे को फिर से उलट-पुलट कर अचला ने कहा

तुमने मेरा चाहे जो भी किया फिर भी मैं अपने लिए तुम्हें मरने नहीं दूंगी।

सुरेश ने जवाब नहीं दिया। अपनी बात पर जरा शर्मा कर उस बात का कुछ हलकी करने के ख्याल से वह बोली—तुम कहोगे कि मैं तुम्हारे लिए क्या मरने लगा मैं तो जा रहा हूं गरीबों के लिए जान देने—मगर मैं वह भी न करने दूंगी।

यह सुनते ही सुरेश को महिम याद आ गया और कलेजे के भीतर से एक निश्वास उमड़ कर स्तब्ध कमरे में फैल गया। इसलिए कि जीवन की ममता कितनी नाचीज है और किस आसानी से वह उसे गँवाने को तयार हो सकता है इसका एक ही गवाह आज भी है और वह है महिम। उसकी आज की यात्रा ही यदि उसकी महायात्रा हो, तो सिर्फ वही संगीहीन और निरा मौन आदमी ही मन ही मन समझेगा सुरेश ने लोभ से नहीं क्षोभ से नहीं, घृणा से नहीं—इहकाल परकाल कुछ के लिए नहीं, उसने सिर्फ इसीलिए जान दी कि उसकी मौत आई थी।

उसकी आंखों में आंसू भर आना चाहने लगे, पर उसने रोका। बल्कि सिर उठाकर हँसने की कोशिश करते हुए कहा—मैं किसी के लिए भी मरना नहीं चाहता अचला! चुपचाप घर में बैठे रहना अच्छा नहीं लगता इसीलिए जरा घूमने जा रहा हूं। मैं मरने क्यों लगा, नहीं मरूँगा।

फिर यह वसीयत क्या?

यह वसीयत है यह तो साबित नहीं हुआ है।

न हो, पर मुझे अकेली छोड़ कर चले जाओगे तुम?

चला ही जाऊँगा, अब अब, लौटूंगा नहीं, यह भी तो तै नहीं हो गया है।

नहीं हुआ है! इस परदेश में मुझे बिल्कुल बेपनाह करके—अचला रो पड़ी।

सुरेश उठते उठते भी बैठ गया। जीवन में आज पहली बार एक अदम्य आवेग को रोककर वह शांत स्वर में बोला—मैं तो तुम्हारा संगी हूं नहीं अचला। आज भी तुम अकेली हो और वह दिन अगर सच हो आ जाय, तो भी तुम्हें उससे ज्यादा बेपनाह न होना पड़ेगा।

अचला के आंसू बह ही रहा था उन्हीं आंसू भरी आंखों को सुरेश पर टिका कर उसने देखा लेकिन उसके होठ थर थर कांपने लगे। उसके बाद दांत से होठ दबाकर उस कम्पन को रोकने की चेष्टा करती हुई वह रो पड़ी मुंह

तुम और क्या चाहते हो, मेरे और क्या है ?—कहते-कहते मुह को आचल स दबाए वहाँ से भाग गई ।

पर न आकर कहा—जी, इक्का वाला—

उसे मना करने को कहो जरा ।

उसी समय कोचवान ने बताया—गाडी बडी देर स तयार खडी है ।

गाडी क्या ?

कोचवान न कहा—मा जी न हुक्म दिया था व उस डेर म जाएँगी, मगर नौकरानी न कहा—उनका कमरा बन्द है । बहुत पुकारा कोई जवाब नहा आता । तो घाडे खाल दिए जायँ ?

अच्छा, ठहर ।

इस कमरे वाला दरवाजा अन्दर से खुला ही था, उसी का पदा हटाकर सुरेश चुपचाप साने के कमरे म चला गया और पास ही एक कुर्सी पर बैठ गया कमरा यह दोनो ही का था, उसन अनाधिकार प्रवेश नही किया । लेकिन सामने की साफ सुथरी सेज पर वह जो सुन्दरी औंधी पडी सो रही थी, उसकी किसी बात न आज उसे आकर्षित नही किया बल्कि उसे दुत्कारकर पीछे ही हटा देने लगी । अचला को उसके आने की खबर नही हुई वह रोती ही रही और उसे एकटक देखता हुआ सुरेश सोचता रहा । इधर कुछ दिनो से अपनी गलती उसे महसूस होन लगी थी, पर इस लोटती हुई देहवल्लरी न उस वदना ने—उनके सम्मिलित माधुर्य ने उसकी आखो पर की पट्टी को नोच फेंका । उसे लगा, प्रात किरणो म पत्ते की नोक पर ओस की जो बूद हिलती रहती है, जो लोभी उसके अपार अनुपम सौन्दय को हाथ म उठाकर उपयोग करना चाहता है उसने ठीक वैसी ही भूल की है । वह नास्तिक है, आत्मा को नही मानता, जिस स्तन से अनन्त सौन्दय झरता रहता है—वह असीम उसके लिए झूठा है, इसीलिए सारी चेतना उस स्थूल पर एकाग्र करके उसन निस्सदेह समझा था कि इस सुन्दर शरीर पर कब्जा कर लेन से ही मैं पा जाऊँगा—आज उसकी भूल का वह आकाश चूमती इमारत चकनाचूर हो गई । प्राप्ति की उस अदृश्य पकड से अलग होकर पाना कितना बडा धोखा है, कितनी बडी भूल है, यह तथ्य आज उसके हृदय मे जाकर गडा । अचला को देखकर उसे आज इसी सत्य की प्रतीति हान लगी कि ओस की बूद मुट्ठी म आकर देखते ही देखते किस प्रकार पानी

की बिंदु सी सूख जाती है। हाय, पल्लव की कोर ही जिसके लिए विधाता की दी हुई जगह है उसे इस मरुभूमि म किस तरह बचाकर रक्खे।

अजानते ही उसकी आँखो म पानी भर आया। पोछकर उसने आवाज दी,—अचला!

अचला चौक उठी, पर वैसी ही चुप पडी रही। सुरेश ने कहा—तुम्हारी गाडी तैयार है, आज रामबाबू के यहा घूमने जाओगी?

फिर भी अचला का कोई जवाब न मिला, तो वह बोला—जी न चाहे आज तो घोडा को खोल दे। मैं भी शायद नही जा पाऊँगा। इक्के का लौटा देना हूँ। कहकर वह बैठक म चला गया।

वहाँ दस-पन्द्रह मिनटो तक वह क्या सोचता रहा, उसी को नहीं मालूम। इतने म साडी की खसखसाहट हुई। चौंककर देखा, सामने ही अचला खडी थी। उसने भरसक आख की लाली को पोछ डाला था और एक धनी की पत्नी की योग्य पोशाक म ही आई थी। बोली—उनके यहाँ आज जाना ही पडेगा।

अचला की यह पोशाक उसके लिए नही, बल्कि वहा के रोज अतिथियो के लिए है, सुरेश न यह समझा तो भी जडाऊ गहनो से सजी गुजी उस नारी ने जरा देर के लिए उसे मोहित कर दिया। ताज्जुब म आकर पूछा—जाना ही पडेगा ऐसी क्या बात?

राक्षसी बुखार लिए ही कलकत्ते से लौटी है। यह भी पता चला कल से चाचाजी को बुखार आ गया है।

जब से आई हो, तब से क्या तुम कभी उनके यहा गई?

नही।

उनके यहा से भी कोई नहीं आए?

सिर हिलाकर अचला ने कहा—नही।

रामबाबू भी नही।

नही।

यहाँ आने के बाद से प्लेग वालो के लिए सुरेश इस कदर हैरान रहा कि घर गिरस्ती और आपुस बिराना के बारे म इन छोटी मोटी भूलो पर ध्यान ही न दे सका। सो सुनकर वह हैरान हुआ। बोला—गजब! अच्छा, जाओ।

अचला ने कहा—सचमुच अपनी ओर से गजब ही हुआ! एक को बुखार

और एक जन खुद खाट न पकड़ लेने तक मेहमानों की खातिरदारी में परेशान रहे। उचित हम लोगों का ही जाना था।

अच्छा जाओ। जरा जल्दी लौट आना।

अचला जरा देर चुप रहकर बोली—तुम भी साथ चलो।

मुझे बड़ा घसीट रही हो।

अचला नाराज होकर बोली—अपनी बीमारी की बात याद न हो चाहे, मगर डाक्टर के नाते चलो।

अच्छा चलो—सुरेश कपड़े बदलने के लिए बगल के कमरे में चला गया।

इसके जाने का कोई जवाब नहीं मिला था इसलिए वह तब भी खड़ा था। अचला ने नीचे उतर कर देखा। खामखाँ रंज हो उठी वह। बैरे से इसकी कैफियत तलब करती हुई फिर दबकर उसे लौटा देने का हुक्म दिया। बैरे ने सुरेश की ओर ताकते हुए डरते डरते पूछा—जी बल

जवाब अचला ने दिया। कहा—नहीं। बाबू नहीं जाएँगे। इसकी भी जरूरत नहीं।

सुरेश गाड़ी पर सामान वाली जगह में बैठने जा रहा था। उसके कुरते का छोर खींचकर अचला ने बगल में बैठने का इशारा किया। गाड़ी चल पड़ी। दोनों चुप। अगल बगल बैठने के बावजूद दोनों, दोनों तरफ की खिड़की से बाहर की ओर देखते रहे।

गाड़ी जब बगीचे का फाटक पार करके सड़क पर जा निकली, तो सुरेश ने धीमे धीमे कहा—अचला!

क्या है?

जानती हो, आजकल मैं क्या सोचता रहता हूँ?

नहीं।

आज तक जो सोचता आया हूँ ठीक उसका उलटा। उस समय सोचा करता था, तुमको कैसे पाऊँ और अब सोचता हूँ, तुम्हें छुटकारा कैसे दूँ। तुम्हारा भार अब मानो ढोया नहीं जाता।

इस अनसोचे और बेहद कठोर आघात से अचला का देह मन माना जरा देर के लिए पंगु बन गया। यह नहीं कि उसे इस पर सच ही यकीन न आया, फिर भी अभिभूत सी बैठी रही। बोली—मैं जानती थी, पर यह तो—

सुरेश ने कहा—हाँ, गलती मेरी ही है। तुम लोग जिसे पाप का परिणाम

कहती हो। फिर भी बात यह सही है। मन विहीन शरीर का बोझा ऐसा दुर्वह होता है, यह मैंने ख्वाब मे भी नही सोचा था।

अचला ने नजर उठाकर पूछा—तुम क्या मुझे छोडकर चले जाओगे ?

सुरेश ने बिना झिझके कहा—खैर, वही समझ लो।

इस बेखटके जवाब को सुनकर अचला एकबारगी चुप हो गई। उसके रुंधे जी को मथकर केवल एक ही बात चारो तरफ घुमडने लगी, यह वही सुरेश है ! यह वही सुरेश है ! आज उसी के लिए वह दुर्वह बोझ है। आज वही उसे छोड जाना चाहता है। जबान मे ऐसा कहते भी आज उसे हिचक न हुई।

मगर सबसे बडा गजब यह कि वही उसके अपार दुःख की जड है। कल तक भी इसकी हवा से सारी देह जहरीली होती रही है।

बादल घिरे तीसरे पहर के आसमान के नीचे सूनी सडक पर प्रतिध्वनि जगाती हुई गाडी तेजी मे दौड रही थी और उसी के अंदर बैठे ये दो जन बिलकुल मौन। सुरेश क्या सोच रहा था, वही जाने पर उसके मुँह से निकले शब्दों की कल्पनातीत निष्ठुरता को पार करके भी आज एक नए भय से अचला का मन भर गया। सुरेश नही है—वह अकेली है। यह अकेलापन कितना बडा है कैसा भयावना—लमहे मे बिजली की नाई उसके मन मे कौंध गया। दुर्भाग्य मे वह जो नाव लिए ससार समुद्र मे वह चली है वह निश्चित मृत्यु मे ही तिल तिल डूब रही है इस बात को उससे ज्यादा कोई नही जानता। तो भी इस जान की हे भयावन आश्रय को छोड वह ओर छोरहीन समुद्र मे पडी है—यह ख्याल आते ही उसका सारा शरीर बर्फ जमा ठण्डा हो गया। उसका अब कोई नही—उसे प्यार करने का घृणा करने को, रक्षा करने को, मार डालने का कहीं कोई नही, ससार मे वह निरी अकेली है। इसकी याद से उसका दम घुटने लगा।

अचानक उसका अवश विवश दायाँ हाथ सुरेश की गोद पर जा रहा कि उसने चौंककर देखा। जी-जान से उद्वेगहीन कण्ठ को साफ करके अचला ने कहा—अब क्या तुम मुझे प्यार नही करते ?

उसके हाथ को जतन से अपने हाथ मे लेकर सुरेश ने कहा—इसका उत्तर बेखटके तो नही दे सकता अचला लगता है हो चाहे जो पर इतना तो सही है कि यह भूत का बोझा ढोते चलने की ताकत मुझ मे नहीं।

अचला फिर जरा देर मौन रहकर धीमे और करुण स्वर मे बोली—तुम मुझे और कही ले चलो—

जहा कोई बगाली न हो।

हा, जहा शम मुझे हर पल वेधती न रहे—

वहां क्या तुम मुझे प्यार कर सकोगी अचला ? सच !—आवेश मे उसने उसका सर छाती म खींचकर होठो को चूम लिया।

अपमान से आज भी अचला का चेहरा लाल हो उठा, होठ वैसे ही जल उठे, जैसे बिच्छु ने डक मारा हो, तथापि गदन हिलाकर उसने हौले हौले कहा—हा, कभी मैं तुमको प्यार करती थी। न छि छि, कोई देख लेगा। यह कह कर उसने अपने को सुरेश से छुडा लिया और सीधी होकर बैठी। लेकिन जिसके हाथ मे उसका हाथ पडा रहा, उसने स्नेह से उसे जरा दबाकर एक गहरा लम्बा निश्वास त्यागा।

गाडी चौडी सडक छोडकर रामबाबू के बगले के बगीचे मे घुमी और देखते ही देखते विशाल वेलर की जोडी गाडी बरामदे मे जाकर रुक गई।

चटकदार नई पोशाक वाले साईसो ने दरवाजे खोल दिए और सुरेश ने उतर कर खुद से अचला का हाथ पकड कर उसे उतारा। अचला की नजर ऊपर के छज्जे पर थी। वहा और-और स्त्रियो के साथ राक्षसी भी दौडी दौडी आकर खडी थी—बहुत दिनो के बाद चार आखें हो जाने से दोनो ही सखियो के होठो पर हँसी फूट पडी। रामबाबू नीचे ही थे। खुशी और स्नेह से वदन की चादर फेंककर उन्होने कहा—आओ आओ बिटिया।

इस अपरिचित स्वर के व्यग्र व्याकुल पुकार से उसकी हँसती हुई आखो की निगाह पलक मारते बूढे की ओर गई, लेकिन उनके बगल मे खडा था महिम और उसी को देखकर वह मानो पत्थर हो गया था। आखें चार हुइ, परन्तु पलक न गिरी। अचला के अङ्ग-अङ्ग का मणि-मुक्ता झलमला उठा, हीरा मोती की चमक जरा भी मन्द न हुई, लेकिन उन्ही के बीच का खिला हुआ कमल मानो मुरझा गया।

मगर सांझ के झुटपुटे म बूढे को भूल हुई। एक अजनबी सज्जन के सामने उसे लाज से मलिन और मुश्किल मे पडी समझकर उन्होने व्यस्त होकर अपना हाथा उसके ललाट को पकडकर कहा—छोडो भी बिटिया, तुम्हें चरणो की धूल नही लेनी होगी, ऊपर जाओ—

अचला कुछ नहीं बोली, लडखडाती हुई चली गई।

रामबाबू ने कहा—सुरेश बाबू य—

सुरेश न कहा—गजब ! हम तो एक क्लास म—छुटपन से साथ साथ—इसके बाद अचानक हँसने की कोशिश स चहरा बनाकर बोला—अरे, तुम यहाँ महिम—

लेकिन बात पूरी न हो सकी। महिम भागकर कमरे म चला गया।

काठ के मारे म बूढे ने सुरेश की ओर ताका—और सुरेश न भी जवाब म हँसन की चष्टा की, पर वह भी न हो सका। ऊपर जान वाले लकडी के जीने पर एकाएक जोरो की आवाज हाने से दोनो ही ठक् रह गए। शोर मचा! रामबाबू दौडे। जाकर देखा, अचला औंधी पडी है। वह दो ही तीन सीढियाँ चढ पाई थी, उसके बाद ही बेहोश हो गिर पडी थी।

## ४१

लौटते समय गाडी के एक कोने म सर टेककर अचला यही सोच रही थी, आज की बेहोशी काश दूर न होती ! अपने हाथो अपनी जान लेने के घिनौनपन को वह मन म जगह भी नही दे सकती—पर ऐसी ही कोई शांत, स्वाभाविक मृत्यु ! सहसा होश जाता रहे और नींद आ जाय—ऐसी नींद कि फिर न टूटे। मौत को एसी आसानी से पान की क्या कोई तरकीब नहा ? कोई नहा जानता ?

सुरश ने उसे छूकर कहा—तुमने और कहीं जाने की ख्वाहिश ज़ाहिर की थी, चलोगी ?

चलो।

कल तो यहाँ मुँह दिखाना दूभर

मगर वे ता किसी से कुछ कहें

सुरेश ने एक लम्बा [illegible]

बोला—नहीं, महिम को मैं ज[illegible]

भी ज्वान पर नहीं ला सकता।

सुरेश न यह बात बडी आसानी स कही परन्तु अचला का सर्वाङ्ग सिहर उठा। उसके बाद जब तक गाडी घर जाकर लगी, तब तक दोनो ही चुप रह। सुरेश न उसे एहतियात स उतार कर कहा—तुम जरा सोन की चेष्टा करो अचला, मुझे कई जरूरी चिटिठ्या लिखनी है। वह अपन कमरे म चला गया।

बिस्तर पर पडी पडी अचला सोचन लगी—इक्कीस की तो अपनी उम्र है, इस बीच मैंन एसा कौन सा अपराध किया कि नसीब म यह गत हुई। यह कोई नई बात न थी, जब तब वह अपन आप से यह पूछा करती और बचपन से जहा तक याद आता, याद करन की कोशिश करती। आज उस अचानक उस तक की याद आ गई, जो मृणाल से एक दिन हुआ था और उसी सिलसिले म वह एक एक कर सारी बाता को दुहरा गई। पति स कभी उसकी पटी नही, खटपट म ही बीता। महज अतिम के दिन पर किसने रोग शय्या पर बहुत अपना पाया था। उसके जीवन का जब कोई खतरा नही रह गया था, मन जब निभय और बेखटका था तब के स्वच्छ स्निग्ध आनन्द म जब उसे पराई वेदना बडी पीडा पहुँचाती थी, एसे म एक दिन मृणाल के गले लिपटकर आँसू रुंधे स्वर म उसने कहा था ननदजी तुम कही हमार समाज हमारे मत की होती, तो तुम्हारी तमाम जिन्दगी का मैं यो बेकार नही जान देती।

मृणाल न हँसकर पूछा था, आखिर क्या करती सझली दी, फिर म मेरी शादी कर देती।

अचला न कहा—और क्या? मगर बटशा, बहन तुम्हारे पैरा पडती हूँ शास्त्र की दुहाई तो न दो। यह कुश्ती इतनी लडी जा चुकी है कि उसके होने की सुनते ही मेरी रह फना हो जाती है।

मृणाल न वस ही हँसते हुए कहा था, बात डरन की ही है, क्योकि उनकी टक्करें कब किधर को सख्त हो पडें, कुछ कहा नही जा सकता। लेकिन उसक एक पहलू पर तुमने गौर नही किया है सझली दी, वह यह कि व लडत इसीलिए है कि लडना उनका पेशा है, इसीलिए कि उनके हाथ मे हथियार है। नतीजा यह होता है कि जीत हार महज उन्ही की होती है उस लडाई स हमारा-तुम्हारा कुछ जाता आता नही। दो म से कोई पक्ष हमे नही पूछता।

अचला ने पूछा था, लेकिन पूछता तो क्या होता?

मृणाल ने जवाब दिया—यह तो नही बता सकती। यह तो मै तुम्हारी

ही तरह सोचना सीखती, या तो तुम्हारे प्रस्ताव पर राजी होती—हो सकता है, ब्याहने वाला कोई जुट भी जाता। कहकर वह हँसी थी।

उसकी हँसी से बेहद कुढ़कर अचला ने जवाब दिया था मैं यह जानती हूँ जब भी मेरे समाज की बात आती है, तुम अवज्ञा दिखाती हो। परन्तु हमारे समाज को छोड़ो, जो भी इस पर लड़ते हैं वे सब के सब क्या पशेवर ही हैं? सच्ची हमदर्दी क्या एक में भी नहीं होती?

मृणाल ने जीभ काटकर कहा था ऐसी बहुत-सी बातें हैं जिन्हें मन में लाना भी पाप है सझली दी। मगर यह नहीं बहन! कल ही सुबह तो चली जा रही हूँ मैं। जाने के पहले कोई मजाक भी नहीं कर सकती? और उसकी आंखों आँसू भर आया था। अपने को सम्हालकर उसने गम्भीर होकर कहा था, पर तुम तो मेरी सारी बातें समझ नहीं सकोगी बहन। तुम लोगों के लिए ब्याह महज एक सामाजिक विधान है—इसीलिए उस पर भला बुरा विचार किया जा सकता है, तर्क से, दलील से राय बदल सकती है। मगर हमारे लिए यह धर्म है। पति को हम बचपन से इसी रूप में अपनाते आते हैं। यह तो सब तर्कों से परे की चीज है बहन।

हैरान सी रही अचला ने पूछा था—खैर वही सही। मगर मनुष्यों का धर्म क्या नहीं बदलता है?

मृणाल ने कहा था—धर्म के विचार बदलते हैं भूल को कौन बदल सकता है? यही कारण है कि लड़ाई-झगड़े के बावजूद यह मूल वस्तु आज भी सब जाति में एक सी है। पति के दोष गुण का विचार हम सब भी करते हैं उनके बारे में विचार भी बदलते हैं—आखिर हम भी तो इंसान हैं। लेकिन अपने लिए पति नित्य है, क्योंकि वे धर्म हैं। वे जीवन में भी नित्य हैं, मरण में भी! उन्हें हम बदल नहीं सकते।

अचला कुछ देर चुप रह गई। पूछा—यही ठीक है, तो इतना अनाचार क्यों है?

मृणाल ने कहा था—वह चूंकि रहेगा, इसलिए है। जब धर्म नहीं रहेगा, तब यह भी नहीं रहेगा। कुत्ते बिल्लियों के तो अनाचार नहीं हैं बहन!

अचला को ढूंढे कोई जवाब न मिला, सो कुछ देर चुप रहकर उसने कहा था—तुम्हारे समाज की अगर यही शिक्षा है [illegible] शिक्षा देते हैं उन्हें इतना सन्देह क्यों, फिर क्या वे लोग [illegible]

परत्ना, इतना छिपाव-बचाव, सारी दुनिया से बचाकर रखने की ऐसी जी ताड कोशिश क्या ? इस तरह सतीत्व की कीमत तब जानती, जब कसौटी का मौका मिलता।

उसके तुनकने से चौंककर मृणाल ने हँसकर कहा था, यह तो बहन तुम उनसे पूछो जाकर, जो ये कायदे-कानून बना गए हैं। हमने तो जो कुछ अपने माँ-बाप से सीखा है उसी का पालन करती जा रही है। मगर एक बात मैं तुमसे जार देकर कहूँगी—जिसने यह कबूल कर लिया है कि पति धर्म है, परन्तु प्राण की निधि है, उनके पावों देडी बाँधो चाहे बेडी काट दो, उसके सती व की खुद-ब-खुद कसौटी हो चुकी है। इतना कहकर वह कुछ क्षण रुकी थी और तब धीरे धीरे कहा था—मेरे पति को तो तुमने देखा था ? बुड्ढे थे गरीब थे, रूप गुण भी निहायत मामूली ही था लेकिन वही मेरे इहकाल थे, वही मेरे परकाल हैं। उसने आखें मूदकर शायद मनमें उन्हीं की याद की और फिर जरा फीकी हँसी हँसकर बोली—मिसाल शायद यह ठीक न होगी, पर बात यह बावन तोले पाव रत्ती ठीक है कि बाप अपने कान लगडे लडके पर ही सारा स्नेह उडेल देता है। दूसरे का खूबसूरत लडका पल को उसके मन में क्षोभ ला सकता है, पर पिता के धर्म का एक तिल आच नहीं आती। जाम समय अपना सर्वस्व वे वहा रख जाते हैं, यह तो तुम जानती हो ? लेकिन अपने पितृत्व पर सन्देह के नाते कभी बाप का धर्म अगर टूट जाता है तो नह की माफ ढूढे नहीं मिलती। मगर हमारी शिक्षा और विचार का स्रोत जुदा है मेरी बहन, मेरी यह मिसाल या ये बातें तुम शायद ठीक ठीक समझ न पाओगी, लेकिन मेरी इस बात पर भूले भी अविश्वास मत करना कि जिस औरत ने पति को धर्म के रूप मे हृदय मे रखना न सीखा, उसके पैरो मे सदा बेडी पडी रहे या खुली रहे और अपने सतीत्व के जहाज को वह जितना भी बडा क्या न समझती हो, जाँच की दलदल में पड जाने मे उसे डूबना ही पडेगा। यह परदे में भी डूबेगी, परदे से बाहर भी।

वही तो होकर रहा। उस घडी अचला ने इस सत्य को नहीं समझा था लेकिन मृणाल की बताई दलदल आज जब उसे जी-जान से रसातल की ओर खींचे ले जा रही थी, तो समझना बाकी न रहा। उस रोज क्या बात को उसने इस तरह से समझाना चाहा था। मौत बद्ध समाज की अबाध स्वाधीनता के आख कान को खुला रखकर ही वह बडी हुई, स्वय ही उसने चुनकर जीवन

की राह अपनाई—उस दृमी का गर्व था, लेकिन इम्तहान के आड़े वक्त में यह सब कुछ भी उसके काम न आया। उसकी विपत्ति बड़ी चुपचाप आई, आई मित्र के रूप में, बड़े चाचा के स्नेह और श्रद्धा का जामा पहन कर आई। उस एकान्त स्नेहशील भला चाहने वाले बूढ़े के बार बार आग्रह करने पर जिस दुर्योग की रात में वह सुरेश की सेज पर जाकर आत्महत्या कर बैठी, उस दिन उसे जो बचा सकता था, वह था एकमात्र उसका सतीत्व जिसे मणाल ने जीवन-मरण में अद्वितीय और नित्य बताना चाहा था। लेकिन उस रोज उसके बाहरी आवरण ने ही बड़ा होकर उसे शिकस्त दी। उसकी जन्मजात शिक्षा और संस्कार आत्मा को तुच्छ कारागार समझ कर बाहरी जगत् को ही सर्वोपरि मानता रहा है—जो धर्म लीन है जो धर्म गुफा में सोया है, हृदय का वह धर्म कभी उसके आगे सजीव नहीं हो पाया। इसीलिए बाहर से सामंजस्य बनाए रखने के लिए भद्र महिला के बाहरी रूप का ही वह लज्जा से जकड़े रही। इस मोह को तोड़ कर अपने को उधार कर वह हर्गिज न कह सकी कि चाचा जी मैं जानती हूँ कि मेरी पर्वत सी ऊँची हुई इतने दिनों की मिथ्या के ऊपर संसार में आज मेरे सत्य को कोई सत्य नहीं मानेगा जानती हूँ कि कल आप घृणा से मेरी शक्ल नहीं देखेंगे आपकी सती पतोहू का दरवाजा भी कल मेरे लिए बन्द हो जायगा और मेरी निन्दा तमाम फैल जायगी—लेकिन मुझे वह सब बर्दाश्त है आपका आज का यह खतरनाक स्नेह नहीं सह सकूँगी। बल्कि आप मुझे यह आशीर्वाद दें चाचा जी कि इतने दिनों के सती के यश के बदले आपके आगे मेरा आज का यह कलंक ही अक्षय हो सके। लेकिन हाय! यह बात उसके मन से उस दिन हर्गिज नहीं निकल सकी।

आज निष्फल मान और प्रचण्ड आवेश से उसका गला बार बार सूख जाने लगा और उसकी उस अखंड पीड़ा को महिम की निगाह मानो चाकू से चीरने लगा।

इस तरह आधी रात बीती। लेकिन सभी दु:खों का एक विश्राम होता है, इसीलिए आँसू का सोता भी एक समय सूख गया और भीगी पलकें भी नींद से मुंद गई।

नींद टूटी तो वेला हो चुकी थी। सुरेश के लिए दरवाजा खुला ही था परन्तु वह अन्दर आया भी या नहीं, पता नहीं चल सका। बाहर निकली तो बेरे ने बताया, बाबूजी तड़के ही इक्के से मझौली चले गए।

वाइ साथ गया है ?

नी नही । मैं जाना चाहता था उन्होंने जाने नही दिया। बोले—प्लेग से मरना चाहता है तो चल ।

इसीलिए तुम नही गए और कृपा करके इक्का ला दिया ? मुझे क्यो नही जगाया ?

बग चुप रहा ।

अचला खुद भी कुछ क्षण चुप रही—पूछा—इक्का कौन ले आया ? तुम ?

सिर झुकाकर वर न कहा—बुलाने की कोई जरूरत नही थी । कल शाम ही बाबू ने उसे सुबह आने के लिए कह दिया था ।

सुनकर अचला चुप हो गई । उसने जो सोचा था, हकीकत म वह न था। कल की घटना से इसका कोई लगाव न था । कल वाली बात न भी होती, तो भी वह जाता । सिर्फ उसके डर से कुछ समय के लिए स्थगित कर दिया था ।

पूछा—कब आएँगे, कुछ बता गए है ?

उसने खुशी से सिर हिलाकर कहा—बहुत जल्दी लौटेंगे, परसो या नरसो या उसके दूसरे दिन तो जरूर ।

अचला ने और कुछ न पूछा—कल उस सीढी पर गिरने की चोट का ठीक ठीक पता न चला था, आज लेकिन तमाम बदन मे दर्द अवश्य हो रहा था । उस पर रामबाबू कही खोज-पूछ को न आएँ इस आशंका से मन भी मानो काठ-सा हो रहा । महिम कुछ भी नही बोलेगा, इस बात को वह सुरेश से कुछ कम नही जानती थी । तो भी जैसे दैवात के भय से दर्द की जगह को अगोर सारा मन सचेत रहता है वैसे ही उसकी सारी इंद्रियां बाहरी दरवाजे का पहरा देती रही । इस तरह सवेरा गया दोपहर निकली, साँझ बीती । रात को अब उनके आने की उम्मीद नही, इसलिए निश्चित-सी होकर वह बिछावन पर पड गई । पास की तिपाई पर खाली गुलदस्ते से दबा किसी कविराजी दवाखाने का सूचीपत्र पडा था, उसे खीचकर उसी के पन्नो मे नजर गडाए जाने किस एक श्रीमान् महाराज की बीमारी आराम होने की बात से लेकर ब्राह्मणघाटी मिडिल स्कूल के तीसरे मास्टर के प्लीहा छूटने का विवरण पढते-पढते अपना दुखडा भूल करके कब तो वह सो गई ।

## ४२

वर न बताया था बाबू परसा लौटेंग नही तो नरसा, नही ता उसके दूसर दिन तो जरूर। लेकिन इस उसके दूसरे दिन की निश्चयता का दिन भर बठकर जाचने जसा धीरज अचला को न था। इन तीन दिना क बीच रामबाबू एक दिन भी नही आए। उनके आन की सभावना का वह हृदय म डरती रही है और इस न आने म जो मतलब था उसकी कल्पना करके भी उसका शरीर माना काठ हो गया। वे बीमार थे और इस बीच उनकी बीमारी बढ भी सकती है यह बात उसके मन म नही जमी। सिफ सवेरे उनका दरवान आया था लेकिन वह अ दर नही आया पाँडे जी से बात करके बाहर म ही लौट गया। वह क्यो आया था, क्या पूछ गया—डर स अचला किसी म भी कुछ पूछ नही सकी। लेकिन उसके बाद म ही उस एसा लगन लगा कि इस मकान इन लोगो के बीच से भाग निकले तो जी जाय।

वर को बुलाकर उसन पूछा—रघुवीर तुम्हारा घर तो इसी इलाक म है, मझोली कहाँ है, जानते हो ?

उसने बताया—बहुत पहले म एक बार वहाँ बारात गया था माँ जी।

कितनी दूर है, बता सकत हो ?

रघुवीर न मन ही मन अन्दाज लगाकर कहा—छ सात कोस होगा माँ जी।

तुम मेर साथ आज चल सकते हो ?

रघुवीर ने हैरान होकर कहा—आप वहाँ जाएँगी ? वहाँ तो जोरा का प्लेग है ?

अचला ने कहा—तुम से न बन और किसी का राजी करदे सकते हो। जो मागेगा, वही इनाम दूगी।

रघुवीर न दुखी होकर कहा—आप जाएँगी और मैं नही जा सकता माँ जी ? लेकिन रास्ता नही है अपनी गाडी न जा सकेगी। या तो खटोला या फिर इक्का। आप तो इनम स किसी पर नही जा सकेंगी।

अचला ने कहा—जो मिल जाय, मैं उसी पर चलूगी। मगर अब दर स काम नही चलेगा। जो मिले वही सवारी ले आओ।

रघुवीर न और कुछ न कहा—गया और जल्दी ही एक डोली लकर

आया और अपनी लाठी मे लोटा कम्बल लटका कर उसे कधे पर रखकर वीर की भांति चलने को तयार हो गया। घर की निगरानी का भार नौकर-प्यादा पर मापकर जाने कौन अजानी मझोली वस्ती की ओर जब वह सिर्फ मुरेश के लिए ही चल पडी, तो उसे खुद ही यह अनोखी सी बात लगने लगी। जी मे आने लगा, किस पता था कि इस अजीव दुनिया मे कभी ऐसी घटना भी घटगी।

गद भरी कच्ची सडक एक थी, पर कभी तो वह दूर तक फले वहार म खो जाती और कभी मवर गावो म गायब हो जाती। लोगो की सुविधा और इच्छा क अनुसार कभी वह नदी किनारे म कभी घर के सामने से हो दूसर गाव की ओर बढ गई थी। शुरू म कुछ दूर तक कभी-कभी उसे कौतूहल हो उठता था। बासो पर एक लाश को बगल म ल जाते देख छून के डर से वह सिकुड सी गई थी। ऐसी इच्छा हो आइ थी कि पूछे किस राग स मरा, कितनी उम्र थी इसकी घर म कौन कौन है। लकिन राह की दूरी बढती गई थका चुकने लगी और पास तथा दूर के गाव स जितना ही रोना धोना उस सुनाई देने लगा उतना ही उसका मन जाने किस एक जडता म क्षीम उठने लगा। बडी देर म उस प्यास लग रही थी। नदी के किनारे चलते चलते एक घाट क पास डोला रखकर वह उतरी और हाथ मुह धोकर पानी पीने के लिए उधर बढी कि नजर आया दो एक अध जले शव थोडी ही दूर पर पड है। उनके घिनौनेपन न उसके मन पर कोई चोट ही न की। उसने सहज ही वहा पानी पिया और फिर धीरे धीरे डोली पर जा बैठी। कुछ ही पहले वह यह सोच भी नही सकती थी कि उसके लिए किसी भी हालत म यह सभव है।

इसके बाद के गाव प्राय खाली पडे थ। किसी किसी बडे ही दुस्साहसी आदमी क सिवाय जिसने जिधर बना भाग गया था। कही कोई शब्द नही, मुगबुगाहट नही—सभी द्वार वन्द सब घर मौन कुचल—लग रहा था, मानो य झोपडे भी मौत को अनिवाय मानकर आख बन्द किए उसका इन्तजार कर रहे है। मौन म राद गए इन गाँवो स गुजरते हुए रघुवीर तथा डोली ढोने वालो की दबी आवाज और भीत पगो की आहट हर पल अचला को मुसीबत की सूचना देने लगी लेकिन उस डर ही न लगा, जसे कब से तो इसस उसका परिचय है—ऐसा ही निर्विकार हो गया उसका सारा अन्तर।

पूरी राह त करके जब वे लोग मझोली पहुचे तो बेला डूब चुकी थी।

अचला का ख्याल था वहा पहुँचते ही उन सब की राह की तकलीफ जाती रहेगी। गाँव के एहसानमन्द लोग दौडकर उनका स्वागत करेंगे और डाक्टर साहब के पास लिवा जाएँगे। वहा रोगी और उनके अपने-सगो के आवागमन दवा-दारू बाटने का जो वहाँ समारोह चल रहा होगा, उसमे उसका स्थान कहाँ होगा। इसकी तस्वीर उसने मन ही मन बना ली थी। लेकिन देखा—उसकी कल्पना निरी कल्पना ही थी। उससे वास्तव का कोई मेल न था। बल्कि जो नज्जारा वह तमाम रास्ता देखती आई, यहा भी वही। यहाँ भी रास्ते पर न आदमी न आदमजाद, घर घर के द्वार बन्द—वहा किस टोले मे सुरेश का डेरा है, खोजकर निकालना ही मुश्किल।

गाव मे आज भी रोजाना पैठ लगती थी और वह शाम शाम तक चलती थी पर इधर समय-काल ठीक न होने से तीसरे पहर ही बिसात उठाकर लोग जा चुके थे। हाट की निशानियाँ जरूर थी।

बडी छान-बीन के बाद रघुबीर ने एक दुकान का पता लगाया। दुकानदार अपनी दुकान बढा रहा था। उसने कहा—मेरे बाल बच्चे सब दूसरी जगह चले गए है। महज|हम दोनो प्राणी दूकान के मोह मे यहाँ रह गए है। उसने सुरेश के बारे मे इतनी सी खबर दी कि डाक्टर साहब नन्द पाडे के नीम तले वाले घर मे अब तक थे जरूर, पर अब है कि महमूदपुर चले गए, पता नही।

महमूदपुर कहा है।

यहाँ से सीधे दो कोस दक्खिन।

नन्द पाण्डे का घर किधर है?

वह बूढा बाहर निकला। अगुली से एक बडे से नीम के पेड को दिखाते हुए कहा—बस वही जाइए, मिल जायगा।

थोडी ही देर मे जब कहारो ने लेजाकर डोली को नीम के नीचे रक्खा, तो सूरज डूब चुका था। मकान बडा सा था। पीछे की ओर दो एक पक्के से कमरे दिखाई पड रहे थे। लेकिन ज्यादातर खपरैल। सामने दीवार नही—खूब खुला। घर वाला गरीब नही लग रहा था। पर एक भी आदमी बाहर नही निकला। आगन मे बँधे सिर्फ एक टट्टू ने भूख प्यास से हिन हिनाकर उनका स्वागत किया।

सदर दरवाजा खुला था। हिम्मत करके रघुबीर ने अन्दर झाँका।

देखा—बरामदे पर एक चारपाई पर सुरेश पडा है और पास ही एक ग्म्भ म टिकी एक बहुत ही बूढी औरत बैठी ऊँघ रही है।

बाबूजी !

सुरेश न आख खोलकर देखा, और केहुनी क महार सर उठाकर जरा देर गौर करके कहा—कौन ? रघुवीर ?

सलाम करक रघुवीर उसके सामन जाकर खडा हुआ, पर मालिक की लाल लाल आखें दखकर उसकी जीभ से बात न निकली।

तुम यहा !

रघुवीर न फिर सलाम बजाया और बाहर की तरफ इशारा करत हुए कहा—जी, मा जी—

अबकी अचरज मे सुरेश न उठकर बठत हुए पूछा—मा जी न तुम्ह भेजा है ?

रघुवीर ने गदन हिलाकर कहा—जी नही व खुद आई है।

सुनकर सुरेश उसकी ओर कुछ इस तरह म ताकता रहा, मानो समझन मे उस देर हो रही है। उसक बाद आख बन्द करके फिर लेट गया, कुछ नही बोला।

अचला जब आकर खाट पर उसके बगल मे ही बठ गई तो कुछ देर उसन उसी तरह ताका और मौन हो रहा, शिष्टाचार के अनुसार 'आओ' तक नही कह सका। बचपन से यहद लाड-प्यार म पलन के कारण वह आवेश और ख्याल पर ही चलता रहा है उन्ह सयत करन का उसन कभी पाठ ही नही पढा। शिक्षा जीवन म पहली बार उस उसी दिन मिली, जिस दिन उसकी हँसी पर लात मार कर महिम कमरे म चला गया। उस दिन क्षण म उसके जी म कैसी उथल पुथल मच गई, इसे सिर्फ अन्तयामी न ही जाना और आज भी सिर्फ उन्ही ने देखा कि उस शात स्थिर शरीर के अग अग म कितनी बडी आधी बह गई। उस दिन उसन महिम के आघात को जिस प्रकार चुपचाप सह लिया था आज भी उसी प्रकार अपन उन्मत्त आवेग म वह चुपचाप जूझता रहा, उसका कोई भी असर चेहरे पर नही प्रकट होने दिया।

कहा नही जा सकता, एसे और कितना समय बीत जाता लेकिन कहारो के पुकारने से रघुवीर बाहर चला गया—उसी आहट स सुरेश ने आँखें खोली, पूछा—तुम्हे मेरी चिट्ठी मिली ?

और उन्हें खोलने के लिए इसी आदमी की सदा जरूरत पड़ी है। इसीलिए आज भी उसी को बुलाना पड़ा। दुनिया में इतना धीरज तो किसी में नहीं।

अचला के अन्दर उथल-पुथल मच गई मगर वह नजर झुकाए स्थिर बैठी सुनती रही। सुरेश ने कहा—मेरी चिट्ठी में लगभग सब कुछ लिखा है, पढ़ोगी तो पता चलेगा। उस दिन अपनी सारी ज्यादाद की वसीयत तुम्हें दे चुका हूँ। चाहो तो उसी की बहुत सी चीजें ले सकती हो। पर मैं समझता हूँ लेने की जरूरत नहीं। मेरे जीते जी भी जैसे उसका ज्यादा हिस्सा गरीबों को ही मिलता, मेरे मरने के बाद भी जिसमें उन्हीं लोगों को मिले। मेरी किसी भी चीज से तुम अब कोई संपर्क न रखना अचला—तुम मुक्त होओ, निर्विघ्न होओ—मेरे सब संस्पर्श से अपने को बिल्कुल अलग कर लो। कोशिश करने पर दुनिया में बहुत दुःख झेले जा सकते हैं—मेरा दिया दुःख भी जिसमें तुम एक दिन सहज ही सह सको।

उसके रंग-ढंग और बात चीत के तौर तरीके से अचला को लगा तो डर रहा था। इसी अंतिम बात से तो वह सचमुच ही घबरा गई—आखिर तुम यह सब क्या कह रहे हो? उठकर बैठी—ऐसा लगे कि हम तुम यहां से चले।

उसकी आशंका और घबराहट का भाप कर भी सुरेश ने कोई जवाब नहीं दिया। जो बुढ़िया खम्भे के पास बैठी थी उसने पूछा—बाबूजी अब अंदर चिराग कि रोशनी बाहर ला दी जाय—सुरेश ने इसका कोई जवाब नहीं दिया, ऐसा लगा अचानक उसे तन्द्रा आ गई है। अकुलाई अचला अपनी पिछली बात दुहरा रही थी कि सुरेश ने आंख खोलकर बड़े ही सहज भाव से कहा—तुम से अभी असली बात ही नहीं बता पाया। अचला, मैं अंतिम घड़ियां गिन रहा हूँ, मेरे जीने की अब कोई उम्मीद नहीं।

जवाब में महज एक अस्फुट आवाज अचला के गले से निकल पड़ी। उसके बाद वह काठ की मारी सी बैठी रह गई।

सुरेश कहने लगा—मैंने पहले ही वसीयत जरूर कर रखी है, पर कोई अगर यह कहे कि मैं जान सुनकर रहा हूँ तो वह गलत होगा—उससे मुझे मरने से भी ज्यादा कष्ट होगा। मैंने सावधानी बरतने में कोई कोर कसर न रखी, मगर कोई नतीजा न निकला। तुम से कभी कोई पूछे तो कहना—दुनिया में और और लोग जैसे मरते हैं मेरी भी मौत वैसी ही हुई है। कहना—

मौत को चूंकि टाल नही सके इसीलिए मर गए वरना मरने की उनकी इच्छा नहीं थी। जिसमे कोई मुझ पर यह कलंक न लगाए कि मरने मे मेरा कोई हाथ था, मरने मे कोई खास बात थी।

अचला कुछ न बोली। बोलने की उसकी शक्ति ही जाती रही थी, यह बात उस धुंधलके मे उसका चेहरा देखकर सुरेश समझ नही सका। उसने अपने को थोडी देर मे सम्हाला और फिर कहने लगा—बिना आए मुझसे रहा नही गया, इसीलिए तुमसे बचकर उस रोज मैं सुबह ही चल दिया था। आकर देखा सारी बस्ती खाली हो गई है। इस घर मे एक नौकर मर गया है और उसका सत्कार किए बिना ही सब भागने को तयार है। मैं उन लोगो को तो नही रोक सका, पर लाश का किनारा किया जा सका। लौटकर सोचा—मैं भी वापस चला जाऊँ। लेकिन दोपहर को महमूदपुर मे एक लडका रोता पीटता आया। बोला—मेरी मा बहुत बीमार है। उसी के आपरेशन मे यह बदनसीबी साथ ले उठा। आपरेशन तो बहुत किया सावधानी भी कम नही रक्खी मगर बद-किस्मती कहो—इक्के के पहिए से पाव का अगूठा छिला गया था—मगर उस पर नजर तब पडी जब मैं हाथ का लहू धोने जा रहा था। झटपट लौटा। जो कुछ करना चाहिए था सब किया। घर जाने की गुंजाइश होती तो लौट गया होता, मगर कोई उपाय करते न बना। कल रात बुखार सा लगा—समझ गया कि यह बुखार क्या है। सो बडी-बडी मुसीबत और कोशिश से तुम लोगो को चिट्ठियां भेजी।

अचला आंसू से भराई हुई आवाज मे बोली—लेकिन अब तो उपाय है अभी, अपनी डोली पर मैं तुमको तुरत ले जाऊँगी—अब एक मिनट भी यहाँ नही रहने दे सकती।

और तुम ?

मैं पैदल चलूंगी। मेरी फिक्र तुम छोड दो।

पैदल जाओगी ? इतनी दूर ?

पैरो पडती हूँ तुम्हारे, आनाकानी न करो—अचला रो पडी।

सुरेश पलभर चुप रहा। फिर एक लम्बा निश्वास छोडते हुए बोला—खैर, चलो। लेकिन मै समझता हूँ जरूरत न थी इसकी।

अचला बाहर निकली। देखा रघुबीर पेड के नीचे चबेना चबा रहा है। बोली—रघुबीर, बाबूजी बहुत बीमार पड गए हैं। तुम डोली वालो से कहो—

वे जितना मागेंगे, मैं उससे ज्यादा रुपया उन्हें दूगी। मगर अब देर नहीं होनी चाहिए।

मालकिन की अकुलाई आवाज मे रघुवीर चौंका। बोला—लेकिन ये लोग दो का भार तो नहीं ढो पायेंगे माँ जी!

नहीं नहीं दो नहीं। एक। मैं पैदल चलूगी। मगर अब एक मिनट भी मत रुको। कहा है वे सब? देखो जरा।

रघुवीर ने कहा—किराए के रुपए लेकर वे कुछ खाने के लिए दूकान की तरफ गए है। बुला लाता हूँ मा जी तुरत—और अपने चवन्न को धोती की कोर मे बाधते हुए वह दौड पडा।

अचला सुरेश के सिरहाने जा बैठी। हाथ से ताप देखकर आशका मे डर गई वह। मुनिया की मा मिट्टी के तेल की ढिबरी रख गई थी धुएँ मे मागी जगह औंधा रही थी। वह ढिबरी को हटाने गई कि दवा की एक शीशी पर नजर पडी। अचला ने पूछा—यह तुम्हारी दवा है?

सुरेश ने कहा—हा, मेरी ही है। कल खुद से तयारी की थी। पी नहीं पाया ले आओ—

अचला को चोट सी लगी। लेकिन दवा न पीने की वजह पर झगडने को जी न चाहा उसे। दवा पिलाकर वह उसी तरह चुपचाप सिरहाने मे बैठ गई। बडी देर से सुरेश मौन था, मगर चुपचाप वह कितनी बडी पीडा सह रहा है, यह सोचकर अचला का कलेजा दरकने लगा।

देर हो रही थी, रघवीर का पता नहीं। बीच बीच मे वह पाव दबाए बाहर जाकर अँधेरे मे जहा तक नजर जाती, देख लेती। कहा किसी का पता नहीं। लेकिन कहीं सुरेश को उसकी इस उद्विग्नता का पता चल जाय इस डर से भी वह घबरा गई।

रात बढने लगी। खम्भे के पास मुनिया की मा की नाक बजने लगी। उस समय भूखे प्यासे, थके मांदे रघुवीर ने भग्नदूत की नाई आकर कहा—कहार लोग तो डोली लेकर कब के चल दिए। कहीं पता न चला।

सब भूलकर अचला विकृत स्वर मे बार-बार सवाल करने लगी—कब गए वे? किधर गए? क्यो गए? हम अपना सवस्व दें तो भी क्या कोई डोली मिल नहीं सकेगी?

देने लगा। कितना लहू बह रहा है वहा, कितने अजाने लोग मार काट मचा रहे हैं—जानें कितनी हजार चिताएँ जल बुझ रही हैं—उसके धुएँ से धरती आकाश मानो ढँक गया है।

कुछ देर के लिए सुरेश को जैसे तंद्रा आ गई थी वह निश्चेष्ट पड़ा था। लेकिन अचला को इसका भी होश न था कि इस तरह कितना समय कटा, कैसे रात सवेरे की ओर बढ़ने लगी। उसकी आखों से आसू जारी था शिथिल दाना हाथ सुरेश के तकिए पर था वह हृदय में कह रही थी—हे ईश्वर! मैंने बहुत-बहुत दुःख बहुत-बहुत पीड़ा उठाई मेरी सारी पीड़ा सारे दुःखों के बदले आज तुम इसे क्षमा करके अपनी गोद में उठालो मेरे मा नहीं, बाप नहीं, भाई नहीं—इतना बड़ा कलंक माथे उठाकर मेरे लिए खड़ी होने की कोई जगह नहीं। तुम तो जानते हो मैंने कितना झेला है—मुझे अब जीने मत दो प्रभो! मुझे भी अपने पास खींच लो।

इन बातों को उसने कितनी बार, कितने प्रकार से दुहराया—इसका ठिकाना नहीं। उसके आसू की भी कोई हद न रही।

मा—जी?

अभी अभी सवेरा हुआ। अचला ने चौंककर देखा—रघुवीर मानो किसी के अन्दर जाने के इन्तजार में दरवाजा खोले खड़ा है।

क्या है रघुवीर?—यह कहते ही जिससे अचला की नजर मिल गई वह महिम था। वह एक बार काप गई और नजर झुका ली। लमहे के लिए दरवाजे पर महिम का कदम ठिठक गया। उसे यह उम्मीद न थी कि यहा इस तरह फिर से उससे भेंट हो जायगी। लेकिन वह धीरे धीरे करीब आकर खड़ा हुआ। धीमे से पूछा—सुरेश की तबियत अब कैसी है?

अचला ने सिर नहीं उठाया, बोली नहीं, सिर्फ सिर हिलाकर मानो उसने यह जताना चाहा कि वह कुछ भी नहीं जानती।

मिनट भर स्थिर रहकर सुरेश के कपाल पर महिम ने जैसे ही हाथ रखा, उसने आखें खोलीं। उस बुझी सी लाल आखों को देखकर सुरेश के मुँह से बात न फूटी। जरा देर में बोला—कैसे हो सुरेश?

ठीक नहीं—मैं चला। मैं जानता था, तुम आओगे—मेरे सामने बैठो।

महिम उसके पैताने बैठा। बोला—डिहरी में डाक्टर हैं, किसी तरह मेरे इक्के से—

सुरेश ने सिर हिलाकर कहा—उँहूँ—खींचा तानी मत करो, मजूरी नही पासाएँगी। मुये Quietly जाने दो।

लेकिन अभी तो—

हां अभी होश है। मगर कभी कभी भूल हो रही है। मेरा जीवन गरीबो के काम नही आ सका, लेकिन मेरी जायदाद जिसमे गरीबो के काम आए महिम! इसीलिए तुम्हे तकलीफ देकर इतनी दूर बुलाया है, वरना मरते वक्त माफी मागकर कविता करने की अपनी ख्वाहिश नही।

महिम चुप रहा। सुरेश ने कहा—वह सब मैं यकीन भी नही करता, चाहता भी नही। एक दिन क्षमा का लाभ मुये नही है। खैर एक वसीयत है? अचला को मैंने कुछ नही दिया है—उसका और अपमान करने के लिए मेरा हाथ नही उठा। लेकिन जरूरी समझो तो कुछ देना।

महिम व्याकुल हो उठा—इसमे मुझे क्या लपेट रहे हो सुरेश?

सुरेश ने कहा—महज इसलिए कि तुम्हे लपटा नहा जा सकता। जिसे लाभ नही, जिसे न्याय अन्याय का विचार—एकाएक नजर उठाकर बोला—तुम तमाम रात बैठी रही अचला—जाओ, मुँह हाथ धो लो। मुनियाँ की मा सब बना देगी—

अचला चली गई तो सुरेश ने कहा—मुझे सिर्फ एक बात का बडा दुःख रहा। अचला तुम्हे कितना प्यार करती है इसे मैंने भी नही समझा, तुमने भी नही—खुद उसने भी नही समझा। तुम्हारी गरीबी से वह ऐसा गडबड घोटाला हो गया कि—खैर! इतनी सुन्दर चीज को मैंने मिट्टी कर दिया—न खुद पा सका, न दूसरे को पाने दिया! बूढी का देखना—उन्हे बडा शोक होगा।

मुनिया की माँ दवा की शीशी लेकर आई कि वह फिर से बोल उठा—न-न दवा अब नही। पानी दो। मैंने एक नाटक लिखना शुरू किया था महिम—दराज मे है—बने तो पढना।

महिम उसकी तरफ ताक नही पा रहा था—सिर नीचा किए सुन रहा था। सिर उठाकर उसने कुछ कहना चाहा कि बाधा देकर सुरेश बोल उठा—बस भई जरा सोने दो। खाने पीने का सब है, मगर वह तो तुम लोगो से अच्छा नहीं लगेगा। कहकर उसने आँखे बन्द कर ली।

महिम जरा देर चुप रहा । उसके बाद बोला—मेरा एक अंतिम अनुरोध मानोगे सुरेश ?

क्या ?

तुमने कभी भगवान् को नही सोचा, उनकी बात—

वह मुझे ठीक नही लगता—कहकर मुह बिगाड़कर सुरेश ने करवट बदली। महिम ने जी जान से एक उमड़ते हुए निश्वास को रोका और चुप हो रहा ।

## ४३

रामबाबू घर पर नही थे । दूसरे दिन बक्सर से आने पर उन्हे महिम की चिट्ठी मिली और उन्होने पल भर की भी देर न की—तमाम रास्ते घोड़े को भगाते हुए अधमरा सा बनाकर जब मझोली पहुँचे, तो बेला डूब रही थी । दूकानदार ने उनको रोगी समझा और खुद रास्ता दिखाते हुए नन्दपाडे के नीम के नीचे ले गया और इक्के से उतरते वक्त वाअदब घोड़े की लगाम थामे खड़ा हुआ । इसी से रामबाबू को पता चला कि अचला भी आई है। सामने का दरवाजा खुला ही था । अन्दर कदम रखते ही कुछ भी समझना बाकी न रहा। दो घण्टे हुए, सुरेश चल बसा । खाट पर उसकी लाश ढँकी पडी थी और कुछ ही दूर पर उसके पैरो के पास अचला चुप बैठी थी ।

बूढे से यह दृश्य देखा न गया । वे चीखकर रो पड़े । अचला ने एकबार नजर उठाकर देख भर लिया और फिर उसी तरह सिर झुकाकर बैठ गई । यह चीख मानो महज उसके कानो तक गई, मर्म तक न पहुची ।

महिम अन्दर लकड़ी की तलाश कर रहा था, रोना सुनकर बाहर निकला। बोला—थोड़ी देर हुई सुरेश छोड़ गया । आप आ गए अच्छा ही हुआ वरना अकेले मुझे बडी असुविधा होती ।

रामबाबू चुपचाप आसू पोछने लगे । वे सोचकर कुछ ठीक ही नही कर पा रहे थे कि क्या करें, क्या कहे कैसे उस स्त्री के सामने इस निष्ठुर काम मे मदद पहुँचाएँ ।

महिम ने कहा—नदी दूर नही है । थोड़ी-बहुत लकडी रघुवीर ले गया

है, थोड़ी और मिल गई है। इन्हें भी भेजकर हम तीन जन लाश को ले चल सकेंगे। गांव में आदमी नहीं हैं, होगा भी तो कोई निकलेगा नहीं।

रामबाबू यह जानते थे। अचला से बचाकर उन्होंने चुपके से पूछा—हम दो जन—और ?

महिम ने कहा— रघुवीर भी मदद दे सकता है।

सुनकर बूढ़े ने व्यस्त होकर कहा—न न यह हर्गिज न होने दूंगा मैं। ब्राह्मण की लाश, और किसी को न छूने दूंगा। नदी जब पास ही है, तो जैसे भी हो हम ही दोनों को ले चलना पड़ेगा।

खैर वही होगा।—कहकर महिम फिर लकड़ी की जुगत में जुट गया। रामबाबू बरामदे के एक ओर खूंटी से टिककर चुप बैठे रहे।

उम्र वाले आदमी, अपने लम्बे जीवन में मौत उन्होंने बहुत देखी, बहुत गहरे शोक के बावजूद उन्हें धीरे धीरे आगे बढ़ना पड़ा है। दुःसह दुःखों के व करुण सुर एक एक करके उनकी हृदय वीणा के तारों में बंध गए हैं आज की यह घटना उन तारों पर चोट करके हरदम बांसुरी बजने लगी। कभी 'बड़े चाचा' सम्बोधन करती हुई यही सुरमा उनकी गोदी में पछाड़ खा गिरी थी—इसको वे भूले नहीं थे। आज भी उनका पितृ स्नेह उसी लोभ से भीतर भीतर घुमड़ने लगा। उसे क्या दिलासा दें, मालूम नहीं उसे भरोसा देने लायक संसार में है क्या, यह भी नहीं जानते, फिर भी उनका शोकाकुल हृदय मानो यही कहना चाहता रहा कि एक बार उसे अपने कलेजे से लगाकर कहें—डर कैसा बिटिया, मैं तो जिन्दा ही हूं !

लेकिन यह सुर बजा कहां ? उनकी प्यास बुझाने के लिए वह आगे बढ़ा कहां ! सुरमा तो वैसी ही चुप बनी रही, दूर आत्मीय के व्यवधान से अपने को अलग किए रही।

दुःख में, विपदा में इनकी अनेक अनबूझ वेदना, मूक मानसिक पीड़ा के पास से उन्हें चलना पड़ा है, छिपे रहस्य का इशारा कभी-कभी उन्हें कुचोट दे गया है मगर उन्होंने कभी भी अपने को दुखने नहीं दिया—स्नेह के आवरण में सभी आशंकाओं को ढांककर बाहर के आकाश को मेघ से परे निर्मल ही रखा है उन्होंने। लेकिन अभी-अभी विधवा बनी अचला के इस अनचीन्हे कठोर धीरज ने इतने दिनों से उनके ओट में छिपे स्नेह को उघार कर कलुष के धुएं से भरना शुरू कर दिया।

चक्का अस्त हो चुका। उधर का काम लगभग चुकाकर महिम ने कहा—रामबाबू, अब तो इसे ले ही चलना चाहिए। अचला की ओर मुडकर बोला—रोशनी जला दी है। तुम मुनिया की माँ के पास बैठी रहो। हम लौटने मे ज्यादा देर न होगी।

अचला कुछ न बोली—रामबाबू अपने को जब्त करके उठ खडे हुए थे। उन्होंने सिर हिलाया। अचला के सूके मुखडे की ओर देखकर रुँधा गला साफ करके भर्राई हुई आवाज म बोले—कहते हुए कलेजा टूक-टूक हुआ जाता है। बिटिया, लेकिन स्त्री का अन्तिम कत्तव्य तो तुम्हे करना ही पडेगा। मुखाग्नि तो—कहते कहते वे रो पडे।

अचला का फीका चेहरा, उससे भी ज्यादा सूखी उसकी आखें बूढे पर जरा देर गडी रही, उसके बाद वह धीमे स्वर से बोली—मुखाग्नि की जरूरत हो, तो मैं कर सकती हूँ। हिन्दू धम मे वास्तव मे इसका कोई फल होता हो, तो उसे मैं बेकार नही करना चाहती। मैं उनकी स्त्री नही हूँ।

जसे गाज गिरी हो, रामबाबू ठक होकर देखते हुए धीरे धीरे बोल—तुम सुरेश की स्त्री नही हो?

अचला ने वैसे ही अविचलित स्वर मे कहा—नही वे मेरे पति नही है।

एक पल मे रामबाबू को सारी घटनाएँ याद आ गइ। जब से ये उनके घर आए थे, तब से उस दिन की मूर्च्छा तक सारी घटनाएँ बिजली की नाइ उनके मन मे कौंध गइ और सन्देह की कोई गुँजाइश ही नही रही कही। आखिर कौन है यह, किसकी लडकी, कौन जात—शायद हो कि वश्या हो। इस मैंने बटी कहा, इसका छुआ खाया, इसका पकाया अन्न अपने देवता तक को भोग दिया। सब कुछ याद करके घृणा से उसका सर्वांग टनटना उठा—और जिस स्नेह जिस श्रद्धा, जिस माधुय और करुणा न उन्ह इतने दिनो तक सींच कर रक्खा था, रेगिस्तान के पानी की बूद जसा वह गायब हो गया, पता भी न चला।

केवल वही नही, महिम भी हक्का-बक्का सा खडा था। उसने चकित होकर कहा—जब ऐसा हाना ही नही है, तो चलिए, हम लोग ले चलें।

चलिए—कहकर रामबाबू जसे सपने से चल रहे हो, आगे बढे। उनकी अपनी दुघटना के मुकाबले सारी दुघटनाएँ जैसे छाया सी फीकी पड गई थी।

उनके दोनों कानों में केवल यही गूजने लगा, जात गई, धर्म गया मनुष्य जीवन ही जैसे बेकार, बेकाम हो गया।

सुरेश का दाह-कार्य जैसे-तैसे कर देने में ज्यादा समय न लगा। शुरू से आखिर तक रामबाबू ने एक भी शब्द न कहा और लौटते ही इक्का जोतने का हुक्म दिया।

महिम ने पूछा—आप क्या जा रहे हैं?

रामबाबू ने कहा—हा! मुझे सुबह की गाडी से काशी जाना होगा। अभी न निकल पडू, तो समय पर पहुँच नही सकूगा।

उसके मन की बात महिम से छिपी न रही और वह ताड गया कि ये प्रायश्चित्त के लिए ही काशी जा रहे हैं। सो बडे सकोच से कहा—मैं परदेशी हूँ। इधर का कुछ भी नही जानता। कृपा करके अगर इनके चलने का कोई इतजाम—बात पूरी न हो पाई। अचला का साथ लेने के प्रस्ताव से बूढे आग हो उठे। बोले—कृपा? आप क्या पागल हो गए महिम बाबू?

महिम ने उनका प्रतिवाद नही किया। डरते हुए विनती करके कहा—दो दिन से शायद इन्हे भोजन भी नही नसीब हुआ। इस मौत की नगरी मे इन्हे बसहारा छोड जाना—

उसे यह बात भी पूरी करने का मौका न मिला। आचारी ब्राह्मण के जन्म जात सस्कार को ठेस लगी थी। वे प्रतिहिंसा से बेरहम बन गए थे, इस लिए तीखे व्यग से बोल उठे—ओ, मैं तो भूल ही गया था कि आप भी ब्राह्म हैं—खैर, आप जितने भी बडे ब्रह्मज्ञानी क्यो न हो, मेरे सर्वनाश के परिणाम को समझ पाते तो इस कुलटा के लिए दया-माया की बात जबान पर भी नही लाते। यह कहकर वे गाडी पर बैठ गये और बोले—खैर, ब्रह्मज्ञान से मतलब नहीं, यह जान बचानी हो तो सवार हो जाइए, जगह मिलेगी।

महिम ने चुपचाप उन्हे नमस्कार किया। कितना बडा सर्वनाश होगा। उसने इस पर भी विवाद नही किया और जान बचाने के आमत्रण को भी स्वीकार नही किया। उनके चले जाने के बाद उसकी छाती टूक टूक होकर एक निश्वास भर निकला।

कितना बडा सर्वनाश! बेशक!

अन्दर बैठी गाडी की आवाज सुनकर अचला ने भी इसे महसूस किया। रामबाबू अन्दर क्यो नही आए, क्यो बगैर कुछ बोले चले गए, यह स्पष्ट था।

सुरेश की मौत ने बेहद फिक्र खडी करके जो एक ओट तैयार की थी, वह न रही। महिम उसके सामने बिल्कुल करीब आकर खडा था, लेकिन उसका मन हर्गिज कुछ डोलने को तैयार न हुआ। उसे अपने लिए शर्म महसूस करने म भी तकलीफ सी होने लगी।

महिम ने ... दिवरी को सामने रखकर अचला चुप बैठी है।
क्या करोगी ?

पूछा — अब
मैं ?
कहकर उसकी ओर ताकती हुई अचला कितना कुछ जाने सोचने
मे कहा—मैं तो कुछ कुछ सोच नही पाती। तुम तो हुक्म दोगे,
लगी।
गी।

वही
इस अप्रत्याशित वाक्य और व्यवहार से महिम विस्मित हुआ—शक्ति। अचला ने इस तरह से कभी ताका नही था। यह निगाह जितनी सीधी उतनी ही स्वच्छ। इसके उसके कलेजे के अन्दर दूर तक देखा गया। वहा नही था, चिंता नही थी, कामना नही थी—जहा तक देखा जा सकता था, अप्य का आसमान धू धू जल रहा था। उसके न तो रग था, न मूर्ति, न न प्रकृति—बिल्कुल निर्विकार, बिल्कुल सूना।

सताई गई, अपमानित नारी के हृदय के इस चरम वैराग्य को वह पहचान नही सका। एक के अभाव ने दूसरे के हृदय को ऐसा सूना कर दिया है, यह सोचकर उसका मन कडवाहट से भर गया। लेकिन अपने दुःखा से दुनिया के का बोझा उसने कभी बढाना नही चाहा इसीलिए अपने को अपने म ही मिटे रहने की उस आदत रही है। गले तक उमडी हुई कडवाहट कहीं उसकी बोली मे न जाहिर हो पडे इस डर से दूसरी ओर नजर टिकाए वह कुछ देर चुप रहा। उसके बाद सहज स्वर मे बोला—मैं तुम्हे हुक्म क्यो करूँ अचला और तुम्ही उसे क्या मानोगी ?

लेकिन तुम्हारे सिवा और तो कोई नही है—कोई मुझसे बात भी नही करेगा! अचला उसी तरह महिम को ताकती रही।

महिम ने कहा—मुझसे यही उम्मीद करती हो तुम ?

प्रश्न शायद अचला के कानो पहुँचा नही। वह अपनी ही बात का छोर बढाती कहने लगी—तुम्हे खाने के बाद से मैं कितना तो कहती रही भगवान् से, हे भगवान्! तुम मुझे उठा लो! उन्होने भी न सुना—तुम भी नहीं सुन रहे हो! क्या करूँ मैं ?

अचला का धीरे धीरे प्यार करने का इतिहास धुँधला हो चुका था, लेकिन इसी के लिए उसके जीवन में जो गुजर गया वह जैसा प्रलय-सा असीम है, वैसा ही उपमाविहीन। फिर सहने की निःशेष शक्ति भी विधाता ने उसे नहीं दी। उसका बाहर-भीतर से जल उठा—तो वह वहीं खड़ा खड़ा राख हो गया—उसकी एक भी चिनगी छिटक नहीं पाई। लेकिन रोज उसकी शक्ति की पुकार केवल सहने के लिए नहीं हुई है—सामंजस्य के लिए है। आज जमा खर्च की तफसील का लेखा लगाए बिना नहीं चलने का। नई एकान्त जगह आज उसे जरूर चाहिए।

डेरे पहुँचकर जल्दी जल्दी उसने सामान सहेजा। पाँच बजे की गाड़ी में घण्टे भर की देर थी। रामबाबू को लौटने में देर होगी, क्योंकि वे वास्तव में प्रायश्चित के लिए ही काशी गए हैं और कह गए हैं प्रायश्चित किए बिना पानी तक न लेंगे। लिहाजा उनसे मिलकर जाना मुमकिन नहीं। सो रुखसत होने वाले फर्ज को एक खत से अदा करने के ख्याल से वह कागज कलम लेकर बैठा। दो एक पंक्तियाँ लिखने के बाद उनके गुस्से से निकलने वाले व्यंग बाणों की याद आने लगी। और उसी के साथ साथ एक जने के आँसू रुँधे कंठ की कातर विनती भी उसके कानों तक पहुँची। तंद्रा की हालत में पीड़ा जैसी उसकी चेतना को पूर्णतया जगाये रखकर भी वह जगाए नहीं रखता—सोने नहीं दिया। रामबाबू की वे बातें मानो धक्का देकर उसे चौंका गईं।

इस बूढ़े आदमी से उसका परिचय ज्यादा दिनों तक नहीं, लेकिन दया, इनके दान, इनकी भलमनसाहत, निश्छल भगवद्भक्ति के किस्से बहुत सुन रक्खे थे—इन बातों ने अचानक मानो उसकी आँखों के आगे उनकी एक नई दिशा दिखा दी।

इन भलेमानस ने अचला को बेटी कहकर संबोधित किया था। इनके सिवाय दूसरे गाँव की किसी लड़की के हाथ का अन्न उन्होंने नहीं खाया—बातों के सिलसिले में उन्होंने महिम को यह भी बताया था, लिहाजा महिम के लिए यह अनुमान करना कठिन नहीं था कि रामबाबू का सर्वनाश किधर से आया। लेकिन वह मन ही मन यही कहने लगा कि अचला के अपराध का विचार न होगा बाद में किया जायगा पर इस आचार-परायण ब्राह्मण का यह धर्म कौन सा है जो एक मामूली सी लड़की के धोखे से वह तुरत धूल में मिल गया! जो धर्म अत्याचारी की ठोकर से आप अपने को और पराए को नहीं बचा सकता,

बल्कि मत्यु स उसी का बचाने के लिए प्रतिपल अपनी शक्ति को तयार रखना पड़ता है—वह धम आखिर क्या धम है और मनुष्य जीवन मे उसकी उपयोगिता क्या है—जिस धम न स्नेह की मर्यादा नही रखने दी, एक असहाय नारी का मौत के मुँह मे छोडकर चले आने मे जरा भी हिचक नही होन दी, चोट खाकर जिस धम ने इतन बडे स्नेहशील बूढे को भी प्रतिहिंसा न ऐसा निदयी बना दिया वह कैसा धम है ? और जिसने उस धम का कबूल किया, वह कौन से सत्य को लिए चल रहा है ? जो धम है, वह ता चमडे की नाई आघात सहन के लिए ही है। वही तो उसकी अन्तिम परीक्षा है ?

उसे सहसा लगा, ता क्या मेरा इस तरह भाग आना भी—मगर चिन्ता को भी उसन उसी तरह जबदस्ती हटाकर कलम को उठा लि मुख्तसर म चिट्ठी का खत्म करके स्टेशन की तरफ चल पडा।

गाडी के आन पर जिस डब्बे के दरवाजे को खोलक जाना चाहा, उसी म से एक बूढे आदमी एक विधवा उतर।

अचला का धीर प्यार करने का इतिहास धुँधला हो चुका था, लेकिन इसी के लिए उसके जीवन म जो गुजर गया, वह जसा प्रलय सा असीम है, वसा ही उपमाविहीन । फिर सहन की नि शेष शक्ति भी विधाता न उस नही दी । उसका बाहर-भीतर से जल उठा—तो वह वही खडा खडा राख हो गया—उसकी एक भी चिनगी छिटक नही पाई । लेकिन उसकी शक्ति की पुकार केवल सहने के लिए नहीं हुई है—सामजस्य के लिए है । आज जमा खच की तफ्सील का लेखा लगाए बिना नही चलने का । एकान्त जगह आज उसे जरूर चाहिए ।

डेरे पहुँचकर जल्दी जल्दी उसने सामान सहजा । पाच बजे की गाडी मे घण्टे भर की देर थी । रामबाबू का लौटने म देर होगी, क्याकि वे वास्तव म प्रायश्चित के लिए ही काशी गए है और कह गए हैं, प्रायश्चित किए बिना पानी तक न लेग । लिहाजा उनसे मिलकर जाना मुमकिन नही । सा रुखसत हान वाले फज को एक खत स अदा करन के ख्याल से वह कागज कलम लेकर बैठा । दो एक पक्तियाँ लिखन के बाद उनके गुस्से स निकलने वाले व्यग वाणा की याद आन लगी । और उसी के साथ साथ एक जने क आसू रुँधे कठ की कातर विनती भी उसके काना तक पहुँची । तद्रा की हालत म पीडा जैसी उसकी चेतना को पूणतया जगाय रखकर भी वह जगाए नही रक्खा—सोने नही दिया । रामबाबू की व बात मानो धक्का देकर उसे चौंका गइ ।

इस बूढे आदमी स उसका परिचय ज्यादा दिनो तक नही लेकिन दया, इनके दान, इनकी भलमनसाहत, निश्छल भगवद्भक्ति के किस्स बहुत सुन रक्खे थे—इन बाता न अचानक मानो उसकी आखा के आग उनकी एक नई दिशा दिखा दी ।

इन भलेमानस न अचला को बेटी कहकर सबोधित किया था । इनके सिवाय दूसर गोत्र की किसी लडकी के हाथ का अन्न उन्हान नही खाया—बाता के सिलसिले म उन्होंने महिम को यह भी बताया था, लिहाजा महिम क लिए यह अनुमान करना कठिन नही था कि रामबाबू का सवनाश किधर से आया । लेकिन वह मन ही मन यही कहन लगा कि अचला के अपराध का विचार न होगा बाद म किया जायगा पर इस आचार-परायण ब्राह्मण का यह धम कौन सा है जो एक मामूली सी लडकी के धोखे म वह तुरत धूल म मिल गया ! जो धम अत्याचारी की ठोकर म आप अपन को और पराए का नहीं बचा सकता,

बल्कि मत्यु स उसी का बचाने के लिए प्रतिपल अपनी शक्ति को तैयार रखना पडता है—वह धम आखिर क्या धम है और मनुष्य जीवन मे उसकी उपयागिता क्या है—जिस धम न स्नेह की मर्यादा नही रखने दी, एक असहाय नारी को मौत के मुँह मे छोडकर चले आने मे जरा भी हिचक नही होने दी, चोट खाकर जिस धम न इतने बडे स्नेहशील बूढे को भी प्रतिहिंसा ने ऐसा निर्दयी बना दिया, वह कैसा धम है? और जिसने उस धम को क़बूल किया, वह कौन स सत्य को लिए चल रहा है? जो धम है, वह ता चमडे की नाइ आघात सहने के लिए ही है! वही तो उसकी अन्तिम परीक्षा है?

उसे सहसा लगा, तो क्या मेरा इस तरह भाग आना भी—मगर चिन्ता को भी उसन उसी तरह जबदस्ती हटाकर कलम का उठा लि मुहूर्तभर मे चिट्ठी का खत्म करके स्टेशन की तरफ चल पडा।

गाडी के आन पर जिस डब्बे के दरवाजे का खालक जाना चाहा, उसी मे से एक बूढे आदमी एक विधवा